

भारतीय सभ्यता संस्कृति एवं धर्म

लेखक

हरबिलास मिश्र एम ए



विद्या भवन

पुस्तक प्रकाशक, जयपुर-३

प्रकाशक
विद्या भवन
चौडा रास्ता, जयपुर-३

(©) सर्वाधिकार प्रकाशक द्वारा सुरक्षित

प्रथम संस्करण

मूल्य चारह रुपये मात्र

प्रभात प्रेस, मेरठ द्वारा मुद्रित

विषय सूची

अध्याय	विषय	पृष्ठ संख्या
प्रथम	सामाजिक विकास का इतिहास	६
द्वितीय	सम्यता और सस्कृति का विकास	२१
तृतीय	पूर्व औद्योगिक आर्थिक संगठन का रूप	४३
चतुर्थ	आधुनिक राजनतिक सिद्धांत	४८
पाचवा	धर्म और दर्शन	५४
छठा	साहित्य के मूल सिद्धान्त	७१
सातवा	भारतीय सम्यता तथा आर्यों का आगमन	७६
आठवाँ	वैदिक-काल की सस्यायें	८२
नवा	बौद्ध तथा जैन धर्मों का सामाजिक महत्व	८८
दसवा	भारतीय सम्यता का स्वर्ण काल	९२
ग्यारहवा	बौद्धिक एवं सांस्कृतिक प्रगति	१००
बारहवा	विदेशों के साथ सांस्कृतिक सम्बन्ध	१०५
तेरहवा	तुर्कों की भारतीय विजय और इस्लाम का प्रभाव	११५
चौदहवा	मध्यकालीन प्रशासन और समाज	१२३
पंद्रहवा	भारत की समन्वित सस्कृति का विकास	१२८
सोलहवा	मुगल साम्राज्य का ह्रास और अंग्रेजों की विजय	१३५
सत्रहवा	भारत में ब्रिटिश शासन	१३९
अठारहवाँ	सामाजिक एवं धार्मिक आन्दोलन	१४७
उन्नीसवा	राष्ट्रीय आन्दोलन	१५८

SECTION B—SOCIAL SCIENCES

Attempt any THREE questions

All questions carry equal marks

1 Give a brief account of the principal factors in social growth laying special emphasis on the role of *technology* (भौद्योगिक मूविवा)

2 Describe in brief the Karl Marxian Socialism and the place it occupies in the modern political thought

3 Evaluate the contribution of Buddhism to Indian Culture

4 Enumerating the causes of political consciousness in India depict summarily the growth of the national movement from 1920 to 1947

5 Write a short account of the impact of Islam on Indian Culture

Or

Describe briefly the social and religious movements in India during the British regime

6 Write short notes on any *three* of the following —

- (i) River Valley Civilisations
- (ii) Pre Industrial Economy
- (iii) Confucius and Lord Buddha
- (iv) Periclean Age
- (v) Bhakti Movement

सामाजिक विकास का इतिहास

प्रस्तावना—यह समाज का विकास का अध्ययन है और समाज उस मानव से बनता है जो सम्य है। सम्यता सदैव विकासमय होती है और इसीलिए परिवर्तनशील। केवल मौलिक तत्व उसी प्रकार रहते हैं, किन्तु उसका बाह्य रूप सदैव निरन्तरता रहता है। इसी परिवर्तन के कारण उसके विकास क्रम का अध्ययन आवश्यक होता है और शक्तिशाली भी। प्रत्येक विकासशील वस्तु के भूतकाल का अध्ययन बहुधा शान्त-ददायक होता है, चाहे अच्छा हा चाहे बुरा। यदि अच्छा रहा है तो उसका स्मरण ही प्रेरणादायक और सुखकर होता है और यदि बुरा रहा है तो उससे एक बहुत बड़ी सफलता का अनुभव होता है कि कितने बुरे समय से निकल कर अब उत्तम समय का अनुभव कर रहे हैं। अतः मनुष्य की सम्यता का इतिहास एक बहुत ही उत्सुकतापूर्ण विषय है। वास्तव में मनुष्य उत्पन्न कैसे हुआ, पृथ्वी क्या है किस प्रकार इसका सृजन हुआ, मनुष्य सम्य किस प्रकार हुआ और किन-किन परिस्थितियों में होकर आज वर्तमान सीमा तक पहुँचा है, ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिनका स्पष्ट उत्तर पाने की इच्छा प्रत्येक सम्य मानव की होती है। इसी विषय का सक्षिप्त किन्तु स्पष्ट विवचन करना हमारा मुख्य ध्येय है।

समाज शब्द का प्रयोग यहाँ व्यापक अर्थ में किया जा रहा है। उदाहरणार्थ मानव समाज, अर्थात् समस्त मानव मात्र द्वारा संगठित संस्था जो इस समय विद्यमान है। यह समाज प्रारम्भ से विकसित ही होता रहा है। केवल भारतीय शास्त्रों में यह प्रकट होता है कि सत्सारा में समय-समय पर पूर्ण विकास के पदवात् प्रलय के द्वारा इसका विनाश भी होता है और फिर भगवान् नई सृष्टि की रचना करते हैं। परन्तु ये सब कहानियाँ सी लगती थीं। अब जब नई ख़ुदाई से अति प्राचीन वस्तुओं प्राप्त होती हैं, शरीर के ढाँचे मिलते हैं, शास्त्रों के भाग मिलते हैं तब अनुमान लगाए जाते हैं कि यह वस्तु दो हजार वर्ष पुरानी होगी, अमुक वस्तु ईसा की २०वीं सदी पूर्व की प्रतीत होती है। इस प्रकार यह स्वीकार करना पड़ता है कि समाज का विकास निरन्तर होता रहता है। यह समाज प्रगतिशील है। जब प्रगति स्वतः होती है तो समाज शिथिल होकर नष्ट हो जाता है। अतः विनाश के लिए प्रगति आवश्यक है तथा प्रगति के अभाव में समाज का निर्माण होकर लुप्त हो जाता है। इस सिद्धांत के अनुसार हमारा समाज गतिशील रहा है यह निश्चित है, परन्तु यह गति किस प्रकार हुई, किन-किन श्रेणियों में होकर यह गुजरा है, इसका ज्ञान प्राप्त करना आज के सम्य मानव के लिये अनिवार्य है। अपनी पूर्वजायों के ज्ञान से मनुष्य अपनी वर्तमान स्थिति को ठीक प्रकार से समझने में समर्थ होता है। अतः अब हम इसी विषय का अध्ययन करेंगे कि समाज का विकास किन

पद्धतियाँ द्वारा विम प्रम न दृष्टा है।

प्रारम्भिक अवस्थाएँ (Early Processes)—मनुष्य की कहानी मनुष्य के बहुत पहले से प्रारम्भ होती है जम कपट के पहले मूल है, मूल के पहले रूई है इस ही मनुष्य के पत्त पृथ्वी है, चीं और मूरज हैं। परन्तु हमारे दिशक का यह इतिहास ध्यान भी पूरा रूप से ठीक ठीक पान नहीं है। आज से कबल २०० वर्ष पूरे तक भी मानव का कबल पिछले लगभग तीन हजार वर्ष तक का पान था। इसमें पूरे कबल था यह कबल जलना और अनुमान का भी विषय था। परन्तु अब यह धारणा स्वीकार का जाती है कि पृथ्वी अनन्तमान से है।

व्यक्तित्व के मानवकार सन्दर्भम नभय मूय चद्र पृथ्वा प्राप्ति अत्यन्त उष्ण प्राय के जनन का रूप से एक से पुञ्ज य। यह पुञ्ज अपनी ही धरी पर नात्र गति से घूमता था। धारे धार ऊपर का भाग उष्ण ज्ञान जगा और तमा अवस्था प्राइ कि उसका छाट छाट टुकट अवग हा गण किन्तु गुणावपण गतिन के कारण के उमी के पुञ्ज के चारा धार परित्रमा करत रत। यह रूप के पुञ्ज आज भी के रूप मूय कबल है और उमक अनम दृष्टा भाग है हमारी पृथ्वा। हम पृथ्वा के अवग हाकर दमी का परित्रमा करत दृष्टा दूसरा भाग है चद्रमा। अय नभय भी दमी प्रवाह मूय से पृथक हा है और उमकी परित्रमा करत है। अनुमान है कि इन दृष्टा का गीतन हान से कराया कप जग गग।

इस पृथ्वी पर प्राणी का प्रथम आविर्भाव कब हुआ? इन प्रश्न का उत्तर आज भीमर्दी सती का मानव भी अनुमान के सकार का से सकता है। पृथ्वी धीरे धीरे उष्ण ज्ञान जगा और ठण्डी ज्ञान के बाद उम पर जीव जन्तु जम। जन के जीवन भी कहते हैं सनवत पहला आव जन से का पत्त दृष्टा। तमा जीव जो विचरण नहीं करता था परन्तु वहीं अपनी प्राणर प्राप्त कर तता था। फिर पाथ उन्मन्न हुए और उनक पचाठ अय जीव। इनक बाद समुद्र के तल से रेंगन कात दूसरे जीव उन्मन्न हुए। इस समय तक भी मूला जमीन पर आव अववा पीषा का अस्तित्व नहीं था।

प्रारम्भ से जन से रेंगन वान जावा के रीते फक्त अववा मस्तिष्क नर्ने हान थे इसतिव के असंगाय पान थे। फिर क्रमिक विकास द्वारा मत्स्य मग आया और मछली उन्मन्न हुई जिसमें रीते फक्त के मस्तिष्क मव थे। हमक पचाठ गत्व भूमि पर वनस्पति उत्पन्न ज्ञान जगी परन्तु जीव एस हुए जो जमीन पर भी उने किन्तु जन से भी रहे जैसे केंचुण कण्टुण आदि। फिर छाट छाट पांख वाल जन चर हुए जिनके पर मजबूत पात थे और उमके पचाठ यन चर अवतीण हुए। पत्त चन्द्रर तव अनुमान फिर वनमानुष और अत से मनुष्य। इन जम दवर प्रवृत्ति घय हो गई। मनुष्य धरती का एक लान था जा बुद्धि वन से जल-यन और व्याम का स्वामी बना।

मानव विकास की विभिन्न अवस्थाएँ—अय जीवा के विरास प्रम का भौति मानव के विरास की भी कद अवस्थाएँ रही हैं यह स्वाकार किया जाता है।

जैनातिको न चट्टानों की आयु व अनुसार यह निष्कर्ष निकाला है कि पृथ्वी पर जीव की उत्पत्ति निम्न अवस्थाओं में होकर हुई है —

(१) पूर्व लुप्त जीवकाल (Azoiic Age)—इस युग में पृथ्वी पर किसी प्रकार के जीव जंतु अथवा वनस्पति नहीं थी। धीरे धीरे जल की अधिकता के कारण जल में ही जीव उत्पन्न होने लगे, किन्तु उनमें गतिशीलता का अभाव था।

(२) प्रारम्भिक जीवकाल (Palaeozoic or Primary Age)—इस युग में छोटे छोटे एक काप वाले और अगहनीन प्राणी उत्पन्न हुए जिन्हें 'जली फिश' आदि नाम दिए गए तथा थल-चर प्राणियों की उत्पत्ति हुई। पानी के तट पर वनस्पति उत्पन्न होने लगी और जंतु जगत की सृष्टि हुई। इसी युग में जल-थल चर (amphibious) तथा पेट के बल रेंगने वाले प्राणी (reptiles) हुए।

(३) उत्तर जीवकाल (Mesozoic or Secondary Age)—इस युग में पट के बल रेंगने वाले बड़े आकार के प्राणियों की सृष्टि हुई। इनमें से कुछ तो ८८ फीट की लम्बाई तक बढ़े होते थे। तत्पश्चात् पक्षी तथा स्तनधारी जीव उत्पन्न हुए परन्तु इनका प्रारम्भिक रूप ही था।

(४) नवीन जीवकाल (Cenozoic or Tertiary)—इस युग में नवीन प्रकार के विकसित प्राणी उत्पन्न हुए जो स्तनधारी तथा स्तनपेयों (स्तन से दुग्धपान करने वाले) थे। यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण चमत्कार था। इससे पूर्व के लगभग सभी प्राणी अट्टक थे किन्तु ये पिंडज हुए। अर्थात् अपने अण्डों का शरीर के भीतर ही धारण करते थे और शिशु का पूर्ण विकास हो जाने पर उस प्रसव करते थे तथा स्तन से दूध पिलाकर उसका पोषण करते थे। बन्दू, पशु जैसे भेड़, घोड़ा आदि तथा अर्द्ध मानव का विकास इसी युग में हुआ। अविज्ञान विज्ञान का मत है कि मानव इस ही वनमानुष की सतान है जैसे गुरिल्ला गिम्पेजी और डरेव-डटक।

(५) पूर्व पाषाण युग (The Pleistocene period The Palaeolithic Age)—इस युग में पहला अर्द्ध मानव था बाद में मानव का विकास हुआ। अनेक प्रकार के मानव जो विभिन्न स्थानों पर विकसित हुए इसा समय की घटना मानी जाती है। पिथेकथ्रोपेस मानव, हाईडलबर्ग मानव, नियन्टरथल मानव, रोडशिपन मानव की गणना इस सम्बन्ध में ही की जाती है। इसा के लगभग चार या पांच लाख वर्ष पूर्व यह युग था तब मानव का आविर्भाव हुआ। इसका प्रमाण उस समय मिला जब सन् १८६१ ई० में हालण्ड के एक चिकित्सक यूजिन डूबॉय ने जावा में आदिम मनुष्यों की कुछ हड्डियाँ खोज निकाली। इसी प्रकार अन्य स्थानों पर जस चीन में पीकिंग जमनी में हाईडलबर्ग और इंग्लैंड में पिल्टडाहन में भी आदिमानव की अस्थियाँ मिलीं। इसी आधार पर यह अनुमान लगाया गया है कि मानव पूर्व पाषाण युग में ही विकसित हुआ था।

(६) उत्तर पाषाण युग (The Neolithic Age)—इस पत्थर का नवीन युग भी कहा जाता है। इस युग में मनुष्य ने प्रायः पर विजय पाई थी, खेती करना

सीसा था, नशिया के किनारे बगन का उपयोगिता समझी परम्पर मह्योग मे काय करने की भावना उत्पन्न हुई। इस परचात् स मानव क विनाग का इतिहास नगमम सत्य प्रमाणा पर ही आधारित है।

साधारण रूप म मानव सम्पना का इतिहास दो भागों म अध्ययन किया जाता है। प्रथम, लगनकला व लिपि क आविष्कार और प्रचनन स पूव का प्रागतिहासिक युग, जिसम पाषाण युग ताम्र युग कांस्य युग तथा लौहयुग भी सम्मिलित हैं और दूसरा ऐतिहासिक युग जो उन्नत लखन तथा लिपि क प्रचनन क पदचात आरम्भ होता है। इस प्रकार उन्नत छनक श्रणिया म हाकर मानव का विकास हुआ है। यदि हम जीव के विकास का आरम्भिक त्रम छोड़ दें ता मानव का विकास मुख्य चार श्रणिया म माना जा सकता है। (१) अद्व मानव, (२) मानव (३) प्राचीन मानव तथा (४) वतमान मानव।

(१) अद्व-मानव—यदि मानव को हम बत्तर की सन्तान न भी मानें ता भी इस समय मनुष्य बत्तर स भिन्ना जुता तो था ही यह अद्व-मानव भूमि पर निवास करता था अपन परा क वन पर ही चनता था, परन्तु उसकी बुद्धि विकसित नहीं थी। उसम माचन का शक्ति नहीं थी। मस्तिष्क अधिक काय नहीं कर सकता था। फिर भा अपन त्त का समझता था यह अद्व मानव था।

(२) मानव—इस अवस्था म मनुष्य न अपना निवास सुरगित स्थान म करना सीसा, आहार प्राप्त करना तथा मष्ट करना सीसा और छनक प्रकार क माघन जीवन को सुर्वा बनान क लिए जुटान लगा। यह मानव का वह अवस्था थी जब अय प्राणियों की अण्णा वह एक चतुर प्राणी बन गया था।

(३) प्राचीन मानव—यह मानव की अण्णा अधिक विकसित अवस्था थी। इस समय मानव का अग्नि का पान था और छनक साधना म अण्णित स्थान पर पत्थर की रगड आदि म अग्नि उत्पन्न कर पत् पत्तियाँ जताकर उसका उपयोग करता था। शरीर रक्षा क हनु पत्त क पत्त तथा चमड का प्रयोग भी आरम्भ कर दिया था। बालन तथा अपनी भावान्ध्वक्ति की कला भी वह सीखन लगा था परन्तु फिर भी अभी पूरा विकसित नहीं था।

(४) वतमान मानव—जिम समय स यह मानव अस्तित्व म आया इसका ठीक प्रमाण ता आज भी उदन न नहीं है किन्तु अनुमान स लगभग २५ हजार वष पूव से वतमान मानव क विकास का समय आँका जाता है। आधुनिक सम्पना क युग की विभिन्न विगपताया का अमिक विकास इसी मानव क मस्तिष्क का उपज है। अय समस्त प्राणिया पर इसी बुद्धि क वल पर वतमान मानव का पूरा अधिकार स्थापित है।

प्राचीन समाज (Primitive Societies)—वैसे ता समाज का उत्पत्ति क सम्बन्ध में कई सिद्धांत प्रचारित रन हैं जिनक द्वारा भिन्न भिन्न विद्वान समाज की रचना अलग अलग साधना अथवा कारण स मानत हैं जैसे दवा सिद्धांत सामाजिक अनुभव सिद्धान्त प्रवृत्ति सिद्धांत (Instinct Theory) तथा विकास सिद्धान्त।

ग्राजकल केवल विकास सिद्धांत को ही सर्वश्रेष्ठ समझा जाता है। यहाँ हम इसी 'सिद्धांत' का अध्ययन करेंगे।

मानव जीवन के आरम्भ से ही समाज की रचना निरन्तर विकास के फल-स्वरूप हुई है यह स्वीकार किया जाता है। इस विकास की निम्नलिखित चार प्रमुख श्रेणियाँ मानी जाती हैं —

(१) आखेट जीवन, (२) चरवाहा जीवन, (३) कृषक-जीवन तथा (४) औद्योगिक जीवन।

(१) आखेट जीवन—मानव समाज के विकास का प्रथम सोपान आखेट-मय जीवन था। इस समय मनुष्य अपने छोटे छोटे समूहों में रहता था। ये दल-दल एकत्रित करते थे और जानवरों का शिकार करते थे और दल के सभी सदस्य भोजन प्राप्ति की आवश्यकता के कारण ही साथ रहते थे। संगठन सरल था। जो कुछ मिलकर प्राप्त करते थे, उसका बटवारा समान रूप से कर लिया जाता था। उस समय कोई शासक, सरकार, सम्पत्ति नियम यथवा विधान समर्थ नहीं थी। महात्तक कि पारिवारिक जीवन का भी कोई रूप विकसित नहीं हुआ था। सबकाल के लिये पाच सामग्री एकत्रित करके रखने की प्रवृत्ति भी प्राप्त नहीं थी। जो कुछ मिल जाता था या प्राप्त करते थे उसे समाप्त कर देते थे। सतार उन्हें भयावह (सम्पत्तय) लगता था। कभी कभी अकाल महामारी आदि भी उन्हें सताती थी। जीवन के श्रेय और प्रेम पक्ष पर विचार करने का समय उन्हें नहीं मिलता था। विभिन्न दलों में विभिन्न नियम एवं परम्पराएँ थीं। सामाजिक नियमों का अस्तित्व नहीं था। अपन-अपन के सदस्यों को व्यक्तित्व के रूप में अधिकारों की स्वीकृति नहीं थी। तान-मुक्त सम्बन्ध और संस्कृति की दृष्टि से यह समय अत्यन्त कष्टप्रद था।

(२) चरवाहा जीवन—आखेट जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन मुख्य रूप से जानवर पालन की प्रथा के कारण हुआ और इसी कारण से चरवाहा जीवन का आरम्भ हुआ। अब समाज का आकार बढ़ने लगा। दलों का विस्तार बना एवं जातियों में होना लगा, यथाकि खाद्य समस्या अब पहले जैसी विकट नहीं रहकर, पशु-पालन की प्रथा द्वारा अत्यन्त सरल हो गई थी। इस समय अनेक पत्नी-प्रथा की संस्था का विकास हो रहा था और विवाह के द्वारा परिवार की संस्था जन्म रही थी, जिसमें पिता उसकी पत्नी, सतान, सतान की सतान (विशेष रूप से केवल पुत्र तथा पुत्र बचपुत्र और उनकी सतान) सम्मिलित होती थीं। परिवार के अध्ययन को अपने सदस्यों के जीवन तक पर पुनः अधिकार होता था। अनेक परिवारों से वंश तथा जातियाँ बनकर बड़े समूह स्थापित होते थे इस प्रकार समाज का संगठन अत्यन्त सम्बन्ध पर आधारित था। इनका मुख्य व्यवसाय पशु पालन होता था, इसलिए चरागाहों की सुरक्षा और अधिकार बहुत प्रधान समझा जाता था। आखेट जीवन की प्रवृत्ति इस जीवन में सुरक्षा अधिक थी, किन्तु फिर भी ये एक स्थान पर स्थायी निवास नहीं कर सकते थे। एक स्थान का चरागाह सूख जाने पर या समाप्त हो

सीसा था, नशिया के मित्रारे बगने का उपयोगिता समझी, परम्पर मनुष्य के कष्ट करने की भावना उत्पन्न हुई। इस प्रकार में मानव के विकास का इतिहास नगमन सत्य प्रमाणों पर ही आधारित है।

साधारण रूप में मानव सम्पत्ता का इतिहास दो भागों में अध्ययन किया जाता है। प्रथम सगनकता के विविध प्रकार और प्रचलन के पूर्व का प्रागतिहासिक युग, द्वितीय पाषाण युग ताम्र युग कांस्य युग तथा लौहयुग का सम्मिलित है और दूसरा ऐतिहासिक युग जो उन्नत सगन तथा विविध प्रचलन के पदचान आरम्भ होता है। इस प्रकार उन्नत सगन श्रमिक म हाकर मानव का विकास हुआ है। यदि हम जाय के विकास का प्रारम्भिक क्रम छान दें तो मानव का विकास मुख्य चार श्रेणियों में माना जा सकता है। (१) अल्प मानव (२) मानव (३) प्राचीन मानव तथा (४) वर्तमान मानव।

(१) अल्प-मानव—यदि मानव का हम बच्चे की सतान न भी मानें तो भी इस समय मनुष्य बच्चे के सतान जूना तो था ही। यह अल्प मानव भूमि पर निवास करता था अपने परा के वन पर ही सतना था, परन्तु उसका बुद्धि विकसित नहीं थी। उसमें सचन के शक्ति नहीं थी। मस्तिष्क अल्पिक काय नहीं कर सकता था। फिर भी अपने शक्ति का समझता था। यह अल्प मानव था।

(२) मानव—इस अवस्था में मनुष्य ने अपने निवास सुरक्षित स्थान में करना सीखा आहार प्राप्त करना तथा सुरक्षित करना आदि और अनेक प्रकार के साधन जीवन की सुविधा बनाने के लिए जटिल तथा। यह मानव का एक अवस्था थी जब अपने प्राणियों की सपत्ता के लिए सतुर प्राणी बन गया था।

(३) प्राचीन मानव—यह मानव की सपत्ता अल्पिक विकसित अवस्था था। इस समय मानव का अग्नि का ज्ञान था और अपने साधन के अर्थ में स्थान पर पत्थर की रसद अग्नि के अग्नि उत्पन्न कर के सपत्ता के जवावर उसका उपयोग करता था। शरीर रक्षा के लिए पत्थर के पत्त तथा सतक का प्रयोग भी आरम्भ कर दिया था। सतन तथा सपत्ता भासनिश्चय की सतना भी यह सीखन गया था परन्तु फिर भी अभी पूरा विकसित नहीं था।

(४) वर्तमान मानव—जिस समय से यह मानव अल्पिक में आया इसका ठीक प्रमाण तो आज भी उन्नत में नहीं है, किन्तु अनुमान के अनुसार २५ हजार वर्ष पूर्व से वर्तमान मानव के विकास का समय आँका जाता है। आधुनिक सम्पत्ता के युग की विभिन्न विषयवस्तुओं का शक्ति विकास इसी मानव के मस्तिष्क का उपज है। अद्य समस्त प्राणियों पर अभी बुद्धि के अर्थ पर वर्तमान मानव का पूरा अधिकार स्थापित है।

प्राचीन समाज (Primitive Societies)—वैश्वेता समाज का उत्पत्ति के सम्बन्ध में कई सिद्धांत प्रचारित हैं जिनके द्वारा भिन्न भिन्न विद्वान समाज का रचना अलग अलग साधन अथवा कारणों से मानते हैं जैसे कि सिद्धांत सामाजिक अनुभव सिद्धांत, प्रवृत्ति सिद्धांत (Instinct Theory) तथा विकास सिद्धांत।

आजकल केवल विकास सिद्धांत को ही सर्वश्रेष्ठ समझा जाता है। यहाँ हम इसी सिद्धांत का अध्ययन करेंगे।

मानव-जीवन के आरम्भ से ही समाज की रचना निरन्तर विकास के फल-स्वरूप हुई है यह स्वीकार किया जाता है। इस विकास की निम्नलिखित चार प्रमुख श्रेणियाँ मानी जाती हैं —

(१) आखेट जीवन, (२) चरवाहा जीवन, (३) कृषक-जीवन तथा (४) औद्योगिक जीवन।

(१) आखेट जीवन—मानव समाज के विकास का प्रथम सोपान आखेट-मय जीवन था। इस समय मनुष्य अपने छोटे छोटे सगठित दलों में रहता था। ये दल फल एकत्रित करते थे और जानवरों का शिकार करते थे और दल के सभी सदस्य भोजन प्राप्ति की आवश्यकता के कारण ही साथ रहते थे। सगठन सरल था। जो कुछ मिलकर प्राप्त करते थे उसका बटवारा समान रूप से कर लिया जाता था। उस समय कोई शासक सरकार, सम्पत्ति, नियम अथवा विधान समायें नहीं थीं। यहाँ तक कि पारिवारिक जीवन का भी कोई रूप विकसित नहीं हुआ था। सब काल के नियमों का सामग्री एकत्रित करके रखने की प्रवृत्ति भी प्राप्त नहीं थी। जो कुछ मिल जाता था या प्राप्त करते थे उस समाप्त कर देते थे। सप्ताह उन्हें भयावह (सकटमय) लगता था। कभी कभी अकाल महामारी आदि भी उन्हें सताती थी। जीवन के श्रेय और प्रेम पक्ष पर विचार करने का समय उन्हें नहीं मिलता था। विभिन्न दलों में विभिन्न नियम एवं परम्पराएँ थीं सामान्य नियमों का अस्तित्व नहीं था। अपने दल के सदस्यों का व्यक्तिगत रूप में अधिकारों की स्वीकृति नहीं थी। तब मनुष्य सम्पत्ति और सस्कृति की दृष्टि से यह समय अत्यन्त कष्टप्रद था।

(२) चरवाहा जीवन—आखेट जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन मुख्य रूप से जानवर पालने की प्रथा के कारण हुआ और इसी कारण से चरवाहा जीवन का आरम्भ हुआ। अब समाज का आकार बढ़ने लगा दलों का विस्तार वृद्ध एवं जातियाँ में होना लगा, क्योंकि खाद्य समस्या अब पहले जसी विकट न रहकर, पशु-पालन की प्रथा द्वारा अत्यन्त सरल हो गई थी। इस समय अनेक पत्नी प्रथा की संस्था का विकास हो रहा था और विवाह के द्वारा परिवार की संस्था जन्म रही थी, जिसमें पिता उसकी पत्नी सत्तान, सत्तान की सत्तान (विशेष रूप से केवल पुत्र तथा पुत्र बधुएँ और उनकी सत्तान) सम्मिलित होती थी। परिवार के अध्ययन को अपने सदस्यों के जीवन तक पर पूर्ण अधिकार होता था। अनेक परिवारों से वंश तथा जातियाँ बनकर बड़े समूह स्थापित होते थे इस प्रकार समाज का सगठन अन्त सम्बन्ध पर आधारित था। इनका मुख्य व्यवसाय पशु पालन होता था, इसलिए चरवाहा की सुरक्षा और अधिकार बहुत प्रधान समझा जाता था। आखेट जीवन की अपेक्षा इस जीवन में सुरक्षा अधिक थी किन्तु फिर भी ये एक स्थान पर स्थायी निवास नहीं कर सकते थे। एक स्थान का चरवाहा सूख जाने पर या समाप्त हो

सीसा था, नशिया के किनारे बगन का उपयोगिता समझी परस्पर महयोग में काय करने की भावना उत्पन्न हुई। इस परवान् स मानव क विकास का इतिहास नगमग सत्य प्रमाण पर ही आधारित है।

साधारण रूप में मानव सभ्यता का इतिहास दो भागों में अध्ययन किया जाता है। प्रथम, लेगनकला व त्रिपि के आविष्कार और प्रचलन में पूर्व का प्रागतिहासिक युग, जिसमें पाषाण युग ताँबे युग कांस्य युग तथा त्रिपि युग भी सम्मिलित हैं और दूसरा ऐतिहासिक युग जो उक्त लेगन तथा त्रिपि क प्रचलन क पश्चात् आरम्भ होता है। इस प्रकार उपरोक्त अनेक श्रणियाँ में आकर मानव का विकास हुआ है। यदि हम जोर क विकास का प्रारम्भिक क्रम छोड़ दें तो मानव का विकास मुख्य चार श्रणियाँ में माना जा सकता है। (१) अल्प मानव (२) मानव (३) प्राचीन मानव तथा (४) वर्तमान मानव।

(१) अल्प-मानव—यदि मानव का हम आरंभ की गलान न भी मानें तो भी इस समय मनुष्य आरंभ में मितला जूनता ता था ही यह अल्प मानव भूमि पर निवास करता था, अन्न परा क वन पर ही चरता था, परन्तु उमका बुद्धि विकसित नहीं थी। उमग गावन का शक्ति नहीं थी। मस्तिष्क अधिकांश काय नहीं कर सकता था। फिर भी अन्न तिन का समभता था यह अल्प मानव था।

(२) मानव—इस अवस्था में मनुष्य ने अन्न निवास सुरक्षित स्थान में करना सीखा आहार प्राप्त करना तथा संग्रह करना सीखा और अनेक प्रकार क माधन जीवन को गुत्था बनाने क लिए जुटाने लगा। यह मानव का आरंभ था जो अब प्राणियों की अवस्था यह एक चतुर प्राणी बन गया था।

(३) प्राचीन मानव—यह मानव की अवस्था अधिकांश विकसित अवस्था थी। इस समय मानव का अग्नि का पान था और अन्न माधन में अर्पित स्थान पर पत्थर की रगट आदि में अग्नि उत्पन्न कर पत्तियों जताकर उमका उपयोग करता था। शरीर रक्षा क आनुवंशिक पद तथा चमड़े का प्रयोग भी आरम्भ कर दिया था। बालन तथा अन्नो भावाभिव्यक्ति की शक्ति भी यह सीखन लगा था परन्तु फिर भी अभी पूर्ण विकसित नहीं था।

(४) वर्तमान मानव—विश्व समय में यह मानव अस्तित्व में आया इसका ठीक प्रमाण तो आज भी उन्नत नहीं है, किन्तु अनुमान में लगभग २५ हजार वर्ष पूर्व से वर्तमान मानव क विकास का समय आरंभ जाता है। आनुवंशिक सभ्यता क युग की विभिन्न विषयताओं का प्रथम विकास इसी मानव क अस्तित्व का उपज है। अद्य समस्त प्राणियों पर इसी बुद्धि क बल पर वर्तमान मानव का पूर्ण अधिकार स्थापित है।

प्राचीन समाज (Primitive Societies)—यदि तो समाज का उत्पत्ति क सम्बन्ध में कई सिद्धान्त प्रचारित हैं जिनमें द्वारा भिन्न भिन्न विद्वान समाज का रचना अलग अलग साधना अथवा कारणों से मानते हैं जैसे दली सिद्धान्त सामाजिक अनुभव सिद्धान्त प्रवृत्ति सिद्धान्त (Instinct Theory) तथा विकास सिद्धान्त।

समाजकेवल विकास सिद्धांत को ही सर्वश्रेष्ठ समझा जाता है। यहाँ हम इसी सिद्धांत का अध्ययन करेंगे।

मानव जीवन के आरम्भ से ही समाज की रचना निरन्तर विकास के फल-स्वरूप हुई है यह स्वीकार किया जाता है। इस विकास की निम्नलिखित चार प्रमुख श्रणियाँ मानी जाती हैं —

(१) आखेट जीवन, (२) चरवाहा जीवन, (३) कृषक-जीवन तथा (४) औद्योगिक जीवन।

(१) आखेट जीवन—मानव समाज के विकास का प्रथम सोपान आखेट-मय जीवन था। इस समय मनुष्य अपने छोटे छोटे संगठित दलों में रहता था। ये दल एकत्रित करते थे और जानवरों का शिकार करते थे और दल के सभी सदस्य भोजन प्राप्ति की आवश्यकता के कारण ही साथ रहते थे। संगठन सरल था। जो कुछ मिलकर प्राप्त करते थे, उसका बटवारा समान रूप से कर लिया जाता था। उस समय कोई शासक, सरकार, सम्पत्ति, नियम अथवा विधान समायें नहीं थी। यहाँ तक कि पारिवारिक जीवन का भी कोई रूप विकसित नहीं हुआ था। सकट काल के लिये साध सामग्री एकत्रित करके रखने की प्रवृत्ति भी जाग्रत नहीं थी। जो कुछ मिल जाता था या प्राप्त करते थे उस समाप्त कर देते थे। सप्ताह उन्हें भयावह (सकटमय) लगता था। कभी कभी अकाल महामारी आदि भी उन्हें मरताती थी। जीवन के श्रेय और प्रेम पक्ष पर विचार करने का समय उन्हें नहीं मिलता था। विभिन्न दलों में विभिन्न नियम एवं परम्पराएँ थी सामान्य नियमों का अस्तित्व नहीं था। अपने दल के सदस्यों को व्यक्तिगत रूप में अधिकारों की स्वीकृति नहीं थी। पान भुक्त सम्भवा और संस्कृति की दृष्टि से यह समय अत्यन्त कष्टप्रद था।

(२) चरवाहा जीवन—आखेट जीवन में आर्थिक परिवर्तन मुख्य रूप से जानवर पालन की प्रथा के कारण हुआ और इसी कारण से चरवाहा जीवन का आरम्भ हुआ। अब समाज का आकार बढ़ने लगा दल का विस्तार का एक जातियाँ में हान लगा। क्योंकि साँच समस्या अब पहले जैसी विकट न रहकर, पशु-पालन की प्रथा द्वारा अत्यन्त सरल हो गई थी। इस समय अनेक पत्नी प्रथा की संस्था का विकास हो रहा था और विवाह के द्वारा परिवार की संस्था जन्म रही थी, जिसमें पिता, उसकी पत्नी, सत्तान, सनान की सत्तान (विशेष रूप से नेवल पुत्र तथा पुत्र बधुएँ और उनकी सत्तान) सम्मिलित होती थी। परिवार के अध्यक्ष को अपने मन्त्रियों के जीवन तक पर पूर्ण अधिकार होता था। अनेक परिवारों से बना तथा जातियाँ बनकर बड़े समूह स्थापित होते थे इस प्रकार समाज का संगठन अत्यन्त सम्बन्ध पर आधारित था। इनका मुख्य व्यवसाय पशु पालन होता था, इसलिए चरागाहों की सुरक्षा और अधिकार बहुत प्रधान समझा जाता था। आखेट जीवन की अपेक्षा इस जीवन में सुरक्षा अधिक थी किन्तु फिर भी य एक स्थान पर स्थायी निवास नहीं कर सकते थे। एक स्थान का चरागाह मूख जाने पर या समाप्त हो

सीखा था, नशिया के कितारे बसत की उपयोगिता समझी परस्पर सहयोग से कार्य करन की भावना उत्पन्न हुई। इस प्रकार से मानव के विकास का इतिहास नगमग सत्य प्रमाणों पर ही आधारित है।

साधारण रूप से मानव सम्यता का इतिहास दो भागों में अध्ययन किया जाता है। प्रथम लेखनकला व लिपि के आविष्कार और प्रचलन से पूर्व का प्रागतिहासिक युग, जिसमें पाषाण युग, ताम्र युग, कांस्य युग तथा तौयुग भी सम्मिलित हैं और दूसरा ऐतिहासिक युग जो उक्त लेखन तथा लिपि के प्रचलन के पश्चात् आरम्भ होता है। इस प्रकार उन्नत जनक श्रमिया में हाकर मानव का विकास हुआ है। यदि हम जीव के विकास का प्रारम्भिक क्रम छानें तो मानव का विकास मुख्य चार श्रमिया में माना जा सकता है। (१) अर्द्ध मानव (२) मानव (३) प्राचीन मानव तथा (४) वर्तमान मानव।

(१) अर्द्ध-मानव—यदि मानव को हम बन्दर की मूलान नहीं मानें तो भी इस समय मनुष्य बन्दर से मिलता जुलता था ही यह अर्द्ध-मानव नुमि पर निवास करता था, अपने परों के वन पर ही चरता था, परन्तु उसकी बुद्धि विकसित नहीं थी। उसमें भाषण का शक्ति नहीं थी। मनुष्य अधिक कार्य नहीं कर सकता था। फिर भी अपने शक्ति का समझता था यह अर्द्ध मानव था।

(२) मानव—इस अवस्था में मनुष्य ने अपना निवास सुरक्षित स्थान में करना सीखा आहार प्राप्त करना तथा संग्रह करना सीखा और अपने प्रकार के मायन जीवन को सुधी बनाने के लिए जुगल लगा। यह मानव का वह अवस्था थी जब श्रम श्रमियों की श्रमता वह एक चतुर प्राणी बन गया था।

(३) प्राचीन मानव—यह मानव की श्रमता अधिक विकसित अवस्था थी। इस समय मानव का अग्नि का ज्ञान था और अपने साधनों से अर्पित स्थान पर पत्थर की रगड़ अग्नि से अग्नि उत्पन्न कर पत्थर पत्थर बनाकर उसका उपयोग करता था। शरीर रक्षा के हेतु पत्थर के पत्त तथा चमड़े का प्रयोग भी आरम्भ कर दिया था। बालन तथा अपनी भावानुभक्ति की कला भी वह सीखन लगा था परन्तु फिर भी अभी पूरा विकसित नहीं था।

(४) वर्तमान मानव—जिस समय से यह मानव शक्ति व मद्राया श्रमता ठीक प्रमाण तक मात्र भी उत्पन्न नहीं है, किन्तु अनुमान से लगभग २/ हजार वर्ष पूर्व से वर्तमान मानव के विकास का समय आका जाता है। आधुनिक सम्यता के युग की विभिन्न विपत्तियों का तमिक विकास अभी मानव के मनुष्य का उत्तम है। श्रम समस्त श्रमियों पर अभी बुद्धि व बल पर वर्तमान मानव का पूरा अधिकार स्थापित है।

प्राचीन समाज (Primitive Societies)—वैसे तो समाज का उत्पत्ति के सम्बन्ध में कई सिद्धांत प्रचारित हैं जिनके द्वारा भिन्न भिन्न विद्वान उमात्र की रचना अलग अलग श्रमता श्रमता कारणों से मानत हैं जैसे देवा सिद्धांत सामाजिक अनुभव सिद्धान्त प्रवृत्ति सिद्धान्त (Instinct Theory) तथा विकास सिद्धान्त।

आजकल केवल विकास सिद्धांत का ही सर्वश्रेष्ठ समझा जाता है। यहाँ हम इसी सिद्धांत का अध्ययन करेंगे।

मानव जीवन के आरम्भ से ही समाज की रचना निरन्तर विकास के फल-स्वरूप हुई है यह स्वीकार किया जाता है। इस विकास की निम्नलिखित चार प्रमुख श्रेणियाँ मानी जाती हैं —

(१) आखेट जीवन, (२) चरवाहा जीवन, (३) कृषक-जीवन तथा (४) औद्योगिक जीवन।

(१) आखेट-जीवन—मानव समाज के विकास का प्रथम सोपान आखेट-मय जीवन था। इस समय मनुष्य अपने छोटे छोटे सगठित दलों में रहता था। ये दल फल एकत्रित करते थे और जानवरों का शिकार करते थे और दल के सभी सदस्य भोजन प्राप्ति की आवश्यकता के कारण ही साथ रहते थे। सगठन सरल था। जो कुछ मिलकर प्राप्त करते थे उसका बटवारा समान रूप से कर लिया जाता था। उस समय कोई शासक, सरकार, सम्पत्ति, नियम अथवा विधान समायें नहीं थी। यहाँ तक कि पारिवारिक जीवन का भी कोई रूप विकसित नहीं हुआ था। सबके बाल के निये खाद्य सामग्री एकत्रित करके रखने की प्रवृत्ति भी प्राप्त नहीं थी। जो कुछ मिल जाता था या प्राप्त करते थे उस समाप्त कर देते थे। सत्तार उन्हें भयावह (सकटमय) लगता था। कभी कभी अकाल मशामारी आदि भी उन्हें सताती थी। जीवन के श्रय और प्रमत्त पर विचार करने का समय उन्हें नहीं मिलता था। विभिन्न दलों में विभिन्न नियम एवं परम्पराएँ थी सामान्य नियमों का अस्तित्व नहीं था। अपने-अपने सदस्यों को व्यक्तिगत रूप में अधिकारों की स्वीकृति नहीं थी। गान सुन सम्बन्ध और संस्कृति की दृष्टि से यह समय अत्यन्त कष्टप्रद था।

(२) चरवाहा जीवन—आखेट जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन मुख्य रूप से जानवर पालन की प्रथा के कारण हुआ और इसी कारण से चरवाहा जीवन का समावेश हुआ। अब समाज का आकार बढ़ने लगा दलों का विस्तार वृद्धि एवं जातियाँ में हानि लगा क्योंकि खाद्य समस्या अब पहले जैसी विकट नहीं रहकर, पशु-पालन की प्रथा द्वारा अत्यन्त सरल हो गई थी। इस समय अनेक पत्नी प्रथा की समस्या का विकास हो रहा था और विवाह के द्वारा परिवार की संस्था जन्म रही थी, जिसमें पिता उसकी पत्नी सन्तान, सत्तान की सत्तान (विशेष रूप से केवल पुत्र तथा पुत्र बंधुएँ और उनकी सत्तान) सम्मिलित होती थीं। परिवार के अग्र्यस्त को अपने सदस्यों के जीवन तक पर पूरा अधिकार होता था। अनेक परिवारों से वंश तथा जातियाँ बनकर बड़े समूह स्थापित होते थे इस प्रकार समाज का सगठन अत्यन्त सम्बन्ध पर आधारित था। इनका मुख्य व्यवसाय पशु पालन होता था, इसलिए चरागाहों की सुरक्षा और अधिकार बहुत प्रधान समझा जाता था। आखेट जीवन की अपेक्षा इस जीवन में सुरक्षा अधिक थी, किन्तु फिर भी ये एक स्थान पर स्थायी निवास नहीं कर सकते थे। एक स्थान का चरागाह सूख जाने पर या समाप्त हो

राजनैतिक संगठन तथा समाज आदि सब चीजें आज समस्त सत्तार की एक ही रूप में होनी चाहिए एमे विचार और योजनायें चल रही हैं ।

सामाजिक संस्थाओं की उत्पत्ति—मानव समाज तथा विभिन्न समुदायों का जीवन अनेक प्रकार की संस्थाओं तथा रीति रिवाज और परम्पराओं के प्रभाव से संचालित होता है । वर्तमान समाज का संगठन बहुत कठिन है । इसमें अनेक प्रकार के ऐसे समुदाय हैं जो विभिन्न क्षणों में विभिन्न प्रकार से क्रियाशील हैं । समाज के संगठन की व्याख्या करने से पूर्व कुछ सम्बन्धित शब्दों का अर्थ स्पष्ट रूप से समझना आवश्यक है । य निम्न हैं —

(१) समुदाय (Association) (२) क्षेत्र (Community), (३) संस्था (Institution) ।

समुदाय—मनुष्यों का ऐसा संगठित समूह होता है जो सामान्य उद्देश्य के लिए कार्य करता है । इसमें मनुष्यों की सदस्यता, केन्द्रीय संगठन तथा उद्देश्य की एकता आदि के लक्षण होते हैं ।

क्षेत्र—समाज का प्रत्येक ऐसा भाग जो अपने में पूर्ण हो, जैसे ग्राम, नगर, दण्ड आदि वह क्षेत्र कहलाता है । जहाँ का जन-जीवन एकमात्र हो और नागरिकों के जीवन में भी परस्पर गहरा सम्बन्ध हो ऐसे स्थानों में एक ही परम्परा एक ही रीति रिवाज, एकता की भावना आदि मुख्य विशेषताएँ विद्यमान होती हैं ।

संस्था—मेक आइवर के शब्दों में संस्थाएँ मानव के पारस्परिक सम्बन्धों का स्थापित तथा स्वीकृत रूप हैं । वे परम्परा तथा परिपाटी अथवा रीति रिवाज के रूप में रहती हैं और सामाजिक जीवन के स्थायी संगठन का अंग होती हैं । इनकी स्थापना किसी समुदाय के द्वारा की जा सकती है जैसे परिवार के द्वारा विवाह राज्य या क्षेत्र द्वारा नियम आदि की स्थापना होती है । विवाह नियम दण्ड, जाति प्रथा छुआछाने अनिवाय वधव्य आदि इसी अर्थ में संस्थाएँ हैं । इस प्रकार संस्था केवल सामाजिक सम्बन्धों का एक रूप है जबकि समुदाय है एक जन-समूह ।

अतः हम कह सकते हैं कि आधुनिक समाज उन क्षेत्रों एवं समुदायों से युक्त है जिनका जीवन संचालन संस्थाओं द्वारा किया जाता है ।

इन संस्थाओं का नवीन रूप से स्थापित भी किया जा सकता है अथवा अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए समुदाय इन्हें समाज से प्रस्तुत रूप में भी अपना सकता है । वर्तमान समय में इन संस्थाओं की संख्या अलग-अलग हो रही है अतः सबका वर्णन न सम्भव है और न आवश्यक । यहाँ केवल इतना समझना आवश्यक है कि इनकी उत्पत्ति किस प्रकार हुई है ।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है । समाज की अनुपस्थिति में वह अपना विकास तो कर ही नहीं सकता, साथ ही वह सतुलित मानव भी नहीं रह सकता । अनेक दशांशों में इस प्रकार के प्रयोग करके देखा गया है जहाँ मानव शिशु को समाज से पृथक् रखा गया और वह अपनी किसी भी शक्ति, जैसे सुनना, बोलना, मूँछना आदि का विकास नहीं कर पाया । यह भी स्वीकार किया जाता है कि एकांत कारावास का

कोई सफ़्त साधन व सस्या नहीं है। विशेषतः आज के लोकतांत्रिक युग में इस सस्या का महत्व अधिक है। शिक्षा में सामाजीकरण की बड़ी भारी शक्ति होती है। इसके द्वारा मानव अपनी प्रवृत्तियाँ का नियंत्रण करता हुआ अपनी तुच्छ भावनाओं को अनुशासित करता है। इसके सहारे मानव अपने जीवन के आधिक सधप पर विजय प्राप्त करता है। अतः शिक्षा मानव समाज की सदैव ही शुभ सस्या रही है।

(२) सम्पत्ति—सामाजिक जीवन में सम्पत्ति की सस्या भी महत्वपूर्ण है। इसकी उत्पत्ति मनुष्य की आवश्यकताओं के कारण हुई है। यह मनुष्य की कई प्रवृत्तियाँ एक धारणाओं को संतुष्ट करती है और उसके विकास में अनेक प्रकार से सहायक होती है। इसका स्वरूप समयानुसार बदलता रहता है। निजी सम्पत्ति जन सम्पत्ति भूमि, भवन आदि का महत्व और स्वरूप भी परिवर्तनशील रहता है। यह सस्या अति प्राचीन है। कुछ लोग का मत है कि सम्पत्ति का जन्म राज्य से भी पहले हुआ था और यह सत्य प्रतीत होता है। सम्पत्ति से मानव को सुरक्षा और स्वतंत्रता अनुभव होनी है, उसके चरित्र विकास में सहायता मिलती है उसमें उदारता और सत्कार वृत्ति जाग्रत होनी है तथा कार्य करने की प्रेरणा में सहायता मिलती है। इसमें कुछ हानियाँ भी हैं जैसे समाज में शोषण, भ्रूल और निधनता को स्थायी बनाती है, धनवान अधिक धनवान और निधन अधिक निधन बनते जाते हैं, आदि।

(३) दण्ड—यह सस्या भी सामाजिक जीवन का अभिन्न भाग है। राज्य, शिक्षा और दण्ड दो सस्याओं द्वारा ही समाज में व्यवस्था स्थापित करता है और राज्य के नियमों का पालन सम्भव बनाता है। दण्ड साधारण शक्ति में वह पद्धति है जिसके द्वारा सामाजिक अव्यवस्था करने वाले व्यक्ति के अधिकार इस प्रकार छीन लिए जाते हैं कि अपराधी को भी कष्ट न हो। दण्ड का उद्देश्य मानव अधिकारों की अवहेलना को रोकना होता है। इसमें अनेक सिद्धांत हैं जैसे प्रतिशोधात्मक निषेधात्मक तथा सुधारात्मक सिद्धांत। आजकल सुधारवादी सिद्धांत पर ही अधिक बल दिया जाता है।

(४) परिवार तथा विवाह—मानव समाज में यह सस्या बहुत महत्वपूर्ण है। कुछ विद्वान तो यहां तक कहते हैं कि परिवार ही बढ़कर धीरे धीरे जाति, वंश और राज्य के रूप में बदल गए। वास्तव में परिवार वह सस्या है जिसमें पुरुष और स्त्री के सम्बंध समाज द्वारा मायता प्राप्त करते हैं। इसकी सहायक दूसरी सस्या विवाह है। विवाह के रूप प्राचीन काल से ही अनेक रहे हैं और समय तथा स्थिति के अनुसार वे बदलते भी रहे हैं। अनुलाम और प्रतिलोम विवाहों का हिन्दू शास्त्र में बहुत वर्णन है। साथ ही राक्षस विवाह, गांधव विवाह आदि का भी प्रसंग बड़ा रोचक है। मुसलमानों में इसका रूप 'मूता विवाह' और 'तलाक' के कारण अधिक महत्व का है। वर्तमान समय में भी विवाहों का स्वरूप बदल रहा है। न्यायालयों में जाकर विवाह करने की प्रथा पश्चिमी देशों से अपनायी गई है और प्राचीन रूप जिसके अनुसार विवाह एक जन्म जन्मान्तर तक के पुरुष और स्त्री के

इसी प्रकार मानव समाज के विकास में भी जीवन रक्षा का कारण बहुत सहायक हुआ है।

(३) निवास की आवश्यकता—मनुष्य ऐसा स्थान भी चाहता है जहाँ वह निश्चिततापूर्वक आराम कर सके। किसी का भय भी न हो, किसी के आश्रित न हो और कोई उम पीड़ित भी न कर सके। प्रारम्भ में अस्थायी होने के कारण गुफा एक बन्दरगाह तथा वधा पर निवास करता था परन्तु फिर भी अति धरमात, अति गर्मी तथा अत्यन्त गर्मी उस कष्ट देती थी। धीरे धीरे सम्पत्ता के कारण उमन गह निर्माण बना सीमा और इसके द्वारा समाज का बहुत विकास हुआ। आज बीमबी सी में भवन निर्माण का जितना काम हो रहा है वह नवीन सम्पत्ता का प्रतीक है।

(४) अन्न तत्त्व—उपरोक्त कारणों के अतिरिक्त कुछ और तत्त्व भी सामाजिक विकास में सहायक हुए हैं। इनमें रक्त सम्बन्ध धर्म तथा सामाजिक प्रवृत्तियाँ मुख्य हैं।

रक्त सम्बन्ध समाज का बहुत गहरा बाधन समझा जाता है। प्रत्येक व्यक्ति के जन्म से लेकर उपासना, शिक्षा, विवाह, धर्मसाधन पारिवारिक सम्बन्ध तथा दहावसान और उसके पश्चात् उमकी पारिवारिक श्रृंखला में मृत्यु की उत्पत्ति अति मुख्य घटनाएँ हैं और ये बाध प्रगाढ होते हैं। 'रक्त जल की श्रेणी अधिक गाढा होता है' प्राचीन कहावत है। इसी आधार पर परिवार, वर्ग, जाति और कुल बनते रहते हैं।

धर्म ने सामाजिक विकास में बहुत महत्वपूर्ण काम किया है। इनके द्वारा मनुष्य अपने गुण प्रदर्शन का हल प्राप्त करता है और मनुष्य में विश्वास करना सीखता है। बीसवीं सदी में भी धर्म मनुष्य के लिए गतिशीली तत्त्व स्वीकार किया जाता है। पाकिस्तान की रचना इसका प्रमुख उदाहरण है, तो प्रारम्भ में धर्म की मर्यादा से पवित्र समाज बनाने में बहुत सहायता मिली होगी इसमें सन्देह नहीं है।

अतिम तत्त्व सामाजिक प्रवृत्तियों का है। जब तक मनुष्य की ये प्रवृत्तियाँ मनुष्य नहीं होतीं वह आनन्द का अनुभव नहीं करता। इसलिए समाज से वह सम्मान और भावना लेने के लिए प्रयत्न करता हुआ अपनी ऐसी प्रवृत्तियाँ का मनुष्य करता है। विवाह का प्रयास, प्रीतिभोज की पद्धतियाँ ऐसे ही कुछ उदाहरण हैं जिनसे समाज के विकास में बहुत योग्य मिला है और जो समाज की प्रदान परम्पराओं के रूप में आज भी विद्यमान हैं।

कुछ लोगो का मत है कि सामाजिक उत्पत्ति में प्रमुख सहायक तत्त्व निम्न तीन हैं—(१) वातावरण तथा वातावरण, (२) भौतिक स्थिति तथा (३) प्राणी शास्त्रीय सिद्धांत। किन्तु यह ठीक नहीं पात होता। समाज के जीवन पर इन तत्त्वों का प्रभाव तो हो सकता है किन्तु ये विकास के कारण नहीं बन सकते, अतः उन्हें गौण रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

समाज में प्रौद्योगिकी का महत्त्व (Role of Technology)—प्रौद्योगिकीय

कहलाता था और उमका अधिपति 'नामाधीश' कहाता था ।

एसी व्यवस्था होते हुए भी प्रजा के साथ व्यवहार अच्छा नहीं होता था । दाम प्रथा व वारण नागरिका का सम्मान नहीं था । व उपज के रूप म ही कर देते थे । सिचाई का प्रबंध अच्छा था और इसके लिए विसय कर भी लगाया जाता था और यदि समय पर भुगतान नहीं हाता था ता सिचाई की व्यवस्था बंद भी कर दी जाती थी । इस प्रकार गामन प्रबंध की व्यवस्था की गई थी ।

सामाजिक व्यवस्था—मिस्र की सामाजिक व्यवस्था बहुत मरल थी । यद्यपि सम्राट और शासक वग वभवशाली था तथापि साधारण जनता सन्तुष्ट नहीं थी । उन्हें बहुत सार कर और गुल्क चुकान पडते थ । वगार प्रथा थी । दासा की स्थिति अति दयनीय थी । अय मन्पताया की भाति यहाँ भी समाज म श्रणिया थी । समाज म ग्रासक का स्थान सर्वोपरि था । उसके पश्चात प्रथम श्रेणी मे पुजारी वग था जो धनी एक वृद्धिजीवी होना था । दूसरी श्रेणी म सामंत वग था जो शाति क समय ग्रासक की मवा तथा युद्ध क समय सहायता करता था तीसरी श्रेणी म कृषक वग था । इस वग की सस्था अधिकतम थी । सिल्पकार वग अपना अन्न अस्तित्व रखता था और अतिम था दास वग । पारिवारिक संगठन मात सत्तात्मक होने थ और नारी का यथोचित सम्मान था । बहु विवाह प्रथा प्रचलित थी किन्तु कवल उच्च वर्गों म ही । स्त्री पुंस्य म परस्पर स्निग्ध स्नेह होता था और विश्वास करते थ । भगिनी विवाह भी प्रचलित था, किन्तु रक्त गुद्ध रखने की दष्टि से । महिलायें स्वतंत्र रूप म सम्पत्ति की उत्तराधिकारी या स्वामिनी बन सकती थी तलाक की प्रथा भी थी किन्तु अत्यरथ । अंगूठी, जजोर, कुडल आदि आभूषणा की प्रथा थी और समाज का मुख्य व्यवसाय कृषि, पशुपालन तथा गिल्प और हस्तकौशल था ।

धम और दान—मिस्र का धार्मिक जीवन भारतवप की तरह का था । वहाँ अनेक देवी देवताया की मायता थी और उनकी उपासना होती थी । कृषि प्रघात देस होने के कारण आकास, पृथ्वा, पाताल आदि को पूजते थे इन सबके उनके यहा अलग अलग नाम थे जैसे पृथ्वी को 'हायोर', आकास को सिबु चद्रमा को 'सिन और स्य को हारस कहते थे । व पशुया की भी उपासना करते थे । साड एव बक्रे विशेष पूजनीय माने जात थ । उनका मत था कि देवता पशुया म निवास करते हैं । भारतवप म देवतायो का सम्पक पशुया से उनके वाहन के रूप म स्वीकार किया गया है । मिस्र के शासक वग का जीवन भी धार्मिक सिद्धांता स नियंत्रित होता था । वे भूमि का एक तिहाई मदिरो के लिए व्यय करते थे । देवालय अनेक होते थे और उनकी मायतायें भी पृथक हाती थीं । एक सम्राट ने एनेश्वरवा भी स्थापित किया था । मिस्र क निवासी आत्मा के आवागमन के सिद्धान्त (पुनज म) का भी मानने थ और मुक्ति मे विश्वास करते थे । मृत शरीरा की वे बडी सुरक्षा करते थे । इस सम्बंध मे उन्होंने आश्चमजनक मसालो का आविष्कार भी किया था जिससे गव मदियों तक उमी रूप म रहते थ । शव के रखने का स्थान बहुत सुंदर बनाते थे, दोबारा पर उसके जीवन की घटनाया के धिय तथा अय भोग-

विलास की सामग्री भी रखते थे। पत्थर की ऐसी सतहें मिली हैं जिनमें हजारों वर्ष पुराने गव उमी रूप में रक्षित हैं। इन्हें 'ममी' कहते हैं।

कला-कौशल—मिस्र की सभ्यता कला के क्षेत्र में भी अग्रणी रही है। उन की स्थापत्यकला पर्याप्त रूप में विकसित हो चुकी थी। भवन मिट्टी एवं लकड़ी की सहायता से बनते थे, छतों को लकड़ी तथा पत्थरों से बनाई जाती थीं। भवनों में उद्यान भी रक्षित पाए जाते थे। खम्भा की प्रथा चल पड़ी थी। कारनाक का देवालय और तत्कालीन पिरामिड उस समय की वास्तुकला का जीवित उदाहरण हैं। आज भी यह अनुमान लगाया जा रहा है कि उन प्राचीन युग में पिरामिड कैसे बनाए जाते थे। एक पिरामिड की ऊंचाई ४५० फीट, एक भुजा की लम्बाई ७५० फीट है। लगभग ढाढ़-ढाई टन वजन के २२ लाख पत्थरों के टुकड़े उनमें लगे हुए हैं। मूर्ति कला भी उस समय विकसित हो चुकी थी और यह माना जाता है कि उस समय समार का कोई भी देश मिस्र की तुलना में खूब होने की क्षमता नहीं रखता था। तत्कालीन पक्षी, पशु और मानव का मूर्तियाँ आज भी सुरक्षित हैं। इनमें स्फिक्स (sphinx) की मूर्ति विशेष उल्लेखनीय है। इस प्रतिमा का शरीर सिंह का सा और सिर मानव का सा है। यह बहुत तेजस्वी प्रतीत होती है। यह एक मी आठ फीट लम्बी और सत्तर फीट ऊँची है। इसका गिर तटीय फीट लम्बा और लगभग चौदह फीट चौड़ा है। इसका निर्माण परिष्कृत मूर्तिकला के सिद्धांतों के अनुसार हुआ है। कारनाक का देवालय भी कला सौंदर्य और विचित्रता की दृष्टि से विश्व में अग्रणी है। यह लगभग दो फलांग लम्बा है। इसकी कुर्सी ३३० फीट लम्बी तथा १६० फीट चौड़ी है। इसमें खम्भा की सोलह पंक्तियाँ हैं जिनमें कुल १२६ खम्भे हैं। बीच के बारह खम्भों में प्रत्येक ७६ फीट लम्बा है और इनके ऊपर के गिर पर लगभग एक मी आठमी गुविधातुवक स्थान ग्रहण कर सकते हैं। इस यहाँ अनेक मंदिर हैं। उनमें से इनकी शोभा अद्वितीय होगी। भारत और मिस्र में विज्ञान प्रतिमाओं बनाने का युग बहुत समय तक रहा है। चित्रकला का आरम्भ भी हो गया था। देवालयों और पिरामिडों की भित्तियों पर चित्रकला का कुछ प्रमाण मिलता है। परन्तु ऐसा अनुमान है कि उन समय यह कला वास्तुकला की सहायिका के रूप में ही रही होगी, स्वतंत्र रूप में नहीं।

भाषा और साहित्य—भाषा के क्षेत्र में भी मिस्र की सभ्यता प्राचीनतम मिल्ती होती है। तत्कालीन प्राण्य लक्षा से यह प्रमाणित होता है कि लगभग २,१०० वर्ष ईसा में पूर्व भी मिस्र भाषा का भाषा का ज्ञान था। अत्यंत प्राण्य चित्र भाषा फिर चित्र लिपि के माध्यम से विचार लिपि और अंत में वर्ण लिपि का विकास हुआ था। फिर भी उन्हें स्वर ज्ञान नहीं था। कवच चौबाम व्यंजना की वर्णमाला का विकास हुआ था।

मिस्र की चित्र लिपि



इस प्रकार लेखन कला का आश्चर्यजनक आविष्कार सवप्रथम मिस्र में हुआ था। व चित्रा, संकेता और व्यंजनों की सहायता से अपने विचार व्यक्त करते थे। उनकी लेखन सामग्री में सरकण्डे की लेखनी, स्पाही तथा पेपीरस कागज और दवात होनी थी। पेपीरस कागज एक वक्ष के तन को पतला काटकर विशय ढग से बनाया जाता था। इसलिए इसका नाम आज भी पपर ही कहा जाता है। इंग्लैंड के सयहालय में सत्तालीन प्राप्त कागजा के अवशेष विद्यमान हैं। इही साधनों की सुविधा से साहित्य की सवामीण उत्पत्ति सम्भव हुई थी। इतिहास, धर्मशास्त्र, गणित आदि विषया पर बहुत खोज हुई थी और ठोस तान प्रकट हुआ था।

विज्ञान—इस क्षेत्र में भी मिस्र का सम्यता बहुत आगे थी। शव की सुरक्षा व मसान, पिरमिडा की रचना चागज, स्पाही, कलम आदि का आविष्कार तथा गणित जस गम्भीर विषयो का अध्ययन उाकी वैज्ञानिक सूक्ष्म सूक्ष्म की गहराई व प्रत्यक्ष प्रमाण है। गणित के माप ज्योतिष का और तनूसार प्रथम पचाग की रचना इही व द्वारा हुई। एक वर्ष में ३६५ दिन १२ मास और प्रत्येक मास में ३० दिन की व्यवस्था भी मिस्र में ही पहले पहल हुई थी उस समय चिकित्सा के क्षेत्र में हा मिस्र अग्रणी था। इम्होटप प्रसिद्ध चिकित्सक था और वहाँ ४८ प्रकार की शल्य चिकित्सा (Operations) प्रचलित थी। रेखागणित के साथ भूमि का माप तौल भी आरम्भ हुआ किंतु फिर भा उस समय तक दशमलव प्रणाली गुणा, भाग आदि से व लोग अपरिचित ही थे।

इस प्रकार प्राचीन मिस्र की सम्यता अत्यंत उन्नत अवस्था पर पहुंच कर

विलीन हो गई। अपनी भावी सत्ता के लिए सस्कार अथवा सम्पत्ता के रूप में कुछ भी नहीं छोड़ सकी। प्राचीन चीन गौरव तथा एतद्वय के प्रमाण स्तूप, पिरामिड ममी तथा दवानयता विद्यमान हैं किन्तु वर्तमान मिस्र के लिए उनका अमूल्य स्तन नहीं के समान है।

दजला फरात की घाटी की सम्पत्ता

नयी क्रांति सम्पत्ताशास्त्र में इस घाटी की सम्पत्ताशास्त्र का भी महत्वपूर्ण स्थान रहा है। यह भी मिस्र की सम्पत्ता की भाँति अति प्राचीन है। इसी भाग में मुमरियन बबीलान अमीरिया और खालियन सम्पत्ताएँ एक के बाद एक प्रमाण प्रकटित हुई थीं। राजतन्त्र के प्रमाण का दराक बहान है। यह भाग नया के विनाश होने के कारण प्रारम्भ में ही बहुत उपजाऊ था इसीलिए सम्पत्ताशास्त्र का विकास हुआ था।

सुमेरिया की सम्पत्ता

निष्पत्त जा इस सम्पत्ता का प्रमुख नगर था वहाँ पर प्राप्त खण्डहरों में पता चलता है कि इस सम्पत्ता का जन्म २० पू० ६००० वर्ष में हुआ था। यह योग कर्मों में आये और कौन था यह अभी तक स्पष्ट रूप से नहीं कहा जा सकता। अनुमान है कि वे मध्य एशिया अथवा पारस की खानों द्वारा भारत का आरंभ किया गया था। उनकी सभ्यता बहुत प्राचीन तथा विकसित रही है और सम्भवतः हर क्षेत्र में अतिशील भी रही थी।

राजनीतिक व्यवस्था—मुमरियन बनिष्ठ तथा मुगलिन हान थे और आधुनिक आकषक होती थी। इन्होंने कई नगर राज्य बनाये थे। और सत्र नगर राज्य एक ही साम्राज्य में अखिल थे। प्रत्येक नगर राज्य भीतरा शासन के लिए स्वतंत्र हान थे और सम्भवतः पुरातन वहाँ का शासक हाता था। परन्तु बाद में नयी नगर राज्यों के पारस्परिक बमनस्य के कारण मुमरियन साम्राज्य का हान हुआ। फिर भी सम्पत्ता जीवित रही और बाद में बबीलोन की सम्पत्ता का जन्म लिया। यहाँ की याय व्यवस्था मुगल थी किन्तु नियम कठिन थे। मंदिरों में याय किया जाता था। शासक सर्वोच्च यायाधीश हाता था और याय द्वारा स्वयं शासक भी बँधा हुआ होता था।

सामाजिक व्यवस्था—यहाँ के समाज में कई वर्ग हान थे परन्तु प्रमुख तीन वर्ग थे। अमीर गरीब का भद्र बहुत था। पटित और सैनिक का समाज में सम्मान था। वे उच्च वर्ग में मान जाते थे। दास प्रथा प्रचलित थी परन्तु वे प्रसन्न रहते थे। विवाह पद्धति माय हो गई थी और तत्सम्बन्धी अनेक नियम भी प्रचलित थे। दहेज भी प्रचलित था और वह स्त्री धन माना जाता था। स्त्री फिर भी पुरुष सम्पत्ति मानी जाती थी और पुरुष अपना पत्नी का बंध भी सकता था। तनाक प्रथा थी किन्तु केवल बच्चा स्त्रियाँ के लिए सीमित थी। आचरणहीन पत्नी का प्राणदण्ड भी दिया जा सकता था। स्त्रियाँ सौंदर्य साधन के अनेक उपकरणों का

प्रयोग करती थीं।

मृदा की भूमि उपजाऊ थी। इसलिये प्रमुख व्यवसाय कृषि ही था, इसी भी प्रगति हुई थी। हना म मुषार, बीज रखन का प्रबन्ध और सिंचाई आदि साधना का पर्याप्त प्रचार हुआ था। बड़े-बड़े बाँध और नहरें बनवाई गई थीं पशु पालन, मछली पकड़ना वस्त्र बनाना, तथा अन्य उद्योग धर्मों का प्रचार भी था, किन्तु फिर भी समाज धनक व्यवसाय हीन हुए भी पूर्ण रूपण समृद्ध नहीं था

धार्मिक आदर्श—मुमरियन लोग कई देवताओं को मानते थे। सूर्य (समस) वायु (अग्नि), धातु (अग्नि), पृथ्वी (रक्षर) जल, कृषि, वनस्पति आदि सर्व का व देवता मानकर पूजा करते थे। भूत प्रेत म भी उनका विश्वास था। देवताओं का मानवीय रूप म ही मानते थे। उनका मुद्गर मूर्तिर्था स्थापित करते थे। बलि भा चन्दा य कभी कभी नर-दान की व्यवस्था भी थी। वे लोग आत्मा का अमर मानते थे और मनुष्य क माथ उनकी प्रिय वस्तुओं का रखते थे कभी कभी तो इसी कारण पत्नी या प्रयमी का भी तावित ही दफना देते थे। या प्रथा अद्यतन कटा नहीं थी।

साहित्य और कला—नखन बना इन सम्यता की प्रमुख विरासत थी मुमरियन लोग मिट्टी की पट्टियों पर नुकीली सखनों म लिखते थे इसीलिये इन कालांतर या मुष्ताकार लिपि का नाम दिया गया है। यह भी चित्र लिपि के आकार पर ही विनिर्मित हुई थी और अक्षर दायें से बायें की ओर लिखे जाते थे पत्थर प्राप्त न होने म वास्तुकला म व अधिक प्रगति नहीं कर सक किन्तु फिर भी भवन निर्माण म महाराज स्तम्भ, गुम्बज आदि का प्रचुर प्रयोग हुआ है। मूर्तिकला म भी व निपुण थे। विनेय आदर्शयज्ञाओं क लिए पत्थर बाहर से मँगाने थे। गीत काम पकी हुई इटा स करते थे। देवालयों की स्थापना म व अपनी कला प्रदर्शित करते थे। साहित्यिक क्षेत्र म भाषा विद्यान गणित आदि क व पारंगत थे। चन्द्रम की विभिन्न कलाओं का अध्ययन कर इन्होंने भी पचास बनाया था और कई नवी-ग्रहा को खोज की था। उनकी गणना ६० से आरम्भ होती थी। ६० सेकिण्ट क एव मिनट ६० मिनट का एक घण्टा आदि। अन्य सम्यताओं को इन विद्यान से बहुत लाभ हुआ।

महत्त्व—अग्नि प्राचीन सम्यता होने हुए भी आज यह सम्यता अधिक प्रसिद्ध नहीं है परन्तु फिर भी लखन कला, विद्यान आदि इस सम्यता की कुछ ऐसी अनुपम देन हैं जिसके कारण इसको भुलाया नहीं जा सकता।

वेदीयों की सम्यता

मुमरिया की सम्यता क विश्वस पर हम्मू राजी न वेदीयों की सम्यता को स्थापित किया। इनका समय २२०० ई० पू० से १३०० ई० पू० माना जाता है। हम्मू राजी बहुत ही कुशल और शायप्रिय शासक था। उसके समय म इस सम्यता न बहुत उत्पत्ति की, किन्तु बाद में विलास और मुख के आधिक्य के कारण

विधि के विशेषण होते थे। उन्हीं की अध्यक्षता में धार्मिक कार्य संचालित होते थे।

साहित्य और कला—इस क्षेत्र में अत्यन्त अद्भुत बात यहाँ के विद्यालयों की है। समस्त विद्यालयों के पढ़ने के लिए विश्व की सर्वप्रथम पाठशाला यहीं स्थापित हुई थी। विद्यार्थी नरम चिबनी मिट्टी की स्लेटा पर लिखते थे और वणमाला का प्रयोग न जानने के कारण सकेतो का प्रयोग करते थे। लेखका का समाग्न में बहुत सम्मान होता था। खुदाई से प्राप्त एक विद्यालय के खण्डहर की भित्ति पर यह लेख मिला है कि “जो कुशल लेखक हूँ वे सूय की भाँति चमकेंगे”। इस विद्यालय का विस्तार ५५ वग फीट है। उनकी लिपि में लगभग ३०० शब्द खण्ड के सकेत थे और इस ध्वन्यात्मक लिपि कहते थे। साहित्य में ये लोग अधिक रुचि नहीं रखते थे फिर भी साधारण गति अवश्य थी। कला में वे निपुण थे। स्थापत्यकला का उदाहरण ‘जिगुरात थ जिनकी मीनारा की ऊँचाई ६५० फीट तक होती थी। मूर्तिकला में वे हाथ नहीं बटा गये, संगीत कला में वे बहुत रुचि रखते थे। इस क्षेत्र में बाँसुरी बीज मशक तुरही भापू, डोल, वीणा, मञ्जीरा आदि वाद्ययन्त्रों का प्रयोग खूब होता था। फिर भी यहाँ के लोगों ने व्याकरण शब्दकोष और भाषा विज्ञान के क्षेत्र में भी उन्नति अवश्य की थी। ‘गिलगमिश’ यहाँ का प्रसिद्ध महाकाव्य है जो बारह सर्गों में विभक्त है, विज्ञान के क्षेत्र में गणित का यहाँ जन्म हुआ और समुद्री मार्गों का व्यापार में प्रयोग हुआ, इसके कारण ज्यामिति शास्त्र का भी विकास हुआ। खगोल विद्या का विकास भी यहीं से आरम्भ हुआ माना जाता है।

महत्त्व—यद्यपि यह सभ्यता प्रसिद्ध बहुत है परन्तु फिर भी मानव कल्याण के लिए विशय लाभदायक नहीं हो सकी। यूनान ने इस सभ्यता से बहुत कुछ सीखा है। गणित, ज्यामिति स्थापत्यकला, विज्ञान आदि में विश्व और विशयकर यूरोप इस सभ्यता का सदैव आभारी रहेगा।

प्राचीन भारत (सिन्धु की घाटी) की सभ्यता

सन १९२२ तक भारतीय सभ्यता के सम्बन्ध में अनुमान के आधार पर यह समझा जाता था कि यह लगभग ३००० वर्ष पुराना है किन्तु भारतीय पुरातत्त्व विभाग के सर मागल के तत्त्वावधान में हड़प्पा^१ और मोहिनजोदो^२ की खुदाई करवा कर जो अवश्य प्राप्त किए उसके आधार पर अब भारतीय सस्कृति का रूप निश्चर गया है। अब भारत की प्राचीन सभ्यता कम से कम ५००० वर्ष पुरानी उस समय की धाँकी जाती है जब यह उन्नति की चरम सीमा पर थी। अर्थात् इसके विकास का आरम्भ तो और भी पुराना है। कुछ इतिहासकारों के मतानुसार अब इसे सिन्धु घाटी की सभ्यता कहना भी उचित नहीं है क्योंकि यह सभ्यता गंगा की घाटी,

१ हड़प्पा रावी नदी के तट पर पाकिस्तान की सीमा में है। सर्वप्रथम यहीं पर मुहरें प्राप्त हुई थी जिनके आधार पर खुदाई हुई।

२ मोहिनजोदो हड़प्पा से लगभग ४०० मील दूर (सिन्धु प्रान्त में)

* पाकिस्तान में ही है।

नागरिकों में दुबलता छा गई। तब असीरिया के लोग न डूह परास्त कर अपना शासन स्थापित कर लिया।

राजनैतिक व्यवस्था—इस सभ्यता के समय अनेक शासक हुए किन्तु स्पष्ट ज्ञान केवल हम्मू राबी के समय का ही मिलता है, औरों का प्रसंग उपलब्ध नहीं है। हम्मू राबी ने अपने शासन सम्बन्धी नियम अगोत्र की भाँति विनाल स्तम्भा पर अंकित करा दिए थे। शासन क्षेत्र में राजा ईश्वर का प्रतिनिधि माना जाता था इसीलिए साधारण जनता उसकी आज्ञाओं का पालन करना अपना पुनीत कर्तव्य समझती थी। शासन की दृष्टि से साम्राज्य, प्रांत प्रदेश आदि भागा में विभक्त था। शासन विधान के रूप में एक 'विधि-संहिता' भी विद्यमान थी जिसमें लगभग २८० नियम स्पष्टीकृत थे। उस समय का सामाज्य सिद्धान्त 'गठम शास्त्रम समाचरत के आचार पर था। जैसे यदि मकान गिरने से किमा का मृत्यु हुआ जाय तो मकान निर्माता राज प्राणदण्ड का अधिकारी होता था। याय का स्यापना के लिए कर्ष प्रचार के यायालय बनाये हुए थे और श्रमण बनिष्ट यायालय से उच्च दायातियों में पुन प्राथना (Appeal) भी होती थी। नियमों का पालन कठोरता से होता था और दण्ड भी भयंकर दिया जाता था। धूस लना अपराध था और उसका नियम दण्ड का विधान था।

सामाजिक व्यवस्था—यहाँ भी समाज में अनेक वर्ग थे किन्तु उनमें तीन प्रमुख थे, उच्च वर्ग (शमेल) मध्यम वर्ग (मुगकिनु) और निम्न वर्ग (अरतू)। निम्न वर्ग यहाँ भी दासों का होता था। उच्च वर्ग का राजनैतिक व सामाजिक विनाय अधिकार प्राप्त था। मध्यम वर्ग साधारणतया स्वतंत्र था परन्तु युद्ध में समय उसे सेना में सम्मिलित होना पड़ता था। यहाँ का पारिवारिक जीवन मुक्त था। स्त्री का सम्मान होता था और वह सम्पत्ति की स्वामिनी हो सकती थी। उस विवाह विच्छेद (तलाक) का भी अधिकार था। आचारज्ञान तथा पुत्रपत्नित्त ममत्त ज्ञान थे और कठोर दण्ड का भागी होते थे। समाज में अस्थायी विवाह पद्धति (Trial Marriage) भी प्रचलित थी जो मुनजमाना में प्रचलित भूता शास्त्री की भाँति होती थी। विवाह के अवसर पर कोई विनाय संस्कार नहीं होता था। स्त्रियों भी स्वतंत्र व्यवसाय कर सकती थीं। पुत्राप्तति न ज्ञान पर शासन का प्रयास भी था।

धार्मिक व्यवस्था—यहाँ ना नुमरियन लोगों का भाँति अनेक देवताओं में विश्वास करने थे। लगभग ६२ प्रकार के देवता थे जिनमें आकाश (अनु) मूष (शमस) चंद्रमा (ननर) और पृथ्वी (बन) मुख्य थे। राजा नगर का प्रतिनिधि देवता माना जाता था और शासनतया प्रत्येक परिवार का एक अलग देवता होता था। देवताओं की प्रतिमाएँ बनाई जाती थीं, उन्हें मन्त्रों में स्थापित किया जाता था और तब उनकी उपासना होती थी। तब दाता प्रथा बनि प्रथा आदि प्रचलित थीं। मरतुक देवालानिया का कामदेव था। अन्तर प्रेम का देवता था। ऐसी अवस्था में पुजारा और पुरोहित स्वामाजिक रूप में प्रथम हात में और पूजा

विधि के विनियम होते थे। उन्हीं की अध्यक्षता में धार्मिक वाय संचालित होते थे।

साहित्य और कला—इस क्षेत्र में अत्यन्त अदभुत बात यहाँ के विद्यालयों की है। सभ्यत विद्यापिया के पढ़ने के लिए विश्व की सबप्रथम पाठशाला यहीं स्थापित हुई थी। विद्यार्थी नरम चिबनी मिट्टी की स्लेटा पर लिखत थे और वणमाला का प्रयोग न जानने के कारण सवेता का प्रयोग करते थे। लेखका का समाज में बहुत सम्मान हाता था। खुदाई से प्राप्त एक विद्यालय के खण्डहर की भित्ति पर यह लेख मिला है कि “जो कुशल लेखक हैं वे सूप की भाँति चमकेंगे”। इस विद्यालय का विस्तार ५५ वग फीट है। उनकी लिपि में लगभग ३०० शब्द खण्ड के सवेत में और इसे ध्वयात्मक लिपि कहते थे। साहित्य में वे लोग अधिक रचि नहीं रखते थे फिर भी साधारण गति अवश्य थी। कला में वे निपुण थे। स्थापत्यकला का उदाहरण ‘जिम्पुरात’ य जिनकी मीनारा की ऊँचाई ६५० फीट तक होती थी। मूर्तिकला में वे हाथ नहीं बटा सके, मगीत कला में वे बहुत रचि रखते थे। इस क्षेत्र में बाँसुरी वीज मसक, तुरही, भापू डोल, वीणा, मञ्जीरा आदि वाद्ययन्त्रों का प्रयोग खूब होता था। फिर भी यहाँ के लोग ने व्याकरण, शब्दकोष और भाषा विज्ञान के क्षेत्र में भी उत्तति अवश्य की थी। ‘गिलगमिग’ यहाँ का प्रसिद्ध महाकाव्य है जो बारह सर्गों में विभक्त है, विज्ञान के क्षेत्र में गणित का यहाँ जम हुआ और समुन्नी मागों का व्यापार में प्रयोग हुआ, इसके कारण ज्योतिष शास्त्र का भी विकास हुआ। खगोल विद्या का विकास भी यहीं से आरम्भ हुआ माना जाता है।

महत्व—यद्यपि यह सम्यता प्रसिद्ध बहुत है पर तु फिर भी मानव कल्याण के लिए विशय लाभदायक नहीं हो सकी। यूनान ने इस सम्यता से बहुत कुछ सीखा है। गणित, ज्योतिष, स्थापत्यकला विज्ञान आदि में विश्व और विशेषकर यूरोप इस सम्यता का सदैव आभारी रहेगा।

प्राचीन भारत (सिन्धु की घाटी) की सम्यता

सन् १६२२ तक भारतीय सम्यता के सम्बन्ध में अनुमान के आधार पर यह समझा जाता था कि यह लगभग ३००० वर्ष पुरानी है किन्तु भारतीय पुरातत्त्व विभाग के सर भागल के तत्त्वावधान में हडप्पा^१ और मोहिनजोडा^२ की खुदाई करवा कर जो अवशय प्राप्त किए उसके आधार पर अब भारतीय सस्कृति का रूप निखर गया है। अब भारत की प्राचीन सम्यता कम से कम ५००० वर्ष पुरानी उस समय का प्राची जाती है जब यह उत्तति की चरम सीमा पर थी। अर्थात् इसके विकास का आरम्भ तो और भी पुराना है। कुछ इतिहासकारों के मतानुसार अब इसे सिन्धु घाटी की सम्यता कहना भी उचित नहीं है क्योंकि यह सम्यता गंगा की घाटी

१ हडप्पा रावी नदी के तट पर पाकिस्तान की सीमा में है। सबप्रथम यहीं पर मुहूर्ते प्राप्त हुई थी जिनके आधार पर खुदाई हुई।

२ मोहिनजोडा हडप्पा से लगभग ६०० मील दूर (सिन्धु प्रान्त में) पाकिस्तान में ही है।

सामाजिक व्यवस्था—उस समय कृषि जनता का मुख्य व्यवसाय था, गेहूँ और जौ बहुत उत्पन्न होता था फिर भी मासाहारी थे। सूती और ऊनी दोनों प्रकार के वस्त्र पहनते थे। आभूषणों का प्रचार था और बहुत सुन्दर सुन्दर आभूषण बनाए जाते थे। स्त्री-पुरुष सभी आभूषण धारण करते थे। उस समय के अलंकारों से भरे दो तीन घड़े प्राप्त हुए हैं। बाल सवारने की भी अनेक प्रकार की कलाएँ विकसित थीं। स्त्रियाँ अपना सिर ढका हुआ रखती थीं इसलिए उनके चेहरे का विद्यास की कला स्पष्ट नहीं दिखाई देती। पुरुष मूछ नहीं रगते थे किन्तु दाढ़ी बढान की प्रथा थी। उस समय बटन भी प्रयोग में आते थे जो ताँबा, राँगा आदि के होते थे। तीन दण्ड भी मिले हैं काजल का डिब्बियाँ भी मिली हैं जिनसे जात होता है कि आँखा की दृष्टि की रक्षा के लिए काजल का प्रयोग सभी नर नारी बहुतायत से करते थे। उबटन का प्रयोग भी किया जाता था। हाथी दाँत का काम भी होता था। समाज में सुईयाँ और मिलाई का प्रचार भी था और सीने की सुईयाँ भी होती थीं। आमोद प्रमोद के लिए खिलौने बनाए जाते थे और उनमें बलगाणी का अधिक प्रचार था। मिट्टी की टूटी हुई बलगाडियाँ बहुत मर्यादा में प्राप्त हुई हैं। पक्षियों के पालन की प्रथा भी थी। उनके पिंजरे और खिलौने भी प्राप्त हुए हैं। सामाजिक जीवन की अर्थ-व्यवस्था में तराजू एवं बाट की प्रथा भी विकसित हो चुकी थी। नागरिकों के मनोरंजन के हेतु गतरज चौपड आदि का प्रचलन था। संगीत कला का भी विकास हो चुका था, ढोल गुरगुडी (राजस्थान में इसे राई गुरगुरी भी कहते हैं) का अर्थ भी विशद अर्थपर पर बजाई जाती है) तथा ताशा का प्रचार था। अर्थ भी गावा में कभी कभी इसका प्रयोग होता है। राजस्थान में इसे अन्वीतागा (मजाक में पेटकूटा) कहते हैं जो शायद अरबी तागा का अपभ्रंश है। सम्भव है अरब में यह बाजा काम में आता हो और मुसलमानों के सम्पर्क से यहाँ आया हो। आर्थिक दृष्टि से ये लोग बहुत सम्पन्न थे। बाहर के देशों से व्यापार करते थे और रत्न, टीन, ताम्र आदि मगाते थे। तत्कालीन स्वर्ण मुद्राएँ और आभूषण इसके प्रमाण हैं।

धार्मिक व्यवस्था—उनके धार्मिक विश्वास क्या थे यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। न तो उस समय के कोई देवालय मिले हैं और न कोई और ऐसा प्रमाण। मूर्तियाँ अधिकांश खण्डित ही मिली हैं। अनुमान यह लगाया जाता है कि ये लोग शाकन धर्मावलम्बी थे और शिव पार्वती के उपासक थे। अनेक प्रकार की प्रतिमाएँ मिली हैं। एक प्रतिमा गिब की मानी जाती है वह नग्न है। सम्भवतः यह किसी विशेष मुद्रा में चित्रित है। इसमें तीन सिर हैं और तीन सींग। देवियों की प्रतिमाएँ भी बड़ी संख्या में मिली हैं। सम्भवतः शिव की प्रतिमा के साथ ही पार्वती की प्रतिमा ही होगी। पशुओं की प्रतिमाएँ भी मिली हैं जिनमें हाथी, भसा, बल मीठा आदि प्रमुख हैं। कदाचित् वर्तमान समय में जैसे दीपावली पर पशुओं की पूजा की जाती है उसी प्रकार प्राचीन काल में उन्हें देव रूप में प्रतिमा बनाकर भी पूजा जाता होगा। पशु मानव के लिए सहायक तो सदा से रहे ही हैं। कालांतर में वे ही पशु देवताओं के वाहन के रूप में स्वीकार किए गए हैं। पीपल का वृक्ष

सम्पूर्ण राजस्थान, यथात्र सिन्धु और गुजरात तक व्याप्त था। इसलिए इस प्राचीन भारत की सम्पत्ता बढ़ना ही उपयुक्त है। राजस्थान के उज्जैन नगर के छायाद भाग में हात ही की खुदाई के फलस्वरूप एक प्रमाण मिल है जो मोहिनजोदरो के प्राप्त अवशेषों के समकालीन अवशेषों के समान भी प्राचीन उत्पत्ति के हैं। अतः इस सम्पत्ता को हम प्राचीन भारत की सम्पत्ता ही कहेंगे। डा० राधानुभा मुन्शी का मत है कि हमारा भारत की सम्पत्ता विश्व की प्राचीनतम सम्पत्ता थी और अन्य विद्वान भी इस विचार से सहमत हैं।

नगरों की योजना और निर्माण—उक्त नगरों की खुदाई के फलस्वरूप प्राप्त अवशेषों से यह प्रकट होता है कि नगर किसी याजना के अनुसार बनाए गए थे। सड़कें पर अनेक चतुष्पथ हैं जो पूरे समकोण बनाने हैं। मार्ग और उपमार्ग (गलियारों) भी सीधे हैं तथा मोड़ पर समकोण बनाते हैं। मार्गों की चौड़ाई पूर्व-पश्चिम अथवा उत्तर-दक्षिण में है। प्रधान सड़क की चौड़ाई ३६ फीट है तथा दूसरी सड़कें १८ फीट १० फीट तथा ६ फीट चौड़ी हैं। भवन माधारणतया दो मंजिल के होते हैं और पक्की इटा के बने होते हैं। निम्न व्यक्तियों के मकान मिट्टी के बने होते हैं। स्तम्भ, रंगोई और नात्रिया की व्यवस्था भी उन भवनों में मिलती थी। स्तम्भ चौकार होते हैं। रंगोई के निर्माण विषय कुछ मालूम होता था। उनमें चूल्हों की सभी व्यवस्था थी कि एक ही द्वार में कई चूल्हों तैयार की जा सकें। दीवारों पर मिट्टी का प्लास्टर होता था (राजस्थान में जिसे 'गारा करना' कहते हैं) जिसमें नीली चिकनी मिट्टी पुराना भस्म आदि डालकर तैयार किया जाता है और कच्चे मकानों के दीवारों पर लमी का चूकाया जाता है) जिस पर गाबर रोपा जाता था और फिर खटिया में पुनः होती थी। तत्कालीन भवनों में गंगा पानी बाहर निकालने के लिए नात्रिया भी थी और उनका प्रयोग घर के नातो के मास्त्रों की नातो में और उम नातो के नगर की सभी नातो में सम्भव होता था और इस प्रकार समस्त नगर के गंगा पानी बाहर निकाला जाता था। वनमान समय की गटर प्रणाली उन्नीसवीं शताब्दी में बनी प्रतीत होती है। जिसमें यह सिद्ध होता है कि स्वच्छता और सफाई तथा स्वास्थ्य के प्रति उनका गहन सज्जन था। मकानों में खिन्कियाँ तथा मोहियाँ मिलती थी और लगभग हर भवन में एक कुछाँ भी मिलता था।

सावजनिक स्नानागार—सावजनिक स्नानागारों (Sweening Pools) की भाँति प्राचीन काल में भी सावजनिक स्नानागारों की व्यवस्था थी। इस स्नानागार का लम्बाई ३६ फीट चौड़ाई २३ फीट तथा ऊँचाई ८ फीट है। एका भाग स्नानागार मिला है जिसमें शीतल जल का प्रयोग था। गंगा पानी बाहर निकालने का भी व्यवस्था इसमें थी। इसमें चारा और आठ कमरे बने हुए हैं और प्रत्येक कमरे के साथ एक एक स्नानघर है। एक सामान्य भवन भी साथ में है जो २०० फीट लम्बा और ११५ फीट चौड़ा है। इसकी दीवारें पाँच फीट चौड़ी हैं। अनुमान किया जाता है कि या तो यह शिक्षा सम्पन्न व्यक्ति के भवन था अथवा वाद सावजनिक स्थान, जहाँ कर देने में दक्षता किया हुआ अनाज देने का सामान आदि।

सामाजिक व्यवस्था—उस समय वृषि जनता का मुख्य व्यवसाय था, गेहूँ और जौ बहुत उत्पन्न होता था फिर भी मासाहारी थे। सूती और ऊनी दोनों प्रकार के वस्त्र पहनते थे। आभूषणों का प्रचार था और बहुत सुन्दर सुन्दर आभूषण बनाए जाते थे। स्त्री-मुग्ध सभी आभूषण धारण करते थे। उस समय के अलंकारों से भरे दो तीन घड़े प्राप्त हुए हैं। बाल सवारण की भी अनेक प्रकार की कलाएँ विकसित थीं। स्त्रियाँ अपना सिर ढका हुआ रखती थीं इसलिए उनका केश विन्यास की कला स्पष्ट नहीं दिखाई देती। पुरुष मूँछे नहीं रखते थे किन्तु दाढ़ी बढ़ाने की प्रथा थी। उस समय बटन भी प्रयोग में आने लगे जो तावा राँगा आदि के होते थे। तीन दपण भी मिले हैं, काजल का डिब्बियाँ भी मिली हैं जिनसे नात होता है कि आँसुओं की दृष्टि की रक्षा के लिए काजल का प्रयोग सभी नर नारी बहुतायत से करते थे। उबटन का प्रयोग भी किया जाता था। हाथी दाँत का काम भी होता था। समाज में सुईयाँ और मिलाई का प्रचार भी था और सीने की सुइयाँ भी होती थीं। आमोद प्रमोद के लिए खिलौने बनाए जाते थे और उनमें बलगाड़ी का अधिक प्रचार था। मिट्टी की टूटी हुई बलगाड़ियाँ बहुत संख्या में प्राप्त हुई हैं। पक्षियों के पालन की प्रथा भी थी। उनके पिंजरे और खिलौने भी प्राप्त हुए हैं। सामाजिक जीवन की अथ व्यवस्था में तराजू एक बाट की प्रथा भी विकसित हो चुकी थी। नागरिकों के मनोरंजन के हेतु शतरंज चौपड़ आदि का प्रचलन था। संगीत कला का भी विकास हो चुका था ढोल, गुरगुड़ी (राजस्थान में इसे राई गुरगुरी भी कहते हैं) जा अब भी विशेष अवसरों पर बजाई जाती है) तथा ताशा का प्रचार था। अब भी गावों में कभी-कभी इसका प्रयोग होता है। राजस्थान में इसे अटवीतागा (मजाक में पेटकूटा) कहते हैं जो शायद अरबों ताशा का अपभ्रंश है। सम्भव है अरबों में यह बाजा काम में आता हो और मुसलमानों के सम्पर्क से यहाँ आया हो। आर्थिक दृष्टि से ये लोग बहुत सम्पन्न थे। बाहर के देशों में व्यापार करते थे और रत्न, टीन, ताँबा आदि भण्डारें थे। तत्कालीन स्वर्ण मुद्राएँ और आभूषण इनके प्रमाण हैं।

धार्मिक व्यवस्था—उनके धार्मिक विश्वास क्या थे यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। न तो उस समय के कोई देवानयन मिले हैं और न कोई और ऐसा प्रमाण। मूर्तियाँ अधिकांश खण्डित ही मिली हैं। अनुमान यह लगाया जाता है कि ये लोग शक्ति धर्मावलम्बी थे और शिव-पावती के उपासक थे। अनेक प्रकार की प्रतिमाएँ मिली हैं। एक प्रतिमा शिव की मानी जाती है वह नग्न है। सम्भवतः यह किमी विशेष मुद्रा में चित्रित है। इसमें तीन सिर हैं और तीन सींगें। देवियों की प्रतिमाएँ भी बड़ी संख्या में मिली हैं। सम्भवतः शिव की प्रतिमा के साथ ही पावती की प्रतिमा भी होगी। पशुओं की प्रतिमाएँ भी मिली हैं जिनमें हाथी, भैंसा, बल मीठा आदि प्रमुख हैं। कदाचित् वर्तमान समय में जैसे दीपावली पर पशुओं की पूजा की जाती है उसी प्रकार प्राचीन काल में उन्हें देव रूप में प्रतिमा बनाकर भी पूजा जाता होगा। पशु मानव के लिए सहायक तो सदा से रहे ही हैं। कालांतर में वे ही पशु देवताओं के वाहन के रूप में स्वीकार किए गए हैं। पीपल का बड़ा

श्रीर उस नमस्कार परती हुई महिमा की प्रतिमा भी महत्वपूर्ण है। उस समय घटियाल, बन्दर मय शक्ति की उपासना की भी प्रथा थी। गिर्वानग श्रीर मोनिपट्ट भी पर्याप्त मात्रा म मिल हैं। गिर्वानवती व ये लोग उपासक थ ही। अपन देवताओं की प्रतिमा व गामन नर्य करन की प्रथा भी उस समय प्रचलित था। एषी प्रतिमाएँ भी मित्री हैं। मूय की प्रतिमाएँ भी मित्री हैं। उस समय अय स्थानों म भी मूय पूजा प्रचलित थी। मूतका का दान-मन्सार लेता था। उनका भस्म बर्द घटा म मरी हुई मित्री है श्रीर गायन दफनान की प्रथा ना थी, एम भा कुछ अवशेष प्राप्त हुए हैं।

साहित्य श्रीर कला—इन नागरिका का लघन बना का पान था। परन्तु उनकी विधि का अध्ययन अभी तक सम्भव नहीं हो सका। यह चित्र विधि है। मुद्राशा पर लख अंकित हैं। कुन मिनाकर एम ३८२ मजत हैं जिनम यह विधि व्यक्त है। एम विधि म प्रथम पक्ति दाद श्राव म बाइ श्राव श्रीर दूसरी पक्ति दाद श्राव म दाद श्राव तानी प्रतीत जाता है। बम्बई व डा० हराम तथा बागी विश्व विद्यालय व डा० प्राणनाथ न इहे पता का प्रयास किया है परन्तु अभी व मजत नहीं हुए। चित्रकला म य लोग प्रवीण थ श्रीर गान्धियर ता दृग द्वा। यद्यपि गान्धियर प्रगति व प्रयत्न प्रमाण प्राप्त नहीं हैं किन्तु जा कुछ अवशेष प्राप्त हुए हैं व यह सिद्ध करन म समय है कि य एव बन्द उन्नत सम्यता थी श्रीर गिना गान्धियर प्रगति के सम्यता एक चरण भा आगे नहीं बढ़ सकती थी।

महत्व—एम सम्यता न भारत का अदनी सम्यता विश्व म अति प्राचीन सिद्ध करन म समय बनाना है। स्यालय बना श्रीर धम का महत्व सिद्ध किया है। एषी समुद्रत सम्यता बबन भयकर प्रत्य द्वाग ही गिनाग का प्राप्त हुई हागी एमा अनुमान है। इन अवशेषा म राजा गनिक शक्ति व अज्ञाता का गिनाग अभाव यह प्राट करता है कि ये लोग गान्धियर थे। सम्य तन्त्र मिन है किन्तु बबन भाव, तीर शक्ति श्रीर नभवंत तनसार म य लोग परिचित नहीं थ। इन प्रकार श्रापुनिक भारत का महत्व उचा करन बागी य हमारी भारतीय सम्यता थी।

चीन की प्राचीन सम्यता

चीन की प्राचीन सम्यता भी मौनिक रूप म विकसित हुई थी। यह भी नयी कार्तीय सम्यताशा म सम्मिलित है। ह्वागन श्रीर यागनाश्रीरयाग गरिताओं के प्रन्थ म सबप्रथम इमका प्राटभाव हुआ। यहाँ भी सबप्रथम नगर राया का स्थापना द्वारा मगटन स्थापित हुए थ। लघनकता भी चित्र श्रीर सक्तीं द्वारा विकसित हुई। राजनतिक धार्मिक तथा साहित्यिक लोको म भी य सम्यता निरन्तर विकसित हुई थी। भारतीय सम्यता की भाँति एम सम्यता का समय भी टीव रूप मे निश्चित नहीं किया जा सका है। इसका सन्धिस्त अध्ययन थव अगले पृष्ठीं में किया जायगा।

राजनतिक व्यवस्था—सबप्रथम नगर राया की स्थापना द्वारा प्रजातन्त्रात्मक

प्रणाली का ही प्रादुर्भाव हुआ था, किन्तु कालांतर में प्रभावशाली व्यक्तियों द्वारा एकाधिपत्य जमा लिया गया और अंत में साम्राज्य भी बन गया था। सम्राट ईश्वर के प्रतीक समझे जाते थे और इनकी इच्छा ही राज्य का नियम होनी थी। प्रशासन की दृष्टि से यहाँ भी प्रांत, जिले आदि विभाजन किए गए थे। प्रारम्भिक सामंत प्रथा भी दीर्घकाल तक यहाँ रही है। चीन में यह कहावत है कि ईसा से लगभग चार हजार वर्ष पूर्व यहाँ आदश शासक और आदश शासन व्यवस्था थी। प्राचीन राजवशा में शुंग वंश, चाऊ (चू) वंश, चीन (मीन) वंश आदि उल्लेखनीय रहे हैं। चीन वंश का प्रमुख सम्राट शीवांगटी था जिसने हूणा के निरंतर आक्रमणों से बचने के लिए प्रसिद्ध चीन की दीवार का निर्माण कराया। यह १५०० मील लम्बी है और दोहरी बनी हुई है। इसकी चौड़ाई २० फीट और ऊँचाई २२ फीट है। प्रत्येक १०० गज पर ४० फीट ऊँची मीनारों की व्यवस्था भी है। इस प्रकार राजनतिक क्षेत्र में प्राचीन सम्यता बहुत आगे बढ़ी हुई थी।

सामाजिक व्यवस्था—चीन का समाज प्रारम्भ से ही प्रजातान्त्रिक रहा है। वहाँ पितृ प्रधान परिवारों की प्रथा थी और स्त्रियों का सम्मान भी बहुत था। नागरिकों की कुमारावस्था पर बहुत ध्यान दिया जाता था और विवाह राज्य की देखरेख में नियुक्त अधिकारी द्वारा सम्पन्न हातों में। बहु विवाह और विवाहविच्छेद दोनों की प्रथा थी। समाज गतिप्रिय था। मनुष्य बनना समाज का आनन्द नहीं था। समाज की व्यवस्था के लिए नागरिकों में वर्गीकरण अवश्य था। मण्डारिन, कृषक, कारीगर, अधिकारी और व्यापारी पाँच प्रमुख श्रेणियाँ थीं, किन्तु ये जन्म जात नहीं थीं। इसलिए चीन में योग्यता ही प्रत्येक व्यक्ति या वर्ग के सम्मान की कसौटी रही है, जन्म नहीं। यहाँ का मुख्य व्यवसाय कृषि ही था परन्तु साथ में मछली मारना और व्यापार करना भी अधिक प्रचलित थे। घरों में महिलाएँ कातने, बुनने का काम करती थीं। रेशमी वस्त्र भी यहाँ तैयार होते थे। अगूर की शराब भी बनती थी। यह विदेशियों के सम्पर्क का फल था। जल घटों की प्रथा प्रचलित हो गई थी। इस प्रकार सामाजिक क्षेत्र में चीन बहुत आगे बढ़ा हुआ था।

धार्मिक आदर्श—पूजक पूजा यहाँ का मुख्य धर्म था। प्रकृति-पूजा भी प्रचलित थी। अनेक देवी देवताओं की भावना के साथ उन्हें प्रार्थना करने के लिये उपासना की जाती थी और बलि चढ़ाई जाती थी। धर्माधता और तंत्र, टोना आदि भी प्रचारित थे। कालांतर में चीन का धर्म कन्फ्यूशियस की विचारधारा तथा भारत के बौद्ध धर्म से प्रभावित हुआ जो अभी साम्यवाद के पहले तक विद्यमान रहा।

भाषा, साहित्य और कला—यहाँ की लिपि की कठिनाई के कारण लेखन कला दुर्लभ थी, किन्तु समाज में लेखकों का बहुत सम्मान था। सरकारी पदा पर ऐसे ही लोग चुने जाते थे जो कुशल लेखक हों। बाद में मन्त्री ली ने लिपि सुधार किया था। कागज का प्रचार भी हो गया था। पहले बास व लकड़ी द्वारा किन्तु बाद में रेशम के बने कागज का प्रयोग होने लगा था और बड़े बड़े ग्रन्थ लिखे गये

थे। यहाँ का गालिय भारत की भांति पदात्मक था। काव्य रचना अधिक होती थी। सीमा वहाँ का मुख्य कवि था। कनाक नाम में चीनी सम्मता कम नहीं थी। गणीत कना यूनानिया के प्रभाव में बहुत ही धारा बढ़ गई थी। उनका विश्वास था कि गणीत रचित जीवन व्यर्थ है। अन्तर कना के गुण उदाहरण तत्कालीन कना में मिले हैं। मित्रा के समशील बनने बनाना उनका विशेष कला थी। भारतमें म मात्र भी 'कानी मित्री' नाम का प्रयोग बहुनापत में होता है। कान्गुनियम की प्रतिमा और मस्तिष्क वास्तुशास्त्र का गुण उदाहरण है। उद्योग धर्म भी बहुत विकसित थे। रोम नाम वास्तु वागज धानि यन्त्रों का निर्यात भी होता था। मुद्रण, तथा कृतुवनुमा का आविष्कार भी यहाँ ही हुआ था। इगोविण विचारणा की भांति कई प्राय यहाँ मकविन हुए हैं। इस प्रकार चीन की प्राचीन सम्मता का स्थान विश्व के विश्व महत्वपूर्ण है।

यूनान की प्राचीन सम्मता

ईसा म १५०० वर्ष पूर्व यूनान जगती गयी थी। कदम ईसा म १५०० वर्ष पूर्व यूनानी सम्मता का प्राग्भाव हुआ है। अति प्राचीन नान हुए भाषाचार्य नाम सम्मता के अर्थ में क्रम है। इस सम्मता का जन्म इन बातों में प्राय जाति के लोग ही थे। पत्रक नाम धर्मगोत्र जीवन व्यतीत करने थे। नाम में कृषि कोषों को जान पर स्थायी निवास बन मय और यहाँ सम्मता का विकास नान गया।

राजनैतिक व्यवस्था - नगर राज्या (City States) की स्थापना नाम सम्मता की विश्व को प्रमाण न है। यहाँ का शासन-व्यवस्था जनत प्रीय था और नागरिकों को अधिक म अधिक अधिकार प्राप्त थे। शासन धर्म काय का समितियाँ की महायुक्त द्वारा करता था। एक समिति जाति के विवाह और मय का निणय करती था और दूसरी समिति युद्ध के विषय में परामर्श करती थी। विशेष नियमों का निर्माण नान तक परम्परायें ही विधि के समान समझा जाता था। अध्ययन आरम्भ होने तक जा नियम बनाय के कान्गुन बुद्धि धारा का कटाघ करार जात थे और आरम्भ्यता होने पर मुनाय जात थे। कानान्तर म यूनान १२ वास्तु विन स्वतंत्र राज्या में गणित न गया और ये राज्य धर्म धर्म शासन चरान गये। किन्तु धर्म समय बाद पुन मय बनना आरम्भ हुआ और स्थायी और लयम के मय वृद्ध अधिक प्रभावशाली हो गये।

लयम में एक लोकप्रिय मस्था थी जिसमें प्रत्येक वयस्क पुरुष का सम्मता प्रदान की गयी थी। एक वर्ष में इसका चारों ओर अधिकार नुलाय जात थे और इस मस्था के प्रस्ताव ही राज्य के नियम बनते थे। कार्यकारिणा के रूप में एक नाम अधिकारियाँ का मन्त्रीमण्डल होता था जो कदम एक वर्ष के नियम बनता था। इस प्रकार लगभग प्रत्येक नगर राज्य में एसी ममा होती थी। याग्यता के अनुसार सरकारी नियुक्तियाँ होती थी और निष्ठा पर ध्यान दिया जाता था। स्पाटी

इसके विपरीत कुलीन राजतंत्र और सैनिक शक्ति का गढ़ बन गया था। वहाँ अनुशासन कठोर था। शिक्षा का महत्त्व था और वह जीवनोपयोगी व्यवहारिक शिक्षा का। लड़कियों की शिक्षा पर भी ध्यान दिया जाता था। परन्तु फिर भी कला, साहित्य आदि में स्पर्धा अधिक उन्नति नहीं कर सका। दीघकाल तक स्पर्धा और एथेस का सघन भी घातक सिद्ध हुआ और सम्यता की प्रगति में एक कठिनाई बना रहा।

सामाजिक व्यवस्था—यूनान की सामाजिक व्यवस्था में दास प्रथा का बड़ा भारी कलक माना जाता है। उस समय वहाँ उच्च कुलीन मध्यम वर्गीय और दास तीन श्रेणियों के लोग रहते थे किन्तु अधिक महत्त्वा तीसरी श्रेणी के लोगों की थी। समाज में महिलाओं को समान अधिकार नहीं थे वे परदा करती थी। वे लोग भूमि से कुआ खोदकर जल निकालना नहीं जानत थे। दासों के साथ बड़ा अत्याचार करते थे इसीलिये लगभग दो चार वर्ष में दासों की मृत्यु हो जाती थी। समाज का सारा कार्य दास ही करते थे। इसका प्रभाव यह हुआ कि प्रथम दो वर्ग दासों पर निर्भर रहते रहते उन्हीं पर आश्रित हो गये। यहाँ का साधारण व्यवसाय कृषि करना ही था फिर भी उन्होंने उपनिवेश बनाकर व्यापार भी विकसित किया था। शराब तेल (जतून), धातु तथा मिट्टी की चीजें आदि निर्यात करते थे। इस प्रकार समाज व्यवस्थित तथा धन धाय से सम्पन्न था। परिवार का समुचित महत्त्व माना गया था। यहाँ बहुत पतिव्रता की प्रथा नहीं सी थी।

धार्मिक आदर्श—यहाँ भी प्रकृति पूजा प्रचलित थी। अपने देवताओं में यह लोग अगाध श्रद्धा रखते थे और उन्हें प्रसन्न करने में रत रहते थे। नास्तिक दण्ड का भागी समझा जाता था उन्होंने अपने देवताओं के स्वरूप की कल्पना मानव के अनुरूप ही की थी। भविष्यवाणियों में वे विश्वास करते थे जो (Oracle) अरिक्ल स्थान पर होती थी। पुनर्जन्म के सिद्धांत में भी इनका विश्वास था। वे मानते थे कि यहाँ इस जन्म के कर्मों के अनुसार परलोक बनता या विगड़ता है। जीयस कपोलो आदि उनके मुख्य देवता थे।

साहित्य, कला और विज्ञान—साहित्य और भाषा का विकास इस सम्यता की विशेषता है। यहाँ अद्भुत इतिहासकार दाशनिक, वैज्ञानिक और यात्रायात्रा उत्पन्न हुए हैं जिनका आज भी समस्त विश्व श्रेणी है। कवि होमर प्रथम महाकाव्य का रचयिता था। 'इलियड' और 'ओडेसी' (Illiad and Odyssey) उनके सुविख्यात काव्य हैं। सोफोक्लीज और एरिस्टोफंस बहुत उच्चकोटि के नाटककार हुए हैं। हिमाच्छादित ओलिम्प पर्वत के मनोरम दृश्या से ही इनकी काव्य सरिता और भाव लहरी प्रेरित हुई है। नागरिकों को लाभाचित करने के लिए रामभक्त की व्यवस्था भी थी। हिरोडोटस का नाम इतिहासकारों में मुख्य है। प्रसिद्ध दाशनिक मुकरात यूनान का ही संपूत था। अरस्तु और अफनातून उसी के शिष्य थे। इन्होंने गिन्या, राजनीति, दशन साहित्य काय समाजशास्त्र आदि विभिन्न विषयों पर अपने मौलिक विचार व्यक्त किए हैं जो आज भी अध्ययन किये

समानता के आधार पर संगठित हुआ है किंतु फिर भी राजनतिक क्षेत्र में परिवर्तन होत रहने के कारण प्रजातन्त्र से आरम्भ होकर राजतन्त्र प्रणाली का विकास हुआ और अन्त में खलीफा वगानुगत के सिद्धांतानुसार शासन करने लग्ये । खलीफा धर्म एवं राजनीति का सर्वोच्च होता था । कुरान की आज्ञाएं उसके लिये माय होती थीं । उस समय स्थानीय, प्रांतीय, और संवदेशीय प्रशासन का विकास हुआ । प्रशासन की विभिन्न शाखायाँ—पाय, पुलिस यातायात आदि का संगठन हुआ और डाक चौकी का संगठन भी किया गया जो बहुत सफल रहा । सड़क, भवन, बाग आदि बनवाये गये । कृषि पर विशेष ध्यान दिया गया और सिंचाई के साधन उपलब्ध किये गये । व्यापार की सुविधा के लिये नये नगर बने । इस प्रकार राजनतिक दृष्टि से विकास हुआ था ।

सामाजिक व्यवस्था—जसा ऊपर कहा गया है मुस्लिम जगत की सामाजिक समानता आरम्भ से ही अत्यन्त सम्यतायाँ के लिये आदेश रही है । फिर भी सम्पन्न और धनी लोग कुछ विशेष अधिकारों में युक्त थे, जैसे घोड़े की सवारी आदि । महिलाओं के लिये परदा प्रथा थी तथा रंगीन वस्त्र धारण करती थी । बहु विवाह चार तक सीमित था और विवाह विच्छेद प्रथा प्रचलित थी । मनोरंजन को महत्व दिया गया था और संगीत, नायरी कुश्ता, गिहार आदि प्रमुख स्रोत समझ गये थे । आर्थिक जीवन को समुन्नत बनाने के लिये टूटने स्थानों पर इवाचकियाँ लाई गई थी । जल घड़ी का प्रयोग भी आरम्भ हुआ था । बस्ती और आभूषण का बहुत प्रयोग होता था । यहाँ का सूती और ऊनी वस्त्र विख्यात था । अनेक नगर पीनाद के काम, काच चीनी के बस्ती गन्त तन, द्रव्य आदि की उत्पत्ति के केंद्र बन गये थे । चमड़े का काम भी यहाँ बहुत अच्छा होता था । यहाँ का शराब शक्त के रम प्रसिद्ध थे । इस प्रकार सामाजिक और आर्थिक जीवन शांत और समृद्धिशील था ।

धार्मिक दशन—आरम्भ में समस्त दशन कुरान तक सीमित था किंतु बाद में कट्टरता के कारण कठिनाइयाँ उपस्थित हो गई । अल्लाह के सिवा और कोई पूज्य नहीं है और मुहम्मद साहब उसके पैगम्बर हैं—यह मूल मान्यता थी और प्रत्येक मुसलमान के लिये पाच काय—कलमा नमाज रोजा, जकात और हज—आवश्यक थे । कालांतर में शिया और सुन्नी के दो वर्गों का विकास हुआ और सूफी सम्प्रदाय भी चल पडा । यह रहस्यवादी दशन है । इस्नाम पर ईसाई तथा अत्यन्त धर्मों का प्रभाव हुआ है ।

साहित्य, कला और विज्ञान—इस सम्यता के क्षेत्र में अनेक स्कूल और कालज स्थापित किये गये थे और इनके विश्वविद्यालय अत्यन्त विश्वविद्यालयों में अधिक उन्नत थे । बगदाद, काहिरा आदि शिक्षा के केंद्र थे । इन विश्वविद्यालयों में प्रत्येक में १० हजार से १२ हजार तक विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते थे । विदेशों के विद्यार्थी भी यहाँ शिक्षा लेने आते थे । अरब सम्यता में काव्य और कहानी साहित्य की प्रचुरता है । इन्होंने इन्होंने यहाँ का प्रसिद्ध कवि था और मुरा, मुन्सी और

सगीत से उस स्नेह था। फिरलौरी का 'गाहनामा' उच्चकोटि की रचना है। उमरगपव्याम की शगड्या और सानी की रचनाए मुत्तर हैं। वास्तुकला म यहाँ बहुत उन्नति हुई थी और अनेक कलियाँ विकसित हुई। यहाँ क कलाधार पत्थर की जाली काटकर अय अनेक प्रकार की कारीगरी की वस्तुए बनाते थे। विज्ञान क क्षत्र म उहने अच्छी उन्नति की थी। अक दहने भारत म सीख थ। गणित, ज्योतिष और चिकित्सा शास्त्र म उनका ज्ञान प्रगमनीय था। शरीर क ज्ञान क साथ कुछ आचरण म भी किए जात थ। कागज का आविष्कार चीन म हुआ था परन्तु उमम मुघार अरब लोग न किया और यहीं म यूरोप म कागज पहुँचा था। मिर्चई क साथ कृषि मुघार क लिए खात्ता का महत्व म जानत थ। भूमि और बाज का मूल रखना तथा बनमा द्वारा विभिन्न पत्त पीधा का समन्वय और विकस करना और पत्त पुण लगाना इह मूल आना था।

महत्व—यद्यपि अरब सभ्यता म मौलिकता का अभाव है किन्तु फिर भी विभिन्न सभ्यताओं का समन्वय करत हुए इहने स्वतंत्र सभ्यता का विकास किया है तथा परोक्ष रूप म यूरोप की जाग्रति म बहुत महत्वपूर्ण हाथ बटाया है। इगलिए अरब सभ्यता का महत्व पूव और पश्चिम क आत्मान प्रज्ञान क माध्यम की दृष्टि स और भी बत जाना है।

मध्यकालीन यूरोप की सभ्यता

मन् १०० ई० स तत्र लगभग मन् १५०० ई० तत्र का युग यूरोप म मध्य युग कहताता है। एम एन हजार वष क समय म पत्तन १०० वष अराजकतामय थ और तप १०० वष सामन्तवात् की प्रधानता थ। इहने अिना यूरोप का एन गई गतिन इस्लाम का भी सामना करना पत्त। कात्तत्र म ईगई और मुमनमाना क बीच अन्तम क अधिकार क लिए युद्ध हुए जा 'धम युद्ध कहतात है। वात्त म पाप की गतिन मायम बग क विकास तथा नए आविष्कारों क कारण सामन्तवात् भी समाप्त ना गया। इस समय त्रिधा का पुनरुद्धार हुआ और यराप का नवीन इतिहास प्रारंभ हुआ। फिर भा पूण परिवर्तन प्राप्त की प्राति क कारण हुआ। यहाँ एम कवन मध्यकालीन यूरोप की सभ्यता की प्रमुख त्रिपताओं का अध्ययन करेंगे।

राजतंत्र व्यवस्था—इम समय सामन्तवात् का जार था तन्त्रिण राज्य न कत्रीय गतिन बत्तर सामन्ता का नियन बनान ना साथ किया। यद्यपि सामन्तवात् की समाप्ति ता प्राप्त की प्राति स हुई था परन्तु एगवा पत्तन मध्ययुग म ही आरम्भ हा गया था। मत्र राज्या में समान नामन याय और कर व्यवस्था स्थापित की गई थी। एगत्त और स्विट्जरलंड म एमी समय प्रजातन्त्रवात् की नीन खानी गई थी। निरकृत्त नामक एकी मिद्धात्त का सहारा लत थ। इम प्रकार राजतंत्र क्षत्र मे एम युग म राजतन्त्रात्मक सामन्तिक और अत्त म जनतन्त्रात्मक प्रजातंत्रियाँ स्थापित हुई जा आज तक चली आ रही हैं।

सामाजिक व्यवस्था—इस समय का समाज अनेक वर्गों में विभाजित था। उच्चवर्गीय लोग अधिक सम्मान पाते थे। वैसे कृषक और श्रमिक सामान्य तथा पादरी तीन वर्ग थे किंतु चौथा वर्ग बुजुर्ग (Bourgeoisie) और विकसित हो गया था जिनकी सख्या व्यापारिक क्षेत्र के नगरों में अधिक थी। समाज में मध्यमवर्ग का महत्व बढ़ रहा था। ये राजा के समक्ष और सामन्तों के विरोधी थे। बाद में शासन में भी हिस्सा मागने लगे। पादरी बढ़ रहे थे और सामन्त निबल हो जा रहे थे। समाज में श्रमिक शक्ति का आरम्भ भी उसी युग में हुआ। व्यापार और उद्योग की उन्नति ने यूरोप के गान और धन की वृद्धि की और सभ्यता के प्रसार का सरल बनाया। नये नगरों की स्थापना हुई। बैंक, मुद्रा बीमा, ऋण आदि का प्रचलन हुआ। श्रमिक और व्यापारियों के मध्य बने। कृषि फिर भी जीविका की मुख्य आधारभूत थी। यातायात के साधन कम थे और मार्ग में लुटारों का भय था।

धार्मिक आदर्श—इस युग में जनता का विश्वास था कि विश्व का मजबूत बनाने एक ईश्वर ही है और पृथ्वी पर पाप ही उसका प्रतिनिधि है। परंतु यह अंध विश्वास अधिक समय तक न चल सका। पाप का सम्मान कम होने लगा और जनता स्वतन्त्र धार्मिक विचार करने लगी। इस युग का दार्शनिक पाण्डित्यवाद का था जिसका आधार अस्तित्व और सेंट आगस्टाइन थे। अरबी और हिंदू दर्शन भी यूरोप में प्रचलित हुए और इस समय यूरोप में अनेक दार्शनिक उन्नत हुए।

साहित्य, कला और विज्ञान—इस युग में शिक्षा का क्षेत्र विस्तृत हो गया था। छात्र और पाठगालों गाना की सख्या बढ़ रही थी। ग्रामफोन और कम्पोजिटिव विद्यालय इसी समय स्थापित हुए थे। परिसर विश्वविद्यालय धर्मशास्त्र के लिए ही खोला गया उसमें कला, कानून, धर्म और चिकित्सा की चार फकल्टी थीं। १५वीं शताब्दी में यूरोप में लगभग ७० विश्वविद्यालय थे। गिनना के उद्देश्य परिवर्तित हो गये थे। कक्षाओं में छात्रों की उपस्थिति नहीं होती थी। व्याकरण, तर्क गणित, संगीत आदि अनिश्चित विषय थे तथा परीक्षाएँ होती थीं। इस युग में प्रणय और बीरता से सम्बन्धित साहित्य का सृजन हुआ और लोक कथा साहित्य की वृद्धि हुई। इतिहास भी लिखे गए। शिक्षा काय साधारणतः चर्च में होता था और नतिक शिक्षा पर अधिक बल दिया जाता था। छ वष के अध्ययन के पश्चात् मास्टर की उपाधि मिलती थी। समय समय पर विषय पर शास्त्राध्यक्ष होते थे। छात्रों पुस्तकों के धर्मात्मा में प्रोफेसर के व्याख्यान अधिक महत्व के होते थे।

कला का क्षेत्र भी प्रभावित हुआ। नगरों की स्थापना से स्थापत्य कला विकसित हुई। भव्य प्रासाद व रम्य गिरजाघरों का निर्माण हुआ। रोमनस्क और गोथिक दोनों शैली की कला आग बढ़ी। गिरजाघरों की मेहरान तथा ऊँची मीनारें इसी युग की प्रतीक हैं। चित्रकला और संगीत कला में भी प्रगति हुई। मूर्तिकला भी निखरी और देवताओं के साथ मानव के दैनिक जीवन का चित्रण भी शक्ति

म होने लगा। रगोन बीच की गजावट इस युग में प्रारम्भ हुई था।

अरब लोहा व मध्यक में विज्ञान में अनुगमन प्रारम्भ हुई। पहले यूनानी बचानिक पुनरा का अनुवाद किया गया। फिर भारत की दामन एव मध्या (हिन्दु) पद्धति प्रनार्द गई। बीजगणित, मगत नीतिक विज्ञान में प्रगति हुई। तद्दर्शी गताली में नमारेरियम में भार और गिरत वात पत्तियों पर प्रय किया। चक्षु का आविष्कार इस युग की दन है। चिकि गा की पद्धति नावप्रिय बनी और जादू टोना का प्रभाव हटन लगा। बक्त इस समय का मयस अधिक प्रसिद्ध बचानिक या उयन प्रयाग का स्थान विज्ञान में सर्वोच्च टर्राया। इस युग में मगीत वी घनी बनता प्रारम्भ हुआ। फारम में पवनचरता मीमन व वां वम्न वूनन की मगीत का आविष्कार हुआ। गारम और बरून क आविष्कार न गामता की गकिन का मन्त्व कम कर दिया। मी प्रकार मध्य युग में व्यापार की उदि में वुनुबनुमा द्वारा ज्ञान का उपयोग हुआ।

महत्व—वासाव में म अन्वयार युग कहा गया है व उचित नहीं है। मी युग में प्राचुनिक युग का ममारम्भ हुआ। पूर और पचिम का मध्यक स्थापित कर इसी युग में मानव समाज का विस्तार किया। सामाजिक, आर्थिक धार्मिक आग वन गए। शिक्षा में उन्नता आद। म प्रकार मध्य युग यूराप व इतिहास में वदुन महत्पूर्ण और मयान् परिवर्तनकारा सिद्ध हुआ।

अन्वयार के लिए प्रदन

- १ मध्य युग की सभ्यता का विनोपताओं का उल्लेख काजिए।
- २ रोम की सभ्यता, अरब सभ्यता, यूनान की सभ्यता तथा चीन की सभ्यता पर छोटे छोटे निबन्ध लिखिए और किसी एक पर विस्तार लिखिए।
- ३ नदी बालीन सभ्यताओं में प्राय किस सभ्यता से अधिक प्रभावित बंधों? सविस्तार लिखिए।
- ४ मिश्र सभ्यता और तिब्बु घाटी की सभ्यता की तुलना कीजिए।

तृतीय अध्याय

पूर्व औद्योगिक आर्थिक संगठन का रूप

प्रस्तावना—वर्तमान मध्य युग का आर्थिक समूहन हमारे सामने है और इसके गुण और दोषों का सीधा प्रभाव प्रत्येक नागरिक स्वयं अनुभव करता है। परन्तु यह व्यवस्था वास्तव में औद्योगिक क्रान्ति की देन है जो अठारहवीं शताब्दी में हुई। इससे पूर्व समाज का आर्थिक गठन किम प्रकार था, उसमें क्या अच्छाई और बुराई थी, यह एसा विषय है जिस प्रत्येक विचारशील व्यक्ति समझना और जानना चाहता है। इसलिए हम पूर्व औद्योगिक आर्थिक संगठन के रूप का संभवतः पूरा अध्ययन करने का चेष्टा करेंगे।

प्रारम्भिक जीवन—सबप्रथम मनुष्य प्रकृति का दान था जो कुछ उसे प्राप्त होता था उसी में जीवन निर्वाह करता था। यह तो सच है कि मानव की मौलिक आवश्यकताएँ, भोजन, वस्त्र और निवास प्रारम्भ से ही प्रधान रही हैं। इनकी पूर्ति मानव उपलब्ध उपकरणों में ही करता था। भोजन के लिए बन्, मूल, फल आदि का आश्रय लेता था। वस्त्र के लिए बरकल तथा मत् पशुओं की खाल का उपयोग करता था और निवास के लिए कभी पट के कोटर तो कभी गुफाओं में शरण लेता था। प्रकृति धीरे धीरे जब मानव को बुद्धि का सहारा मिला तो वह सोचने विचारने तथा और साधना की उत्पत्ति और खोज करने लगा। भोजन के लिए गिकार करने लगा, चमड़े का उपयोग अधिक मात्रा में सम्भव हुआ और साथ ही गिकार की कठिनाई से उन समूह के लाल भी सम्भव में आने लगे। इन प्रकार प्रारम्भिक जीवन सहयोग में विकसित हुआ और मानव-समाज स्थापित हुआ। सब लोगों में श्रम में प्राप्त वस्तुओं पर अधिकार भी समान ही होता था इसलिए इस अवस्था को कुछ लोग 'आदिम साम्यवाद' की मना देते हैं। परन्तु यह अवस्था दीर्घ काल तक न चले सकी। मानव स्वार्थी है। यह प्राप्त चीजों के संग्रह की भावना उत्पन्न हुई और इसी समय से सम्पत्ति और संपन्न भी प्रारम्भ हो गई। वस्तुओं का आदान प्रदान प्रारम्भ हुआ। इसी समय पशुपालन की प्रथा प्रचलित हुई। सम्भव है प्रारम्भ में पशुपालन एक मनोरंजन का साधन रहा हो परन्तु शीघ्र ही यह एक आर्थिक साधन के रूप में परिवर्तित हो गया। पशु समाज का धन बन गया। उसका भाव एक चमड़ा उपयोगी था। बाद में पशु बग आवागमन के साधन के रूप में भी काम में लिया जाने लगा। दूध, घी आदि का प्रयोग बहुत समय पश्चात् प्रारम्भ हुआ। भारतवर्ष में असेम आदि प्रांतों में आज भी पशु केवल मांस के लिए पाले जाते हैं। उनका दूध का उपयोग नहीं किया जाता। तत्पश्चात् पशुओं का सर्वाधिक उपयोग कृषि के लिए किया जाने लगा।

कृषि जीवन—कृषि के आविष्कार ने मानव जीवन में परिवर्तन कर दिया।

अब तब मनुष्य चरागाहा पर निभर रहता था और आवश्यकतानुसार एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाता करता था। कृषि न जीवन में स्थिरता प्रदान की। भूमि अन्न उत्पत्ती स्थायी सम्पत्ति बन गई और इसका भी सुविधानुसार धान प्रदान, अन्न विपन्न प्रारम्भ हुआ। अब भोजन की दृष्टि से तथा पशुधरा व चरागाहा का प्रारंभ वह निश्चित हान लगा और मशहू की आन्त पटन लगी। ब्यापि अनावृष्टि या अतिवृष्टि के कारण पसल हाथ न लगन पर अन्न सामने सजट उगमिथन हान की समावना तो फिर भी रहती था। मानव समूह मिन जुनतर मन्थोग में स्थायी निवास करने लग और गाँव बस गए। इस समय बन्ना कौचन का विकास हुआ। मिट्टी का उपयोग बन्ना पगम बनन और इट्टे बनाई जान लगीं। वस्त्र बनना प्रारंभ हुआ। लकड़ी का उपयोग भी बढ़ा। कृषि के लिए नुसीती तकती जिम टा' (Hoe) कहा जाता है या हन वह मकत है भूमि को उपयोग बनान व लिए काम में आई जान लगी। म्मा क माथ माती और लुनर क परमाय विकमिन हुआ। तत्कालीन ग्राम्य जीवन इस दृष्टि में स्वाधिन हान थ। प्रत्येक ग्राम में गाना जोहार चमार, कुम्हार धारा, नाद तती हरिजन (भगो), महाजन ग्राहण और राजपूत आदि प्रत्येक व्यवसाय व व्यक्ति हात और परम्परागत काय कुशलता उनकी विपता हानो थी। इसी प्रकार दाई वध, पण्डित आदि भी गाँव में रहन थ। इनके व्यवसाय बन्ना मन्त्वपूण हान थ परन्तु फिर भी मयका जीवन गाना और सरल होना था तथा एक दूसरे की सहायता के लिए मन्त्र तन्त्र रहन थ। इस समय तक का आर्थिक समकल टोम था अर्थान मूय प्रथा (Price system) नहीं था। प्रत्येक व्यक्ति को अपना काय करने के उपनदय में अन्न मिनता था जा जानन की आधारभूत आवश्यकता थी। इसलिए कीमता व घटन उन्न का चिन्ता नहीं था। साय ही आज की भांति गिनि वराजगारी का समस्या भी नहीं थी। उन्तरणाथ मन्ति एक लुहार व चार पुत्र है ता उनक लिए गाव चार भागा में बट जाना था फिर यदि चारा में म बवन एन हा व्यक्ति के पुत्र हुआ है ता समस्त गाँव फिर एक ही लुनर की मवा में रहता था। यही प्रथा सार व्यवसाया में प्रचलित था। ग्राम छाग हान की अवस्था में एक से अधिक ग्राम मिनवर भी यन् व्यवस्था रहन थ। वस्त्र निर्माण के लिए कान्ती और जुनाह भी प्रत्येक ग्राम में हान थ।

थाडे समय बान् धानुग्रा का प्रयाग किया जान लगा। गाँव जम्ना और इसस मिथित पीतन का प्रयाग भी प्रारम्भ हुआ। इसके उपयोग से मानव अच्छा कृषक और सफन गिकारा बना। धानुग्रा के फन लकड़ी पर लगाकर उमन न्न पन लिए और इसी प्रकार गिकार के लिए बलन बरछी का आविष्कार किया। अच्छ बतन बनाकर भाजन पकाना मीमा और धारे धार साना, चाँगा आदि धानुग्रा का जान होन पर हस्तकता में उन्नति करने लगा। इसलिये समाज में सम्पत्ति का प्राषाय हुआ और मनुष्य के लिए काम करने के भाग गुन गए। हस्तकौशल और गित्यकला के विकास के कारण सामाजिक जीवन में विनिमय की आवश्यकता बढ़ता गई और व्यापार धपना मन्त्व बन्ना लगा। प्रारम्भ में ता उत्पादक स्वय ही अपना

आत के बढ़ते में आवश्यक वस्तुएँ लाया करता था, किन्तु इनकी संख्या बढ़ने से तथा जल्द बाने व्यक्ति आवश्यकता के समय न मिलने की कठिनाई ने आधुनिक व्यापार प्रथा को जन्म दिया। अब उत्पादन की वस्तुओं का एक निश्चित स्थान तथा उमक व्यापार के लिए निश्चित व्यक्ति होने लग गए। दूरस्थ विभिन्न ग्रामों की सुविधा के लिए प्रति सप्ताह हाट लगत थे। इनमें थ वस्तुएँ आती थी जो साधारणतया ग्रामों में उपलब्ध नहीं होती थीं। अच्छी वस्तुएँ, चाँदी सोने की चीजें सुन्दर वस्त्र अच्छी जाति के पशु आदि इन सम्मेलनों में आते थे और खूब प्रय विप्रय होता था। मेला की प्रथा भी इसी युग में चली और कुछ लोगों ने यही अपना व्यवसाय बना लिया। लाभ के स्थान से अच्छी वस्तुएँ सपह कर आवश्यकता के स्थानों पर पहुँच कर उन्हें बेच देना और लाभ से जीवन निर्वाह करना उनका मुख्य उद्देश्य बन गया था। पशुओं का उपयोग आवागमन के साधनों के लिए होता था। प्राचीन समय में बल लादने वाले बजारा बहनाते थे और यह उनका प्रमुख व्यवसाय होता था। इन समूहों को बालद भी कहा जाता था। फिर सामन्तवादी युग में व्यापारी वर्ग की प्रधानता बढ़ गई। धीरे धीरे बहुपत्न्य धातुओं का प्रयोग बन्द लगा और शक्ति का महयोग से व्यापारी वर्ग ने आवागमन के साधन मान और मजदूरी का निर्माण करवाया। अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक अभी पद्धति चली रही। तत्पश्चात् रेलगाड़ी के आविष्कार ने जन जीवन में पुनः शक्ति उत्पन्न कर दी।

इस समय दास प्रथा भी बहुत महत्वपूर्ण थी। कृषि के कार्य में बंसे अनेक सदस्यों की उपस्थिति हिनकर जाती है और सम्भवतः इसी आवश्यकता ने दास प्रथा को जन्म देकर स्थायी बनाया था। प्रय वस्तुओं का भाँति दास भी प्रय विप्रय और विनिमय की वस्तु समझ जाते थे और स्वामी हर प्रकार से उनके अधिकारों को हानि करती थी। सामन्त प्रथा ने इसे और भी बलवान बना दिया। सामन्तों के लिए यह दास वर्ग कृषि करता था, युद्ध के समय जीवन लगाता था और शांति के समय स्वामी की तन मन में सेवा कर अपने को उदात्त समझता था। उनका पारिवारिक जीवन भी स्वामी की इच्छानुसार चलता था। उसका समस्त परिवार स्वामी की सेवा में रत रहता था। स्वामी की सत्तान के आदी व्याह में दास दहेज में दिए और नियो जाते थे। भारतवर्ष में आज भी राजवाडों में दहेज में हाथड़ी (नास कढ़ाई) और बाँद (दास पुत्र) देने की प्रथा प्रचलित है। माकन के मतानुसार सामन्तवादी युग में सामन्त और दास के दो वर्ग थे और औद्योगिक युग में अत्र नवीन वर्ग उत्पन्न हो गए जिन्हें श्रमिक और पूँजीपति कहा जाता है। सर्वोद्योगिता इन दो वर्गों को 'हज़र और मजूर के नाम में सम्बोधित करते हैं। इस प्रकार औद्योगिक युग के पू्व समाज का संगठन किसी याद पर आधारित नहीं था। बेचत आवश्यकता और व्यवस्था के नाम पर कुछ समय व्यक्तियों ने परम्पराएँ चला दीं या यह युग के प्रारम्भ होने तक चलती रही।

व्यापारिक स्वाश्रय—यत्र युग क आरम्भ म पहूत आर्थिक व्यवस्था स्वाश्रयो थी, यह कहा जा सकता है। प्रत्येक काल अपनी आवश्यकताओं को ध्यान म रख कर ही व्यवसाय और उत्पादन क क्षेत्र म आगे बढ़ता था। व्यापार की दृष्टि म भी भारत विदेश म व्यापार म मगन था। जनमाण और स्थनमाण दाना का प्रयोग करता था। इरान और तथा अन्य क्षेत्र क घूरापाय दंगा म हमारा व्यापार चलता था। चीन और पूर्वो द्वाप समूह तक भी व्यापारिक जहाज घान जान थ। सिवाजी क समय म तो बहुत प्रसिद्ध जहाजा बन्ग था जिनम घूरापाय नाग भी भयभीत रहन थ। मगन मघाना न ना समुन्ही प्रहा रम्भा था जा साधारण व्यापार भी करता था। खबर क तरे म हजार स्थन माग द्वारा व्यापार जाता था। पत्त पुतगाव क साथ व्यापार जाता था। फिर वास्तविकताम आर कान्ठम क प्रयत्ना म घूराप म हजार अमरिका म भी व्यापार आरम्भ हा गया और बाद म तो घूराप और अमरिका ही समस्त विश्व पर छा गया। अतः हम क मन्त है कि व्यापार की दृष्टि म पूर्व औद्योगिक युग म भारतवर्ष स्वाश्रित था और समानता क आधार पर अपना व्यापार मचातिन करता था।

मगन की दृष्टि म व्यापारिक बग आरम्भ स ता मगतिन रहा है। प्राचीन शर्षो म एम अन्क प्रमय तथा प्रमाण है जिनम यह सिद्ध जाना है कि व्यवसाय क अनुसार बने व्यापारिया का अन्क श्रमियों (Guilds) विद्यमान थो जा कतमान सहायक समितिया तथा प्रशिक्षण मध्याया का भक्ति मन्था की हर प्रकार सहायता करती था। उन काल जान थ क नवयुवका का शिक्षण देती थी। गुरु म जब विश्व-व्यापार्य की प्रया प्रचलित हुई तब य म मगन क रूप म प्रकट हुए और बन्ग बन्ग श्रमियों म्थापित हुए। इस समय भारत पिछड़ गया अरु वास्तव म यत्रा का उपयोग जान दगा था। यत्र द्वारा श्रमि म अधिक उत्पादन क्त्र का अधिक उत्पत्ति युद्ध म निश्चित विजय जान क लिए छोटी हुई गुल्म पुस्तके आदि विधि का कल्पन मित्रा जिन साथ उकर आयुनिन युग न प्रयोग किया।

प्राचीन आर्थिक मगन की विशेषताये—यद्यपि उपरोक्त बर्णन म य मग विषयताएँ था चुका है तथापि पुन क्रिस्तुआ क रूप म तरे फिर म एक वा दोहराया जा सकता है। मवप्रथम हम दृष्टि म प्राचीन आर्थिक मगन की विशेषता थी श्रमि प्रधान समाज व्यवस्था। य समाज गाँवा म मगतिन जान थ और सम्भवतः स्वाश्रयो हात थ। विभिन्न गाँवा और समुदायों क मध्य आवागमन क साधना का निताल्ल अभाव था और माग-भुग्था की काल व्यवस्था नथी था। राज्य नाम की संस्था का जन्म हा रहा था। आर्थिक क्षेत्र म जातियों बन्ग थी और जन्म क साथ ही व्यवसाय का निधारण हाता था, अतः थम विभाजन कानतिक रूप पर नहीं हाता था। उत्पादन मगन और साम्राज्य तथा छाट स्तर पर जाता था। मन्थम बग का विकास आरम्भ ना रहा था जा विनिमय म सहायक हाता था। उत्पादन क लिए बहुत बनी धन राशि की आवश्यकता नथी जाती था। श्रमि क क्षेत्र म दान

प्रया बलवान थी धीरे धीरे दग विदेश के व्यापार की प्रया चलने लगी थी। इस प्रकार अनेक विशेषताओं व साथ पूव औद्योगिक अर्थ व्यवस्था ने औद्योगिक आति के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया और तब नवीन औद्योगिक युग का श्रीगणेश हुआ।

अभ्यास के लिए प्रश्न

- १ पूव औद्योगिक आर्थिक संगठन से आप क्या समझते हैं ? समझाकर लिखिए और इसकी प्रमुख विशेषताओं का विवेचन कीजिए।
- २ 'सम्पत्ति की उत्पत्ति' पर एक संक्षिप्त निबंध लिखिए।
- ३ "प्राचीन काल में ग्राम स्वाश्रयी थे" इस कथन की युक्तियुक्त पुष्टि अथवा खंडन कीजिएगा।
- ४ विनिमय का व्यापार में क्या स्थान रहा है—विस्तारपूर्वक लिखिए।
- ५ प्राचीन आर्थिक व्यवस्था के गुण और दोष लिखिएगा।

चतुर्थ अध्याय

आधुनिक राजनैतिक सिद्धान्त

प्रस्तावना—बृहत् विद्वाना का मत है कि आधुनिक राजनैतिक सिद्धान्त का श्रीगणेश मन्त्रवी गताली ग होना है और घामग गगन इस युग का महान प्रवक्तृ था। राज्य गता व सिद्धान्त का पूरा विवरण मन्त्रप्रथम हास्य न ही किया था। इस बात को मान जन पर भी यह आश्चर्यक हाता है कि प्राचीन काल की राजनैतिक विचारधारा का भी गक्षिप्त अध्ययन किया जाय जिनमें वत्तमान का समन्वय अत्यन्त गुनने हा जाय। अभी अष्टि ग पत्र इस मन्त्र म प्राचीन राजनैतिक सिद्धान्त का अध्ययन करेंगे और उक्त पत्राच आधुनिक राजनैतिक सिद्धान्त की विवेचना करेंगे।

प्राचीन राजनैतिक सिद्धान्त—यग ता विन का प्राचीन अविहाय अत्यन्त व्यापक है और उगमन प्रत्येक राष्ट्र एव राज्य का अचना अरुग इतिहास है। उगी प्रकार वगी व राजनैतिक सिद्धान्त का भा इतिहास है। इनम भी भारत मिय अगारिया चीन आदि अत्यन्त प्राचीन हैं, किन्तु वहाँ म् वत्त युग की राजनैतिक विचारधारा म हा अचना प्रमग मन्त्रय रक्खेग। प्राचीन यूनानी राजनैतिक विचार का प्रारम्भ ईसा म पूव पाववी गताली ग माना गया है। उम समय वहाँ मन्त्रप्रथम साकिन (Sophist) नाम उगमन दुत थ। व बुद्धिवादी थ और प्रत्येक विचार का तर्क द्वारा गममन थ। अन्तिम राज्य और नियम उगान मानवीय सिद्ध तर निय थ। महात्मा मुक्तरान इगी विचारधारा व पावक थ। फिर प्लेटा और अरस्तु का प्राग्भाव हुआ। य दाना प्राचीन राजनीति व अन्त्य स्तम्भ मान जात है। इगान राज्य का नर्गिक और अनिवाय मस्या सिद्ध किया। अरस्तू न घावणा की कि मनुष्य राजनैतिक प्राणी है। तन्त्रदान यूरार म ग नर्वात विचारधारार्ये विकसित हुई, जिनम म पत्रा एपीक्यूरम व द्वारा चलाई हुई आनन्त्या (Epicurianism) और दूसरा स्टाइकम द्वारा चलाई हुई विरक्तिवात् (Stoicism) का विचारधारार्ये कहानी हैं। अन्त बात् राम व विज्ञान न विधिशास्त्र (Jurisprudence) आदि का जन्म लिया। प्रगामन सम्बन्धी अधिचार वृषकता नियन्त्रण तथा मनुष्यन आदि व सिद्धान्त का प्रतिपादन भी अभी समय हुआ।

मध्यकालीन राजनैतिक सिद्धान्त—यह युग प्रधानतः सामन्तवादी युग रग है, अन्तिम सामन्तवादी विचारा का ती महत्त्व भी था। किन्तु इगाइ घम व वत्त दुए प्रभाव म राजनीति भी नहीं वच गया। ईगाइ घमानुयाया मन्त्र सगटिन अन्त थ अन्तिम धार धार इगाई उम मध राजनीति म प्रवेग करन गग। अन्त म पवित्र रोम साम्राज्य और पवित्र रोम सम्राट भी वन गय। इगाई घम की प्रधानता के कारण इस युग व राजनैतिक विचारा पर उसकी गहरा छाप है। यद्यपि महात्मा

ईसा ने स्पष्ट कहा था "मेरा राज्य लौकिक नहीं अलौकिक है" (My kingdom is not of this world)। अर्थात् राजनीति से अलग रहना उनका उद्देश्य था परन्तु जब राजनीति धर्म से प्रभावित हो गई और धर्म के हाथ सत्ता, सम्पत्ति आदि प्रा गई, तब धर्म और राजनीति में संघर्ष आरम्भ हुआ। इस समय तीन विचार प्रमुख रहे। प्रथम धर्म और राजनीति पृथक् हैं और धर्म को राजनीति में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। दूसरा यह कि धर्म राजनीति से श्रेष्ठ है अतः राज्य धर्म के आधीन रहना चाहिए। तीसरा यह कि राजसत्ता, धर्म आदि सबसे उच्च है। इन पद्धतियों पर चलने वाली विचारधारा (Scholasticism) पाठ्यपुस्तक कहलाती है। इस समय राज्य का ईश्वरीय सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया था। बाद में राजाशा के अधिकार का सिद्धान्त भी इसी का परिवर्तित रूप रहा था।

आधुनिक राजनतिक सिद्धान्त—मेकियावेली इन युग का प्रथम विद्वान् था। यह इटली का निवासी था (१४६९-१५२७)। इसने राजनीति का स्वतन्त्र शास्त्र के रूप में विकसित किया। धर्म और नीति से सबका अलग कर दिया। वह राज्य को सुदृढ बनाना चाहता था इसलिए (End justifies the means) 'उद्देश्य के अनुसार सब साधन उपयुक्त होते हैं' सिद्धान्त का प्रयत्न किया। इस समय राज्य के सम्बन्ध में नई 'समझौता सिद्धान्त' (Contract Theory) प्रचलित की गई। प्राचीन ग्रीक द्वाद को 'उपयोगितावाद' का नया रूप दिया गया। परन्तु थोड़े ही समय बाद राज्य को सुदृढ आधार देने के लिए 'आदशवाद' का जन्म हुआ। रूमो काट, हीगल आदि इसके प्रधान समर्थक हुए। अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में होने वाली दो आन्दोलन (गोथागिक एवं फ्रांसीसी) ने राजनतिक विचारों में गहरा परिवर्तन किया और उन्नीसवीं शताब्दी में व्यक्तिवाद, पूजावाद जनतन्त्रवाद राष्ट्रीयवाद (राष्ट्रवाद) आदि विकसित हुए। इनमें परस्पर कई विचारधाराओं का सहयोग है। उदाहरणार्थ व्यक्तिवाद में स्वतन्त्रता व अतिरिक्त उपयोगितावाद पूजावाद आदि का सहयोग है। जनतन्त्र और राष्ट्रवाद एक दूसरे के पूरक हैं। समाजवाद का विकास भी इसी प्रकार हुआ है। राष्ट्रवाद का उग्र रूप साम्राज्यवाद और इसकी प्रतिक्रिया के फलस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीयवाद संघवाद आदि का जन्म हुआ है। स्थान और स्वभाव के अनुसार इन्हीं सिद्धान्तों के विभिन्न नाम भी दे दिए जाते हैं जैसे नाजीवाद फ्रांसीसीवाद आदि। अब हम इन्हीं आधुनिक सिद्धान्तों का संक्षिप्त अध्ययन करेंगे।

आधुनिक सिद्धान्तों का स्पष्ट विवेचन करने तथा समझने के लिए हम प्रत्येक सिद्धान्त को तीन भागों में विभाजित कर लेना चाहिये। प्रथम राज्य का आधार क्या है, दूसरा वर्तमान राज्य प्रणाली के दोष क्या हैं और तीसरा, नवीन सिद्धान्त किस प्रकार के साधनों से समाज का परिवर्तन करता हुआ कभी वास्तविक व्यवस्था स्थापित करना चाहता है। इन्हीं तीन साधनों की सहायता से हम प्रत्येक सिद्धान्त को कसौटी पर परख सकेंगे। प्रत्येक सिद्धान्त का अलग अलग अध्ययन करने से पूर्व हम यह भी जान लेना उचित समझते हैं कि ये सिद्धान्त भी तीन श्रेणियों

राज्य नागरिकों के हित के लिए व्यवस्था करता है, सबके बनवाना है और सुरक्षा आदि की व्यवस्था करता है इसलिए यह आवश्यक है यह मान दवाद के सिद्धान्त से समर्थन प्राप्त करता है। सुख प्राप्त करना और दुख से छुटकारा पाना प्रत्येक व्यक्ति चाहता है। इसलिए राज्य की सस्था उपयोगी है। राज्य इसीलिए वे सब काय करता है जिसका जनता के लिए उपयोग है। गिना प्रबन्ध, सफाई, रोगनी आदि की व्यवस्था करना, उद्योग धंधों का नियंत्रण करना इसीलिए राज्य के कार्यक्षेत्र में आता है। किंतु कुछ विद्वान इस सिद्धान्त से सहमत नहीं हैं। उनका कहना है कि ऐसा सोचने से राज्य भी एक लाभकारी दुकान या समिति के रूप में मानी जान लग जायगी और उसकी प्रतिष्ठा गिर जायगी अतः यह सिद्धांत भी अधिक प्रचलित नहीं हो सका।

आत्मवाद—इस सिद्धांत के अनुसार राज्य एक स्थायी तथा अत्यंत उच्च मस्था है। नागरिक जन्म से ही और मर जाते हैं किंतु यह अखण्ड रूप में प्रवाहित होने वाली सरिता की भांति है। इसलिए मनुष्यों को राज्य के अधीन ही रहना चाहिए। इसके समर्थन में प्राणिशास्त्र के निम्न सिद्धान्त का समर्थन प्राप्त किया जाता है। इसके मतानुसार राज्य पूर्ण सक्षमशाली मस्था है और रहनी चाहिए। आधुनिक काल के नाजीवाद, फासीवाद न इस सिद्धांत का बहुत उपयोग किया है। धीरे-धीरे, काट काट कर इसके समर्थक हैं। उनका आत्मवाद थोड़ा सगाधित रूप में है। धीरे-धीरे के मतानुसार राज्य को आदेश मस्था होने के कारण मुंदर काय करन चाहिये। इसलिए नागरिकों की स्वतंत्रता भी रहे और व्यवस्था भी बनी रहे। इस दृष्टि से नागरिक जीवन की रुकावटों को दूर करना ही राज्य का प्रमुख काय होना चाहिए (Removing the obstacles of civic life or hindering the hinderances)। यह सिद्धांत बहुत समय तक प्रभावशाली रहा और इसका यथाकदा उपयोग अनेक कई सिद्धांतवादियों ने किया है।

समाजवाद—वर्तमान युग में यह सबसे अधिक प्रभावशाली और लोकप्रिय सिद्धांत है किंतु इसका अब इतना विकास हो चुका है कि स्पष्ट सक्षिप्त व्याख्या सम्भव ही नहीं है। हमारे उपयोग के लिए हम इस प्रकार समझें कि यह वह सिद्धांत है जो राज्य की सत्ता और समाज की सारी व्यवस्था समाज के ही हाथ में लाना चाहता है। इस समय समाजवादियों की मायता है कि राज्य पूँजीपतियों की मस्था है और समाज के सारे साधन इन्हीं पूँजीपतियों के हाथ में हैं। ये मस्था में बहुत कम हैं किंतु शिक्षा धन और राज्य के द्वारा ये सारे समाज पर छाये हुए हैं तथा जनता का दोष सारा भाग श्रमिक वर्ग का है जिनका ये शोषण करते हैं। औद्योगिक क्रान्ति के कारण ये वर्ग बिल्कुल स्पष्ट हो गए और इनमें गम्भीर प्रति-योगिता चल रही है। अतः समाज का परिवर्तन आवश्यक है। साम्यवाद, (सिंडीकलीज्म) श्रम संधवाद, श्रमीमूलक समाजवाद (Guild Socialism) आदि क्रान्तिकारी विचारधाराएँ हैं जो रक्तमय क्रान्ति से परिवर्तन लाना चाहते हैं और समष्टिवाद (Collectivism or State Socialism), फबियनवाद (Fab-

चलना समभव नहीं रहा। आधिप्यार और यातायात के साधना से सारा विश्व एव ईनाई बन गया। अत स्वतंत्र राष्ट्र स्वय पराधीन राष्ट्र को स्वतंत्रता दकर मित्र बनाने म लग गए। इस समय इसी दृष्टि से वि प्रत्यक् राष्ट्र की क्रियाया का प्रभाव समस्त विश्व पर होता है, अब अंतर्राष्ट्रीयवाद और विश्व सघ के प्रस्ताव आ रहे है। लोग आफ नेगस तथा वर्तमान सधुयत राष्ट्र सघ उसी दिशा म प्रथम चरण है जहाँ मानवता एक बनकर ही जीवित रह सकती है। अथया नए आधिप्यार एटम बम आदि के कारण मानव का अस्तित्व खतरे मे आ गया है।

गाधीवाद— गाधी जी ने कोई राजनतिक सिद्धात प्रस्तुत नहीं किया है व कवन कमयोगी थे। परन्तु उनके विचारा म कई विरोधाभास होते हुए भी हम एकरूपता मिलती है, वही गाधीवाद कहा जाता है। ग्रहिसा की व्याख्या उनका प्रगसनीय दशन है और राजनतिक अस्त्रा म निष्क्रिय विरोध (Passive resistance), असहयोग (Non co operation), मविनय अवना आन्दोलन (Civil disobedience) और सत्याग्रह मुख्य हैं। उाकं रामराज्य की कल्पना अनुचित मत्तारहित वग विहीन, गोपण मुक्त, सुखी समाज क रूप म व्यक्त हुई है। आमा का वास्तव म गणराज्यो का सक्षिप्त रूप बनाना चाटत थ। व राष्ट्रीयता क पापक थ वितु यह सधुचित अथवा स्वायमूलक नहीं थी। आधिक क्षेत्र म उनका प्रयास (ट्रस्टीशिप) का सिद्धात बहुत वैज्ञानिक था। वग मुद्ध क स्थान पर व वगसमवय का सिद्धात प्रतिपादित करते थ। यह सिद्धात आज के युग म बहुत प्रभावशाली शांतिकारक और महत्वपूर्ण है।

अभ्यास के लिए प्रश्न

- १ अराजकतावाद पर एक सक्षिप्त निबन्ध लिखिए।
- २ राजनतिक विचारधारा से आप क्या समझते ह ? इसके विकास का विवरण लिखिए।
- ३ आदगवाद, यक्तिवाद तथा समाजवाद का अलग अलग वर्णन कीजिए।
- ४ 'राष्ट्रवाद' की परिभाषा लिखिए और इसका साम्राज्यवाद से सम्बन्ध बताइये।
- ५ गांधीवाद पर एक निबन्ध लिखिए।

पाचवा अध्याय

धम और दान

प्रस्तावना— गाम्ना व अनुभार धम का अर्थ है— 'धारणादम मित्याः
धर्मो धारयति प्रजा' अर्थात् एक मनुष्य का दूसरे मनुष्य व मात्र एसा बतान
जिमसे सबका बल्याण है। जिमसे समान व रूप में सामूहिक जीवन संचालित हो
सक तथा देवर की देखा व अनुकूल मष्टि का प्रवाह सच सब उन धम कहत है
और मुसूत भाषा में आध्यात्मिक ज्ञान का दान कहत है। भारतवर्ष में ज्ञान व
मरूप दो रूप स्वीकार किए गए हैं एक नास्तिक और दूसरा आस्तिक। नास्तिक
का अर्थ है देवर तथा आत्मा की मत्ता में श्रद्धा और त्रिंशाम न जाना तथा
आस्तिक का अर्थ है इश्वर एव आत्मा व अस्तित्व और मत्ता का स्थापार करना।
जान प्रतिरिक्ता मुख्य मुख्य प्रतिपात्ता और उनका आचार्यों का नाम व माय सम्बन्ध
जाना व अर्थ भा प्रकार हैं। जम —

(१) बौद्धिक दान—दसक आचार्य कर्णा हैं तथा इसमें द्रव्य गुण वम
जामाय विषय समभाव तथा अभाव इन मूल पदार्थों का विवरण तथा निष्पन्न
विज्ञा जाता है।

(२) भौतिक दान—आचार्य जमिनी जम दान व आचार्य हैं। इसमें
जमकाण का प्रधान रूप में स्थापार किया गया है। यह ज्ञान वम आत्मा व सम्भार
श्रद्धा का व्याख्या द्वारा स्पष्ट करने में सहायक होता है। व्याख्या व कारण जमका
महत्त्व अर्थिक है।

(३) वैज्ञानिक दान—महर्षि कृष्ण द्वैपायन व्यास इस ज्ञान व आचार्य हैं।
इस ज्ञान का माहिल्य विस्तृत है तथा इन ज्ञान में ब्रह्म की अनुभव व्याख्या की
गई है।

(४) सांख्यिक दान—महर्षि कपिल इस दान व आचार्य हैं। यह ज्ञान
प्रारम्भिक एव प्रति प्राचीन समझा जाता है। इस ज्ञान में शक्ति दक्षिक एव
भौतिक तापाम छुटकारा पान के माय का निर्माण किया गया है।

(५) योग दान—महर्षि पातञ्जलि इस ज्ञान व आचार्य हैं। जाम यह
स्पष्ट किया गया है कि याग क्या जाना है और उयका समस्त क्रियाया का विवरण
व्यापक वपन ज्ञान दिया गया है।

(६) ज्ञान दान—जम ज्ञान व पांच अर्थ स्वीकार किए गए हैं जो
प्रतिज्ञा हनु उपाहरण, उनय तथा निगमन है।

वास्तव में धम और ज्ञान का ज्ञान गहरा सम्बन्ध है कि एक व बिना दूसरे
की समझता बूझ कठिन है। परन्तु एक का सहायता से दूसरे का ज्ञान प्राप्त करना

या, समझना उतना ही सरल भी है। धम का व्यापक अर्थ सर्व ही प्रत्येक जाति-समाज अथवा देश के लिए स्वीकार योग्य हाता है, किन्तु जब उसका अर्थ बिसा एक ही उद्देश्य की पूर्ति के लिए अथवा अकेले क्षेत्र में उसका उपयोग करने के लिए किया जाता है तब वह गुड़ धम न रहकर सप्रदाय बन जाता है। यहाँ हमें केवल धम का अध्ययन करना है। अतः धम का अर्थ हमें उन निश्चित सिद्धांतों से लेते हैं जो मानव प्रवृत्ति व अनुकूल हैं तथा प्रत्येक देश जाति, क्षेत्र अथवा समाज के लिए वे हितकर सिद्ध होते हैं। फिर भी यह सत्य है कि सत्सारा में प्रचलित धर्मों की यदि इसी कमीटी पर परीक्षा की जाय तो यह पता होगा कि अधिकांश धर्म इस परीक्षा में पूरे नहीं उतरते। इसका अर्थ यह होगा कि कुछ अभाव अथवा दोष भी धर्मों में दिखाई देते हैं। ये दोष देश और काल की गति के अनुसार भी प्रकट और लुप्त होत हैं। हमारा भारतवर्ष विश्व के अधिकांश धर्मों की जन्मभूमि रहा है। अतः हमारे लिए मुख्य मुख्य धर्मों का सक्षिप्त ज्ञान प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है। इनमें हिन्दू धर्म बुद्ध धर्म जन धर्म, ईसाई धर्म तथा मुसलमान धर्म मुख्य हैं।

(१) हिन्दू धर्म—हिन्दू धर्म नाम प्रारम्भिक पारसीयों का दिया हुआ है। इसका कारण यह है कि हमारा यह धर्म सिन्धु नदी की घाटी के साथ संबद्ध है और वे लोग 'सिन्धु' का उच्चारण 'हिन्द' करते थे। सिन्धु तटवर्ती क्षेत्र को 'हिन्द' और यहाँ के निवासियों को 'हिन्दू' कहते थे। इसीलिए इस धर्म का नाम भी हिन्दू धर्म हो गया। 'स' को 'ह' बोलने की प्रथा राजस्थान व मेवाड़ प्रदेश तथा मध्य प्रदेश व उत्तरी भाग (भाजवा) में आज भी प्रचलित है जहाँ 'स'वा मात आना' का हवा हात आना और "सामू जी को 'हाड़ जा बोला जाता है। फिर यूरोप निवासियों ने यहाँ आकर इसे 'हिन्दूइज्म' कर लिया और आज यह शब्द दीर्घकाल में प्रचारित हो रहा है। कुछ लोग इस धर्मों का धम भी कहते हैं। कुछ भी कहें यह धर्म भारत की बहुत बड़ी विघ्नता है। इस धर्म को किसी एक व्यक्ति या मूर्ति ने नहीं चलाया, बरन गतात्मियों तक निरन्तर प्रयत्नशील रहने के बाद अनुभवा से स्थापित किए गए शाश्वत सिद्धांतों का संग्रह है। आज लोगों की यह विघ्नता रही कि उहाँ कभी भी किसी धर्म का विरोध नहीं किया। इस क्षेत्र में भारतवर्ष और विशेष तौर पर हिन्दू धर्म अपनी सहिष्णुता के लिए विख्यात है। समय समय पर आने वाली जातियों व धर्म और विचारों को भी यह धर्म ग्रहण करता रहा। अतः हिन्दू धर्म बहुत व्यापक बन गया। आज इस धर्म की विघ्न व्याख्या के लिए बड़े बड़े ग्रंथों की रचना आवश्यक है। यहाँ हमें केवल हिन्दू धर्म के मुख्य पक्षों का सक्षिप्त अध्ययन करके ही सतोष करेंगे।

हिन्दू धर्म भावदेशीय स्वाभाविक और सांख्यिक माना गया है। इसीलिए अनेक उच्चल पुण्यल जाति जाति एवं आवृत्तन परिवृत्तन के पश्चात् भी हिन्दू धर्म जीवित और प्रभावशाली है। यह धर्म समाज के दैनिक जीवन और व्यवहार से इतना एकाकार कर गया है कि धर्म का दूसरी सस्याप्राप्त पृथक् करना कठिन समस्या बन गई है। फिर भी हिन्दू धर्म की मुख्य विशेषताओं पर प्रकाश डालना जाम तो हम

दमोय कि जगम ना बाना का प्रधातवा है —

(१) परमात्मा या परमेश्वर पालक्य है और वही हृदय का गुप्त मन्त्र है, जगम दूह विनाय तथा (२) उग्र मन्त्र का धारणावधि में गृह्यकाल में मुख्यविधि कायत पद्धति की स्थापना । जो विद्वान्ता म विगी ध्येय धर्म क धर्मवा एका वाचन करत वाता म हिन्दू धर्मिया का बार्दी मगभन् गरी हाता । इगारिण म धर्म मन्त्रवाचनकारा कहा जाता है ।

हिन्दू धर्म का स्वरूप— साधारण्य पुनरुत्थम और मन्त्रिवाचन क विद्वान्ता हिन्दू धर्म म स्थापार विण आता है । पर न इमता ब्रह्म व्यापक और उदार स्वरूप माता तथा है । कर्ष प्रचार क विराधो विचार आ लक्ष हा माय हिन्दू धर्म म स्थापन वाता । । जग ईश्वर की मन्त्रा माता तथा मन्त्रर और न मानन वाचन विरोध कर वाचन । ईश्वर का स्वरूप मानता वाता भा उग्रक मात स्वरुपा की मायता क धर्म मात, निगल विराचार मगल-माचार तथा मगल निराचार कर्ममात । मन्त्रवाचन वाता भी विरहित हा आ मन्त्र रूप म विद्यत हा माता मल हा । य वाचन म वचना क भिन्न भिन्न मन्त्रवाचन क नाम है —

(१) ध्यानवाचन—य मन्त्रवाचन मन्त्रवाचन का चनाया हुआ वाता है । य ब्रह्म मन्त्र जगमिण्या वाच विद्वान्ता का मानता । । धर्मर का ब्रह्म निरिधाय तथा निगल है । मन्त्र वाचन उग्रम भिन्न गरी है । मन्त्रर कथन नाम और रूप है । माया ध्याकल्या है । मन्त्र वाचन म माया का नाम हा जाता है । कथन ब्रह्म हा मन्त्र है । ईश्वर कृपा म उवा वि वाच है तथा उवाचता भक्ति और ध्याचार का मन्त्रर स्वीकार करता । ।

(२) विगिष्टांतवाचन—य महाप्रभ रामानन्तावाचन का चनाया हुआ है । उवाच ब्रह्म विद् विद् विगिष्ट है । मन्त्रिण विगिष्टांत वाचन कनाया । ध्याचार म माता मन्त्र मगना तथा और ब्रह्मि की मन्त्रा बद्ध मर् । जीव भी नियम मान पद्ध ब्रह्म है और उवाच का ध्येयकार कथन म गरी बाता मन्त्रा । विगिष्टान्ता ध्याचि कथन ध्येयकार और कनाया है और मन्त्राचार उवाचता ध्याचि मगना । ब्रह्म क धर्मन ध्याचि म विगि (त्राय) और ध्येयन म जग (प्रवृत्ति) उत्पन्न हुआ है । ब्रह्म जग का कारण है और त्राय भा ब्रह्म का हा ध्येय है । जीव और ब्रह्म ताना धर्मन है । मुक्ति ब्रह्म का कृपा म हा मित्रनी है ।

(३) विगिष्टांत मन्त्र परमेश्वरि—य प्रकृति का माग है । जग धनुमार पारन क धर्मरुत काय अय तथा प्रय तथा प्रविशत काय र्वाच्य है । ध्याचि ईश्वरवाचन है । वाचन म मन्त्र वाचन म विद्वान्ता म्त्रर और विद्वान्ता ब्रह्मर क नाम जग ।

(४) इतवाचन—य महाप्रभु (माधव) मन्त्रावाचन मन्त्रा चनाया हुआ है । य ब्रह्म और जीव का मन्त्र गरी मानन दाना पृथक मन्त्राण है । जगत भी मिथ्या गरी है । मान चित्तन म प्राप्त होना है । ब्रह्म ध्याचि मन्त्र है । जीव का मुक्ति प्राप्ति क विद्ये ध्यान धारणा ममाधि साधना का प्रयोग करन चाहिए ।

दिया हम समय यही बात में इसाइया (Isaiah), ज्ञान में कल्पविद्यम धीरे लाघाग (Lao tse) और भारत में गौतम बुद्ध (१६२ BC ५० BC) हुए। य कल्पवस्तु का राजा गुदाधन का पुत्र था। बचपन की पूर्णिमा का दिन ज्ञान का जन्म हुआ था इसाइया हम पूर्णिमा का बुद्ध पूर्णिमा भी कहते हैं ज्ञानकी पत्नी यथाधरा तथा पुत्र राज्ञेय था। बुद्ध (मिद्धाध) प्रारम्भ में ही विचारणात था और मध्य का गात्र में लीन रहता था। कुछ घटनाओं की इनके जीवन पर लगी प्रतिक्रिया हुए कि ज्ञान मन में यत्न करता बट गई कि यह मगार दुःख का आधार है और मनव्य का ज्ञान ज्ञान ज्ञान का उल्ला करनी चाहिए। राज्य का ज्ञान पारिवारिक जीवन पत्नी तथा पुत्र का माता पिता का विचारन का समय में ज्ञान काव मन और एक रात्रि का अघातक मन्त्र-स्वांग कर मयाग ग्रहण कर दिया और जगत का धार चतुःश्रि। अन्तर् विज्ञाना में मध्यम स्थापित करत हुए अमण करत रहें। बचपन का आधार ज्ञानाम और राजगुरु का ज्ञान का विद्येता भी अमण का विचार ज्ञान मानाव ज्ञान हुआ। उग्रता का जगत में ६ वर्ष तक पौर श्राद्धा मयाधिया का माय तपस्या का ज्ञान करतु मय प्राप्त है। हुआ। अन्त में अमनाप का अथवा में ज्ञान य शीद गया पर्वत। पर ज्ञान ज्ञानि का बोधि-व्यस का नाश बट ध्यान जगा रह य ज्ञाने वासि-मन्त्र की प्राप्ति का गई। तभी मय बुद्ध एक इनके अन्तर्वाश शीद तथा ज्ञान मिद्वान बोद्धधम का नाम में प्रसारित हुए। गारनाय (वागगायी का नाम) में भगवान बुद्ध ने अमना पत्नी जानावस्था किया जिन 'धम उत्र-परिचरन कन्त' है। २० पू० ६८० ई० में कुषाणारा में मत्तामा ज्ञान का ज्ञानमान हुआ जिन निराण कन्त है।

बोद्धधम का आधारभूत सिद्धान्त—धम धम ज्ञानमें मुक्त रूप में नाति पास्त्र का एका पदति कर्ता जा करता है जिनका ढांग मय विचार और मय आचरण का अम्याम ज्ञाना है। बोद्धधम में प्रमुख रूप में निम्नलिखित सिद्धान्त है ज्ञान प्रसार है —

(१) धार सर्वोच्च मय—प्रथम जीवन दुःखमय है, दुःख का जन्म और मुक्ता की जानना दुःख का प्रमुख कारण है तीसरा उग इच्छा का मन्त्र का ज्ञान का दुःख का कारण है जाना है और चौथा यत्न इच्छा का जानना परित्त जीवन का मन्त्र का जाना है अथात् विराण प्राप्त का जाना है। ज्ञान प्रकार दुःख दुःख का कारण दुःख का निवारण तथा दुःख का विचारण का माय का ज्ञान मय है। ज्ञाना मत है कि निराण इसा मगार में प्राप्त का करता है। अत्रिजा का नाप मय ज्ञान का प्राप्ति का निवारण है। ज्ञान जानना का समय ज्ञान कर ज्ञान प्राप्ति तथा ज्ञान निवारण का ज्ञान गुद्ध विचार, परित्त ज्ञान उन्म प्रायना तथा ज्ञानि आरम्भक है। बोद्धधम की नाति मय मयधिन ज्ञान आरम्भ की है जिनमें तीर का मत मयाप्रा जागी मन करा व्यनिचार मत करा अमय मन वाता, ज्ञाना मन करा प्राप्ति मय्य है।

(२) अर्थात् माय—गायारिज कर्ता म मुक्त ज्ञान का ज्ञान निम्न अष्ट माय निधारित किए गए हैं — (१) मय्यर ज्ञानि (२) मय्यर मय्यर (३) मय्यर

वार् (४) सम्पन्न वर्मात् (५) सम्पन्न ध्यायाम (६) सम्पन्न ध्यायाम (७) सम्पन्न स्मृति (८) सम्पन्न समाधि। इस माग को मध्यम माग भी कहा है। यद्यपि इसमें अधिक बट्टप्रद तप, यग आदि का स्थान दिया है और साधारण भाग विलास आदि का बहिष्कार किया गया है। इस माग व अनुसरण से कोई विशेष बट्ट न होत हुए मुक्ति प्राप्त हो जाती है इसलिए इस मध्यम माग को सत्ता दो गई है।

(३) कमवाद—जसा कम करोग वसा पत्र मिलेगा—यह सिद्धांत कमवाद है। महात्मा बुद्ध का इसमें विश्वास था। परन्तु व दलि धीर यज्ञ को अच्छा नहीं मानत थे। उनका विश्वास था कि हम इन साधना ग बुरे कर्मों को अच्छा नहीं कर सकत धीर न पूव जन्म व पाप ही धो गवते हैं। मुनि तो इसी जीवन् में अच्छे काय करत स मित्त सबनी है।

(४) नास्तिकवाद—महात्मा बुद्ध ईश्वर का अस्तित्व नहीं मानत थे। इस विषय में व उदारोक्त थे। उनका विश्वास था कि काय और कारण की प्रतिनिधता में सृष्टि का सृजन होता है, किमी सत्ता व द्वारा नहीं। धर्म यह धनीश्वर वाली सिद्धांत है।

(५) आत्मा और पुनर्जन्म—बुद्ध के मतानुसार आत्मा पांच स्कंधों का समुदाय है जिसमें विनाय स्वयं की प्रयानता है। इसे पुनर्जन्म या 'पुद्गल' भी कहते हैं तथा व पांच स्कंध रूप वेत्ता, सत्ता, सत्कार एव विनाय कह गए हैं। विनाय स्कंध को धाम्मा का स्थान दिया जा सकता है परन्तु आत्मा की अमरता में व विश्वास नहीं करत इस जरा' माना है। पुनर्जन्म को बुद्ध मानत थे किन्तु इस रूप में कि अनित्य अहंकार तथा तृष्णा का अपने कर्म के अनुसार नया जन्म होना है।

(६) अहिंसा—अहिंसा परमो धर्म बुद्ध धर्म की प्रमुख विशेषता मानी जाती है। प्राणी मात्र को पीडा पहुँचाना अपराध है। इसलिए ममजत अहिंसा के पालन पर बल दिया था।

उपरोक्त मूल सिद्धांतों के प्रतिरिक्त हिंदू धर्म व वर्णाश्रम में इनका विश्वास नहीं था। वेदा को ईश्वरीय पाल के प्रथम स्वीकार नहीं किया। मूनिपूजा को अनुचित एव अनावश्यक समझता था। यद्यपि हम देखते हैं कि बाद में इस धर्म में भी मूनिपूजा (बुद्ध की पूजा) आरंभ हो गई।

बौद्ध धर्म का प्रसार—यह धर्म भारतवर्ष में तो गीघ्र फल ही गया, विदेशों तक में भी व्याप्त हो गया था। इसके मुख्य कारण निम्नलिखित समझ जा सकते हैं—(१) महात्मा बुद्ध स्वयं एक आर्यक व्यक्ति से युक्त उच्चवर्ण के दृष्टा थे जिनका सम्पन्न जातू का सा प्रभाव करता था। (२) अभी तक हिंदू धर्म का ज्ञान व उपदेश संस्कृत भाषा में होते थे जो दुर्लभ और बट्टसाध्य होने थे। इस धर्म के सिद्धांत सरल और भाषा सुबोधगम्य थी जिसे साधारण में साधारण व्यक्ति भी समझता था। (३) धर्म की प्राचीन तथा समझ के विपरीत प्रचलित रूढ़ियों का खण्डन किया। (४) जाति भेद एव जन्म से जाति का संबंध होने में

विद्वान्मन्त्री बनते थे। वे कहते थे मनुष्य कम से ऊँच नीचे बनता है जन्म से नहीं। (५) वे ईश्वर, आत्मा जीवन-मरण आदि गभीर विषयों का विवेचन नहीं करते थे। (६) उच्च वर्ग के लोग जस सघाट आहार, हथ आदि का पूरा सहयोग मिला और (७) स्वयं विरोध करने वाला वे मनुष्य अनाथ के कारण यह द्रुतगति में पत्र गया। इन कारणों से गांधी हा बौद्ध धर्म लोकप्रिय बन गया और धीरे धीरे नगण, विद्वत्त धीन मगाविया कारिया जापान, मलाया लका, अफगानिस्तान मसोपाटामिया आदि देशों तक स्वयं प्रचार आ गया।

धर्मनिराज के कारण—धर्मनिराज कारणों से मनुष्य कारण निम्नलिखित मान जा सकते हैं—(१) हिन्दु धर्म का प्रभाव कम होता देखकर बौद्ध धर्म का भी विष्णु का नवीन धर्मनिराज मान लिया जिसमें बौद्ध जनता का ध्यान पुनः हिन्दु धर्म की ओर चला गया। दाना धर्मों में एकत्वता का स्थापित हो गया। क्याए एक ही प्रवृत्ति हो गई अतः दाना धर्मों में भ्रम करना बर्जित हो गया। (२) बौद्ध धर्म का अस्मिताभाव उच्च वे सुन्दर आत्मता का था किन्तु व्यवहार योग्य नहीं था। राजाघरा का युद्ध करने से पन्न धर्म। साम्राज्य जनता साम्राज्य का छोड़ने में कुछ वृत्तिनाद अनुभव करता था। (३) स्वयं अतिरिक्त हिन्दु धर्म के स्वयं ईश्वरवादी और वेदा का मन्त्रों का स्वयं अथवा स्वयं प्रति उत्पन्नता भारतवर्ष का जनता जनान का स्विकार नहीं हुआ और फिर साम्राज्य के धर्मनिराज हो जाने पर तो बौद्ध धर्म अस्त में हो आ गया। (४) बौद्ध धर्म में भी कुछ निहित था धर्मनिराज के लिए उत्तरदायी हैं। जिन धर्मनिराज समुदाय ज्ञानवान महायान आदि की स्थापना से नए जन्म हुए धर्म की एकता का टम लगा। बाप आडवर अधिका आ जान से जागा का विद्वान्मन्त्री कम जान लगा। बौद्ध विष्णु भा चरित्रवान और निर्दोशी न रहे सक। मठा और विद्वान्मन्त्री म व्यभिचार बर्जित नग गया। स्वयं अतिरिक्त राष्ट्रीय का जागृका का समर्थन था के समर्थ में नहीं मिला। (५) अतः म विद्वान्मन्त्री के आक्रमण भी स्वयं धर्मनिराज का एक कारण बन गये। मुसलमानों ने विचार नष्ट कर लिए विश्वाकर्तृ भ्रमान्त कर लिए भिक्षुओं की हत्याए कर नीचे बच हुए विद्वान्मन्त्री म चले गए और नए जागा न हिन्दु धर्म की गरण आ।

बौद्ध धर्म का महत्त्व—धर्म धर्म की अनेक स्थापनाएँ भारतवर्ष के विषय अनेक दन हैं जिनमें से मुख्य निम्नलिखित हैं—(१) भारतवर्ष में सामाजिक समानता की स्थापना (२) राजनतिक क्षेत्र में राजा और प्रजा का सम्बन्ध पिता पुत्रवत् मित्र एवं स्थापित करने में इस समय के राजाघरा न बन्ने ठहरना निर्दिष्ट। गणतन्त्र राज्यों का प्रारम्भ हुआ परन्तु राजतन्त्र भी विद्यमान रहे। इस प्रकार राजतन्त्रिक भावना का प्रसार हुआ (३) सामाजिक एवं राजनतिक दृष्टि से भारतवर्ष का 'एक राष्ट्र' की भावना के लिए बल मिला, (४) मठ प्रथा का आरम्भ दसों समय से हुआ था। ब्राह्मण काल का स्विकार मिटाने में विद्वान्मन्त्री का लोकप्रिय बनाने में

तथा भारतवर्ष का दूसरे देगा से सम्बन्ध जोरन में बौद्ध धर्म न अदभुत काय बिया है। इसी कारण वाच में व्यापारिक तथा सांस्कृतिक सम्बन्ध भी स्थापित हो सके। यात्रिया का आदान प्रदान हुआ। यह भी कुछ लोग का मत है कि मूर्तिपूजा भी इसी समय आरम्भ हुई दमलिय मूर्ति और मन्दिरा के चलन के साथ विहार चैत्य तथा स्तूप आदि की बला के विक्रम का श्रय भी इसी धर्म को दिया जाता है (५) इस धर्म ने अद्भुत साहित्य प्रदान किया जो साधारण जनता की भाषा में सुबोध रूप में सुलभ हुआ। इस साहित्य की तीन भागा में बाटत हैं जिन्हें 'त्रिपिटक' कहते हैं। विनयपिटक मूत्रपिटक एव अभिघम्म पिटक इनके अलग अलग नाम हैं। इसी प्रकार जातक ग्रन्थ का स्थान और भी महत्त्वपूर्ण है। इनमें बुद्धदेव की पूर्वजन्म की ५५० कथायें हैं और उन्हें २१ भागों में संकलित किया गया है।

इस प्रकार बौद्धधर्म महत्त्वपूर्ण काय सम्पादन करके अपनी महत्त्वपूर्ण देन देगा को अर्पित कर गात हो गया। वर्तमान समय में भारतवर्ष में कुछ बौद्ध श्रेण हैं। दूसरे देगा में जैसे चीन ब्रह्मा तिब्बत, जापान लवा आदि में अभी इनकी संस्था बहुत है। जहाँ साम्प्रवाद का प्रसार हो रहा है वहाँ से तो सभी धर्म बूझ कर रहे हैं। इस प्रकार भारतवर्ष में, जहाँ बौद्ध धर्म का जन्म हुआ था, अब वहाँ गेप नहीं रहा।

जन धर्म—यह धर्म बौद्ध धर्म की अपेक्षा बहुत प्राचीन माना जाता है। इस धर्म का अब तक २४ तीर्थकर मान जाते हैं जिनमें ऋषभ देव प्रथम एव वर्द्धमान महावीर अन्तिम मान जाते हैं। अय तीर्थकरा की अपेक्षा महावीर स्वामी का योग इस धर्म में सर्वाधिक माना गया है। इनका जन्म वगानी के निकट एक क्षत्रिय परिवार में हुआ था। दहान भी लगभग ३० वर्ष की आयु में अपनी पत्नी और परिवार को त्याग दिया था और वर्षों तक अमणगील मयासी जीवन व्यतीत करते रहे तब इन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ। तत्पश्चात् लगभग ३० वर्ष तक गंगा के मगान में पर्याप्त पयटन करते हुए लोगों को उपदेश देते रहे। विम्बमार और अजातशत्रु जो मगध के शासक थे इनमें बहूत घनिष्ठ थे। अन्त में ई० पू० ४६७ में राजगड के निकट इनका देहावसान हुआ गया।

सिद्धांत—बौद्ध धर्म की भांति जन धर्म भी जनता को आकर्षक लगा था। जैन धर्म का विश्वास है कि ईश्वर सत्सार का कर्ता नहीं है। सत्सार अनादि और अनन्त है। परन्तु ये लोग आत्मा की अमरता एव अस्तित्व में विश्वास करते हैं। आत्मा पर कर्मों का प्रभाव पटना है। ये वेदा को तो नहीं मानते परन्तु अनात्मा वाणी भी नहीं हैं। जीवन की एकता में विश्वास करते हैं और यह भी मानते हैं कि जन्म न ही जीवन होता है। उनके अनुसार छ जीवन श्रणियाँ थी—पृथ्वी वायु जल, तेज, वनस्पति एव अन्न। सृष्टि अनादि है किन्तु इसके संचालन के लिये ईश्वर की आन्यकता नहीं है। आत्मा कर्मानुसार भूत कर सत्सार-चक्र में रहता है तथा तपस्या और ज्ञान द्वारा इस चक्र से मुक्त हो जाता है। ऐसा बक्त्य प्राप्त आत्मा तीर्थकर हो जाता है और एश्वर्यावित भी हो जाता है। मोक्ष पर जन धर्म बहुत बल

देता है तथा इसके लिए तीन साधन—सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दशन एवं सम्यक् चरित्र भी निर्धारित करता है। इन्हें चिरत्न भी कहते हैं। पवित्र जीवन व्यतीत करने के लिए 'पंच महाव्रता का प्रतिपादन किया गया है—अहिंसा, सत्य अस्तय अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य। तपस्या का भी जन धर्म में बहुत महत्त्व दिया है। यह बाह्य और आन्तरिक दो प्रकार की मानी गई है। पहली तपस्या में अनशन, चांद्रायण व्रत भिक्षाचर्या, रम परित्याग कायकरण और सलीनता (गरर सेवा) तथा दूसरी तपस्या में विनय, सवा प्रायश्चित्त, स्वाध्याय, ध्यान और शरीर त्याग सम्मिलित हैं। सबसे अधिक जोर इस धर्म में अहिंसा पर ही दिया गया है। यह बलि एवं अनुष्ठान को य भी अच्छा नहीं मानते। इस प्रकार जैन धर्म ईश्वर और आत्मा के समवाय तथा विषयों के दमन का स्पष्ट प्रतिपादन किया गया है।

जन धर्म का महत्त्व—बौद्ध धर्म की भांति जैन धर्म भी भारतवर्ष के साम्राज्य के एक धार्मिक जीवन में अपना विशेष स्थान रखता है। अत्यंत शांतिमय सिद्धांत होने के कारण अधिकांश समद्विगामी लोगो ने ही इसे अपनाया। इस धर्म में हिंदू धर्म का विरोध भी नहीं किया और समाज को भी नहीं छाना। समाज में रह कर वे सुख और शांति व्याप्त करना चाहते थे इसीलिए विभिन्नालय धर्मशास्त्रों, दान, मंदिर निर्माण आदि कार्य में ये लोग सतत हुए। साहित्य पर भी जैन धर्म का प्रभाव हुआ। जन महाकवि त्रिलोचर राज भी प्रसिद्ध हैं जिनके दशक तक व्याकरण कहानियाँ कविता आदि सब पर अनेक ग्रंथ लिखे हैं। भवन निर्माण के कार्य द्वारा वास्तुकला की भी उत्कृष्ट उत्पत्ति हुई। चित्रकला तथा पच्चीकारों के कार्य भी आगे बढ़े। तत्कालीन हस्तलिखित पुस्तकों की लिपि एवं विभक्तता आज भी आश्चर्य में डाल देती है।

बौद्ध धर्म की भांति बाद में जन धर्म भी दिगम्बर और स्वताम्बर तथा शाखाशा में विभाजित हो गया और इसके मुख्य श्रमों में गंगा का घाटा में हट कर मथुरा, उज्जैन गुजरात आदि की ओर हो गया। वर्तमान समय में प्राचीन जन साहित्य के प्रकाशन तथा मंदिरों आदि के पुनर्निमाण द्वारा जन धर्म चतुर्थ शतक में बढ़ रहा है।

ईसाई धर्म—जिन समय में राम साम्राज्य में प्रथम मछाट आगस्टस सीजर शासन कर रहा था, उस समय जीसस (Jesus) जो ईसाई धर्म का क्राइस्ट है का जन्म जूडिया (Judea) में हुआ था। उसके नाम पर ही उस धर्म का उद्भव माना जाता था जो सम्पूर्ण राम साम्राज्य का अन्वेषण रूप में राजधर्म माना। ईसाई जगत के अधिकांश लोगों की धारणा है कि जीसस उस सम्पूर्ण विश्व के ईश्वर का अवतार था जिसे सबसे पहले यज्ञिया ने स्वीकार किया था। इतिहासकार इस विचार को मान्य अथवा अमान्य धारित करने में असमर्थ हैं।

जीसस जूडिया में टाइबरियस (Tiberius) राजा के राज्यकाल में प्रकट हुए। वे मसीहा थे। उन्होंने उनके पूर्वजों को यही मसीहा का भी भांति ही उपदेश दिये। यह कार्य उन्होंने लगभग तीस वर्षों की आयु में आरम्भ किया था। इससे

पूर्व जोसस का कौसा जीवन था, पूरा रूप से अज्ञात है। उनके जीवन तथा उपदेशों के सम्बन्ध में हम जो साधन प्राप्त हैं, वे केवल चार सिद्धांत हैं। वे चारों एकमत होकर हमें उस व्यक्तित्व का ज्ञान कराते हैं और तब हमें कहना पड़ता है कि "यह व्यक्ति वास्तव में था कल्पना नहीं हो सकती अथवा धर्मों की भाँति ईसाई धर्म-वलम्बिता ने भी ईसा मसीह का चित्र विचित्र रूप में उपस्थित कर दिया है। परन्तु वे वास्तव में ऐसे नहीं थे जैसे महात्मा बुद्ध की मूर्तियाँ तब बनने लगीं और मूर्ति का वास्तविक व्यक्तित्व से अतः प्रतिशत समानता का सम्बन्ध नहीं रहा था, ऐसा ही ईसा मसीह के साथ भी हुआ।

ईसा मसीह (Jesus) एक निधन अध्यापक थे जो जूदिया के रेगिस्तान में भ्रमण करते थे और यदाकदा जो शिक्षा के रूप में भोजन मिलता था उससे जीवन निर्वाह करते थे। इसलिये इनका चित्र स्वच्छ वैपभूषण में सुन्दरता के साथ प्रस्तुत करना भूल है। वे बड़े दयालु, गम्भीर तथा उत्सुक (उत्कण्ठित), तीव्र स्वभावी जीव थे तथा एक नया, सरल और गम्भीर सिद्धांत—ईश्वर का सावजनिक स्नेहमय पितृत्व (Universal loving Fatherhood of God) तथा स्वर्गिक साम्राज्य का अवतरण (Kingdom of Heaven) का उपदेश देते थे। वे सामान्य भाषा का प्रयोग करते थे परन्तु उनका व्यक्तित्व अत्यन्त आकर्षक था। उनके अनुयायी स्वयं आकर्षित होते थे और वे उन्हें स्नेह तथा उत्साह से आत्मावित कर देते थे। निबल और रोगी उनके पास आकर समय और स्वस्थ हो जाते थे तो भी यह सच है कि उनका शरीर निबल ही था। यह प्रसिद्ध है कि जब प्रचलित प्रयानुसार उनके वस्त्र पर त्रास रक्खा गया तो वे मूर्च्छित हो गये। उन्हें अपने अपने प्रदेश के आस पास केवल तीन वर्ष ही अपने धर्म का प्रचार किया और फिर जेरुसलम आ गये जहाँ उन पर जूदिया में विचित्र राज्य स्थापित करने का दोषारोपण किया। इस दोषारोपण की जाय परीक्षा हुई और दो चोरों के साथ उन्हें प्राणदण्ड सुनाया गया।

ईसा मसीह के सिद्धांत—महात्मा ईसा का स्वर्गिक साम्राज्य का सिद्धांत उनका मुख्य उपदेश था और अभी तक के प्रचलित सिद्धांतों में जिन्होंने कुछ भी हलचल और मानवीय विचारात् में परिवर्तन किया है, अवश्य ही अत्यन्त आतिकारी सिद्धांत है। यह खबर की बात है कि उस समय की जनता उनके इतने महत्त्वपूर्ण उपदेशों को न समझ सकी थी। केवल इस शका मात्र से ही कि तत्कालीन स्थापित परम्पराओं के प्रति यह एक चुनौती थी यह अपराध हुआ। वास्तव में यह सिद्धांत मानव जाति के लिए साहसी और परिवर्तनकारी उपदेश था। ईश्वर परम पवित्र और जायो है। उनके मतानुसार ईश्वर व्यापारी नहीं है इस स्वर्गिक साम्राज्य में न कोई उच्च है और न कोई कृपा पात्र। ईश्वर ममस्त प्राणियों का जीवित पिता है और सृष्टि की भाँति अपनी कृपा बताने योग्य नहीं है। ममस्त मानव मात्र परस्पर भाई हैं और पापी तथा पुण्यात्मा, उस परम पिता के लिए सब समान हैं। कुछ दृष्टान्तों में यह भी प्रकट किया गया है। महात्मा ईसा न इस प्रवृत्ति की बड़ी

नमना की थी कि जम अपनी तथा अपन जनों की बहुत प्रशंसा तथा दूबरी जानिया की निम्ना करन म तग जान है । अथिका म सम्बन्धित दृष्टान्त म, उन्नि यन्त्रियों का यह था कि ब ईश्वर मे कुछ विशेष अधिकार पान क योग्य है टुकरा गिया था । उनका मत था कि ब सब जा परमेश्वर क राज्य म है परमेश्वर उन सब क लिए एकमा है । जमक व्यवहार म बाद अन्तर नहीं आता क्वाकि उनका उद्देशना की कोई नामा नहीं है । ब प्रत्येक व्यक्ति म अपनी योग्यतानुसार कृत्य पानन चाहता है । जमक राज्य म कोई विभाषाधिकार कोई छूट और कोई बगन नहीं है ।

यदिया का मन्नामा ईसा म य नय तग कि जमक पारिवारिक मुक्त सपठनों और उनक प्रति प्रेम की गन्तार में अन्तर आ जावता और ब सबमव विन्व प्रेम की धारा में परिवार अति का नकाय मनावनिया का बगन न जान योग्य था । उनका सम्पूर्ण ईश्वरगत साम्राज्य उनक अनयायियों म ही मरा जाना चाणिए । महात्मा ईसा न जम प्रकार स्थानीय राज्य प्रेम का नामा और पारिवारिक मामिन बंधना का ममाल कर दिया और मानव प्राणत्व तथा ईश्वरगत विनम्व का पवित्र नावना का प्रसार किया । यनी नहीं आर्थिक भ्रम म व्याप्त का मन् का निम्ना का निजी सम्पत्ति का बरा बनाया और व्यक्तिगत जान तन की प्रवृत्ति का उत्पन्न का उत्पन्न किया । उनका विश्वास था कि मानव मात्र साम्राज्य म सम्बन्धित है और उनका मार्ग सम्पत्ता साम्राज्य की है मय मनुष्या क लिए कृत्य पवित्र जीवन न उत्पन्न योग्य है और इमारा मन्मथ उमो नगवान का मका म अर्जित न । व्यक्तिगत सम्पत्ति और निजा जीवन का गतरीयता का उन्नि सर्व बरा बहाया । यह क्या जाता है कि एक व्यक्ति उनक चरणा म त्रिपट कर य प्राप्तना करन तग कि 'स्वामी म क्या कर्मे जिनम म अमर हा जाऊ । महात्मा ईसा न उनम कहा मम स्वामी क्यों कर्न हा विन्व का स्वामी कवन एक है ब परमेश्वर । अन्तका जमक आत्मा का जान है कि (१) अनिचार न करा (२) गिना न करा (३) चागी न करा (४) अमय गापी न दा (५) छन न करा और (६) माता पिता का सम्मान करा । उन व्यक्ति न जन्म दिया स्वामी य ता सब मै अपन दौबतकान मे ही करना आ गया न । तब मन्नामा ईसा न उन मन्मथी जति म निहारा और कहा अमम एक अनाब इ पुन जादए और आत्मे पास जा कुछ है मन् जिन करक निधना म तिनरिन कर शीघ्रिण तो म्मय म आपक लिए वाय मर जाणा । तब आप आकर शान धारण करक मरा अनुकरण काजिए । तब बह बहा उपाय हो गया क्वाकि जमक पान अपार सम्पत्ति थी । ब स्पष्ट क्या बरनु थ कि मुर्दे क छिद्र म म उँरे का निवृत्तना ता मरन है परन्तु सम्पत्तिगतियों का स्वा द्वार म प्रवण पाना अयन कहिन है ।

महात्मा जना न कवन नरिक् एक सामाजिक श्राति ही ननों की बरन् अपन उपाया द्वारा म्मष्ट सामनिक परिवर्तन ना किया था । यद्यपि ब बहुत ये कि उनका साम्राज्य जम मसार में नहीं स्वय म है सिहासन पर नहीं मानव हृत्प

मे है, परन्तु इन सब सिद्धान्तों का श्रावितकारी प्रभाव बाह्य जगत पर होना अवश्यम्भावी था। उसके श्रोताओं ने चाहे पूरा सुना या समझा न हो, किन्तु वे इतना अवश्य समझ गए थे कि ये श्रावितकारी विचार हैं। उनका विरोध, वह स्थिति और प्राणदण्ड इन बातों को सिद्ध करत हैं कि उनका मानव जीवन में श्रावित करने का नियम बहुत स्पष्ट एवं दृढ़ था। इसीलिए सब धनाढ्य और समृद्धिवादी लोग उनसे भयभीत हो गए थे। महात्मा ईसा एक ऐसे भयकर नतिक शिकारी की भाँति थे जो अभी तक गोपनीय मंदिर में रहने वाली मानवता की निकाल कर प्रकाश में लाना चाहते थे। उनसे ईश्वरीय साम्राज्य में सम्पत्ति, विगपाधिकार, धमण्ड, ऊँच नीच का भेद लालसा, पत्र प्राप्ति आदि के लिए कोई स्थान नहीं था, केवल प्रेम ही प्रेम व्याप्त था।

ईसाई धम का सद्भावितक विकास—महात्मा ईसा के चार सुसमाचारा (Gospels) में उनके व्यक्तित्व और उपदेशों तो मिलते हैं परन्तु ईसाई धम के सिद्धान्त बहुत कम प्रकट होते हैं। यह धाम उनके अनुयायियों ने किया और ईसाई धम का मूल सिद्धान्त का निर्धारित कर लिया। सेंट पाल उनमें मुख्य थे। उनका प्रारम्भिक नाम साल (Saul) था। उन्होंने महात्मा ईसा का दहन नहीं किया था और न उपदेश ही सुना था। पहले वे महात्मा ईसा के विरोधियों में भी थे, किन्तु बाद में वे अचानक ईसाई धम के अनुयायी बन गए और अपना नाम भी बदलकर पाल कर लिया। वैसे तो प्रारम्भ में सभी धर्मों का कठिनाई एवं सन्देश का सामना करना पड़ा है परन्तु ईसाई धम को सन्देश का विगप सामना करना पड़ा, क्योंकि राजाओं की प्रतिष्ठा और वगैरह तथा सम्पत्ति जैसी सत्त्व्याओं का सम्पूर्ण महत्त्व ही यह मिटाना चाहता था। इसलिए पूजापतियाँ न इसे भ्रष्ट धम (Seditious) कहा और इसके गुणों पर कोई ध्यान नहीं दिया। परन्तु सेंटपाल के अथक परिश्रम और अपूर्व योग्यता से ईसाई धम लोकप्रिय बनता चला गया।

ईसाई धम की देन—सांख्यिक ईश्वरीय पितृत्व मानव वधुत्व आदि सिद्धान्तों के अनिश्चित प्रत्येक मानव को भगवान का स्वरूप समझने की प्रवृत्ति का सामाजिक और राजनतिक क्षेत्र में विक्षेप महत्त्व है। विश्व में मानव की प्रतिष्ठा स्थापित करने का गौरवपूर्ण उदाहरण है। कुछ विरोधी यह कहते हैं कि सेंटपाल ने यह प्रतिपादित किया था कि दासों को आजापालक होना चाहिए। परन्तु यह सच है कि महात्मा ईसा इस स्थिति के विरुद्ध थे कि एक मनुष्य दूसरे मनुष्य को अपना सेवक बनाए। प्रथम दो शताब्दियों में यह धम समस्त रोम साम्राज्य में फैल गया था और उसके बाद निरंतर लांबा व्यक्तिमा का धम परिवर्तन कराते हुए फैलता रहा। आज भी इस धम के पादरी लोग अपना समस्त जीवन अर्पित करते हुए मानव की सेवा में लगे रहते हैं। चिकित्सालय पाठशालाएँ और अथ ऐसी सत्त्व्याओं का आज विश्व में जाल सा बिछा हुआ है और उनके पास अपार धनराशि भी है। सम्भवतः आज विश्व का सबसे अधिक प्रचारित सगठित और उन्नत धम माना जाता है। भारतवर्ष में इस धम ने सामाजिक समानता की स्थापना में बहुत

गहायना की है तथा गिगा प्रणार म भी याग किया है ।

इस्लाम धर्म—इस धर्म का जन्म अरब में हुआ था । इसका संस्थापक मुहम्मद गात्रव थे । इनका जन्म मक्का के एक साधारण निधन परिवार में मने ५७० ई० में हुआ था । इनका गणव कान साधारण था और इनके पिता के यहाँ स्थानीय हुआ था । उमरमय चानाम वय का उम्र तक इनका कोई विनाय प्रभाव स्थापित नहीं हुआ था । परन्तु मुहम्मद साहब एक व्यक्ति हुए जिन्होंने अरब जगत का प्रकाशमान कर दिया । अपनी पत्नीम वय का धानु में इन्होंने मक्का में चानाम वय का एक सम्पन्न परिवार की विषया महिना में विवाह किया था । धार्मिक विरचनाया में उन्हें प्रारम्भ म गचि थी । मक्का उम समय प्रतिमा पूजक (जा इस्लाम धर्म के विरुद्ध है) नगर था और विनाय तीर पर एक श्याम प्रस्तर (कावा) की पूजा होती थी जा ममस्त अरब में बहुत प्रसिद्ध था । यह साथ यात्रा का भी केंद्र था परन्तु यहाँ यहाँ भी बहुत रक्त थे । अरब के शीत भाग में यहाँ धर्म का प्रचलित था मारिया में कुछ गिरिजापर भी थे । अरब की स्थिति सामाजिक राजनतिक धार्मिक तथा धार्मिक स्थिति म स्थापय था अतः मुहम्मद गात्रव ने यह गुजारने का एक मकल्प किया ।

उमरमय ६० वय का अरब्या में मुहम्मद गात्रव का ईश्वरय प्रेरणा मिली और वे अपने घरका स्वर का अवनार (गया का पगम्बर) कर्तन गे । मवप्रथम उगाने अना धमरना म का क्या कि अन्त्या एक है और मन्मन् उमरा पगम्बर है तथा अन्त्या का फन अन्त्या और वगई का फन करा जाता है । यह विचार यहाँ और यहाँ धर्म में प्रभावित थे । अन्त्याने अपने समयका का एक ममन् बनाया और यहाँ नगर में मतिपूजा का स्थापन आरम्भ कर दिया । एक कारण व यहाँ के नगरवासिया का अटनन गे कयाकि काया में तीर्थयात्रा के कारण का वह सब बमर और सम्पन्ना थी । परन्तु वे अपने विवाया में दुष्ट और अज्ञान में माहगी बनने पर और धारणा की कि म मन्ता का पगम्बर का तथा धर्म का गद बनाने का काम मने साधा गया है । अन्त्याने कुछ पवित्रता का रचना का और कहा कि मन् भगवान के दूत द्वारा मने पाग मन्ता गे है । ज्या यथा उनका उपासकों का जार बना यहाँ-यथा विनाय भा बनता तथा और अतः उनका हया का पदयत्र रचा गया । परन्तु वे अपने गिष्य और अन्त्याया आ अन्त्या वत्र त साथ यहाँ में सब निकट और मन्तीना आग । मन्त्याने म धार्मिक कर्तनाय्या का दूर करन के लिए अन्त्याने कायकी नूतना आरम्भ कर दिया । यह काय के लिए अन्त्याने दान की व्यवस्था भी की गई (मने ६०६ ई०) परन्तु मन्त्याने नया मितो । फिर मुहम्मद साहब ने मक्का पर भा आक्रमण शुरू कर दिया और उमरमय १२ वयों में पचास आक्रमण विण । तन्त्यावाने जाना में मतिथे का मन् । इसके फलस्वरूप मक्का में एकरवराण की स्थापना हा गद । काय के वर के अतिरिक्त काय का अन्त्या गाया मूर्तियाँ आक्रमणों के समय मुहम्मद साहब ने ताण टाना था । मने ६२६ ई० में पुन मक्का आ गए और एक वय बाद अपने धर्म दूत त्रिचिन्पम टाडमग ((Tai tsung) का वय

तथा अय सब सम्राटो के पाम धम प्रचार के लिए भेजे थ । तत्पश्चात अरबी मृत्यु के समय सन ६३२ ई० तक लगभग चार वष मे उहाने सम्पूर्ण अरब मे अपना अधिकार जमा लिया था । उहाने कई विवाह किये (इस्लाम मे चार विवाह तक की आज्ञा है इहाने दस विवाह किये) । एसा प्रतीत होता है कि वे बहुत धमण्टी लोभी, चालाक आत्म कपटी तथा बहुत सच्चे धर्मोन्मत्त व्यक्ति थे ।^१ उहाने आदेश और व्याख्याना की एक पुस्तक लिखवाई जिसे 'कुरान' कहते हैं । उनका कहना था कि यह ईश्वरीय आज्ञा है, परंतु उसके साहित्य अथवा दशन से ऐसा विद्वान नही होता ।

इस्लाम के सिद्धांत—दस धम के सिद्धांत 'कुरान' मे मय्यहीत हैं । इसमे ११४ अध्याय हैं जिनमे धम समाज नीति आदि सभी विषया पर नियम हैं । इसे अत्यंत पवित्र माना जाता है । उनकी मुख्य मुख्य शिक्षाएँ इस प्रकार हैं — (१) अल्लाह एक है तथा मुहम्मद उसका पगम्बर है । (२) प्रत्येक मुसलमान के चार कतय हैं, नमाज पढना खरात करना रमजान माम मे रोज रखना तथा मक्का का तीर्थ (हज्ज) करना । (३) प्रत्येक मुसलमान को दिन मे पाच बार नमाज पढना चाहिए और गुन्नवार (जुम्मा) क दिन ता अवश्य ही । (४) परस्पर बंधुत्व की भावना तथा अल्लाह मे अटूट विश्वास रखना चाहिए य दोना मूल तत्व हैं ।

मुहम्मद साहब की मृत्यु क बाद इस धम का विभाजन हो गया—एक गिया और दूसरा सुनी कहलाया । यह केवल राजनतिक भेद था । आज ईरान क अतिरिक्त अय देगा मे अधिकतर सुनी ह । वाद मे इम धम मे रहस्यवादा भी चल पडा और वे अपने को सूफी कहने लगे । यह भी कहा जाता है कि इम धम का वास्तविक सस्थापक मुहम्मद साहब का मित्र अरू बन्न था । यदि मुहम्मद साहब प्राचीन इस्लाम के मस्तिष्क और कल्पना थे तो श्री बन्न उसकी आत्मा और वाणी । जब मुहम्मद साहब विचलित हात थे श्री बन्न ही उह सभालत थे । उनके बाद श्री बन्न ही उनके उत्तराधिकारी खलीफा बने । इस प्रकार मुस्लिम धम की सशिप्त गाथा है ।

विभिन्न धर्मों का पारस्परिक सम्बन्ध—उपरोक्त वणन से कुछ कुछ आभास होता है कि सब धर्मों का मूल उत्पादन भारतीय धम से हुआ है । बौद्ध धम और जन धम क अतिरिक्त इस्लाम तथा ईसाइ धम भी भारतीय धम से सम्बन्धित हैं । हजारो वष प्राचीन मोहनजोदडा की सभ्यता मानी गई है किन्तु उससे भी पूव दक्षिण अमेरिका मे हिन्दू धम का प्रचार था यह स्वीकार किया जाता है । एशिया के प्राय सभी धम अपना आध्यात्मिक ज्ञात हिन्दू धम को ही स्वीकार करत हैं । योगिक साधना तथा आंतरिक पूजा का विन्लेषण सबप्रथम भारत मे ही हुआ था । इसके पश्चात् सब धर्मों को सूत्रम भाव से विचार करन की शिक्षा मिली । इस प्रकार जिन आध्यात्मिक तत्वा पर हिन्दू धम आधारित हुआ व सब अय धर्मों के भी

अनिवार्य अंग बन गया। ये तब मात्रमीमित थे। बौद्ध धर्म इन क्षेत्र में धीरे धीरे प्राण रहा। प्रत्येक गमात्र धीरे स्थिति के लिए यह धर्म अनुसूत हुआ। वहाँ गामात्रित प्रतिबन्ध नहीं था। यद्यपि इस्लाम धीरे स्थाई धर्म अनेक मन का प्रसार करना प्रमुख कार्य समझते हैं तथापि एकरवाक का विद्वान् सिद्ध धर्म के प्रमुख विद्वान्ता में भी एक है। ऊपर से धर्म एक सम्प्रदाय के मित्र तथा एक सम्प्रदाय के शत्रु हैं परन्तु वास्तव में यह साम्प्रदायिक रूप धार धार के प्रभावकारी द्वारा धीरे कवन मात्रमीमित रूप के महार रह गया जहाँ मात्र भी प्राणि स्थाई धर्म के द्वारा भी मनन मानी जान गयी। फिर भी इन धर्मों में अन्तर्गतता का रूप रहा प्रत्येक। यह मात्र है कि धर्म का प्राण विरहित होकर विज्ञान एवं बुद्धिवाक का रूप धारण कर जाता है। इस दृष्टि में सिद्ध धर्म पूरा रूप से वैज्ञानिक है। त्रिम तरे विज्ञान के क्षेत्र में प्रत्येक प्रयोग के बाद एक विद्वान् रहता है जो तब सिद्ध धर्म का पृष्ठ भूमि में गया प्राणित विद्वान् रह है। इस दृष्टि में सब धर्मों में तात्पर्य एवता के रूप में हैं। सिद्ध धर्म बद्ध धर्म धीरे जन धर्म सब यथा कथन है कि गाय अथवा स्त्री का साक्षात्कार करना सभी के लिए समत है। कुछ सम्प्रदाय फिर भी सिद्ध धर्म में एक के जहाँ स्त्री का साक्षात्कार कवन पतिव्रतिक पुण्या के लिए समत मानते हैं धीरे एक पुण्य गुण के रूप में स्वारार लिए जानते हैं। मात्र प्राणि गुरु की कृपा के द्वारा भी समत मानी जाता है। एक सम्प्रदाय स्त्रिय धीरे स्थाई धर्म का समता में रखे जा सकते हैं।

बद्ध धर्म तथा जन धर्म भी सिद्ध धर्म में ही सम्मिलित लिए जानते हैं। प्रारम्भ में बद्ध तथा मात्रवीर के सिद्ध गुरु का पता न था। वैश्व तथा ब्राह्मण धर्म में उ पुनया परिचित थे धीरे उनका विचार भी करत थे परन्तु गाय भी अनेक धर्मों का एक धार धर्म भी कथन थे। अतएव ये ताना धर्म ब्राह्मण रूप, बद्ध धर्म तथा जन धर्म धार धर्म के का अंग बन गए धीरे पतिष्ठ रूप में सम्मिलित हो गए। वास्तव में धर्म आन्तरिक गति का मात्र ही नाम है धीरे आन्तरिक तब भी धर्म का मार है। यह सब धर्म स्वारार करत हैं। मात्र गाय की स्थानता के कारण प्राचीन युग का प्रत्येक मानव सिद्ध था।

व्यक्त—भारतीय अध्यात्म गाम्भ का मुकुटमणि माना जाता है। व्यक्त का मत व्यक्त प्रतिपत्ता का माना गया है। वक्ता के गुरु रूपमें विद्वान्ता का समयक हान के कारण ही इस व्यक्त (वक्ता का अन्त=विद्वान्ता) का मता भी गई है। व्यक्त के प्रसिद्ध भाष्यकारों में निम्नलिखित नाम उल्लेखनीय हैं—गुरु गमानुज, जमिनि, भास्कर मध्व निम्बाक आदि। व्यक्त के मूल विद्वान्ता करने हैं कि नु समन्त में कथित है। ये ब्रह्म की एकता तथा अन्तर्गत जगत की सादिकता में विश्वास करत हैं। इस तथ्य का समन्त के लिए कुछ मूल विद्वान्ता का पान अनिवार्य समन्त है जैसे आत्मा के अस्तित्व के विषय में गुरु करने की तनिक भी जगत् नहीं है। आत्मा पान रूप है धीरे पाना भी है। मात्र वस्तुतः पान में प्रत्येक न था। ये पाना निम्न निम्न वस्तु नहीं है (आत्मा आत्मान जानाति—

आत्मा आत्मा को जानता है)। दूसरा, दृष्टि दो प्रकार की होती है—नेत्र की दृष्टि जो अनित्य है तथा आत्म दृष्टि जो नित्य होती है। दस काल की उपाधि द्वैत सत्ता को मित्र करता है परन्तु यह काल्पनिक है। निर्विकार तथा निरुपाधि सत्ता का नाम 'ब्रह्म' है और वही जगत की उत्पत्ति, स्थिति तथा लय का कारण है। परमेश्वर की बीज शक्ति का नाम 'माया' है। अतःकरणवच्छिन्न चैतन्य का जीव कहते हैं। जीव अपने स्वरूप के अज्ञान के कारण ही विद्वत्त म अनेक कष्ट भोगता हुआ विचरण करता है। यह वदान्त का संक्षिप्त वर्णन है। आचार्य शंकर इसके प्रमुख प्रतिपादक हैं। उन्होंने 'कर्म की प्रधानता दी है और फलकामताहीन (निष्काम) कर्म का महत्व बताया है। गीता का तत्व 'कर्मण्येवाधिकारस्त भा फलेषु कदाचन इमी का प्रतिबिम्ब है। इस प्रकार वद्वान्त अत्यन्त प्राचीन एवं व्यावहारिक धर्म के रूप में स्वीकार किया गया है और प्राचार्य शंकर न इसकी स्थापना में सबसब अहित किया था। इमी लिए उन्हें भगवान् शंकर का अवतार माना जाता है।

सांख्य दशन—इस दशन में 'संख्या' का नितान्त मूलभूत सिद्धांत होने के कारण इसे "संख्य" कहा गया है। यह भी बहुत प्राचीन दशन है। इसका स्रोत भी उपनिषद् है। त्रिगुणात्मक सिद्धांत (सत् रज और तम) सांख्य का प्राचीन सिद्धांत है। इसके अनुसार जगत की सृष्टि में ये तीन ही रूप कारणभूत हैं ये ही सत्य हैं। जगत केवल नाम रूपात्मक होने से विकार मात्र है। प्रकृति एक है अज्ञा—उत्पन्न न होने वाली। ईश्वर प्रकृति क्षेत्रण या जीवों का तथा गुणों का अधिपति है। प्रकृति ईश्वर की माया शक्ति है तथा प्रकृति का अधिपति महेश्वर मायो कहता है। इस दशन के प्रमुख समर्थक एवं प्रतिपादक में निम्न आचार्यों का नाम सम्मिलित हैं—कपिल आमुनि, पञ्चनिख, विष्वक्वामा, विष्णु भिष्णु आदि। सांख्य दशन में तत्त्वा की भीमामानुमार २५ तत्व माने गए हैं जिनका वर्गीकरण चार प्रकार से किया जाता है —

(१) प्रकृति—एसा तत्व जो सबका कारण तो होता है किन्तु स्वयं किमा का काय नहीं होता (संख्या १)।

(२) विकृति—कुछ तत्व काय ही होत ह—स्वयं किमी से उत्पन्न होत हैं किन्तु स्वयं किसी अय को उत्पन्न नहीं करते (संख्या १६)।

(३) प्रकृति विकृति—कुछ तत्व काय तथा कारण दोनों होते हैं—उनमें कुछ तत्त्वा से उत्पन्न भी होत हैं और अय तत्त्वा का उत्पादन भी होत ह (संख्या ७)।

(४) न प्रकृति-न विकृति—कोई तत्व काय तथा कारण दोनों ही सम्बन्ध से गूय होता है (पुरुष संख्या १)।

सांख्य का एक बिलक्षण सिद्धान्त है जिस काय कारण सिद्धान्त कहते हैं। तदनुसार उत्पत्ति से पहले भी काय कारण में अभ्यक्त रूप से उपस्थित रहता है। इसलिए काय तथा कारण में वस्तुतः अभिन्नता है। इने परिणामवाद भी कहा जाता है। सांख्य दशन वास्तव में द्वैतवाद का समर्थक है। उसकी दृष्टि में प्रकृति और पुरुष दोनों मूल तत्व हैं जिनके परस्पर सम्बन्ध से इस जगत् का सृजन होता।

है। प्रकृति जगत् है तथा एक है और पुरुष चेतन है और अनक है। इस जगत् न ममस्त पत्नय—मन शरीर इन्द्रिय, बुद्धि आदि सीमित तथा अस्वतन्त्र हान के कारण काय रूप है। अतः उत्पत्ति किसी न किसी मूलतत्त्वं न हुई है। अतः मतानुसार जगत् का स्वप्न गुण गुण माहात्मक है तथा प्रकृति और पुरुष के गाय म हा त्रिदश की मृष्टि जाती है। प्रथम अनुमान तथा अन्त तान प्रमाण गाय म स्वीकार किए गए हैं। गाय और अस्मि गाय गानिना के अन्त गाय का मूत्राकार है। मुनि गान का प्रकार का मानी है—आत्ममुक्ति तथा विद्वान्मुक्ति। इनका आचार्यों का विश्वास है कि जगत् की रचना तथा कम गिद्धान्त के लिए ईश्वर का मत्ता स्वीकार करना आवश्यक नहीं है।

इस प्रकार गाय न चेतन का मत्ता पुरुष रूप म स्थापित की है और प्रकृति का मय अन्त केवल का हा सीमित त न मान है। मर्त्य कथित न अतनी मूत्र बुद्धि के द्वारा अन्त का बहुत उन्त ग्टाया है। इसका अन्त न उग अन्त अन्त हुए पूणता प्रान का है।

अन्याम के लिए प्रश्न

- १ निम्नलिखित में से किसी एक पर परिचयात्मक विवरण लिखिए —
हिन्दू धर्म बृद्ध धर्म जन धर्म, इस्लाम धर्म, ईसाई धर्म।
- २ ब्रह्म न और गाय पर विरचनात्मक टिप्पणियाँ लिखिए।
- ३ 'भारतवर्ष के प्राचीन सभी धर्मों में एकता है'। इस कथन की पुष्टि करते हुए अपने विचार व्यक्त कीजिए।
- ४ निम्न में से किन्हीं तीन पर सविस्तार टिप्पणियाँ लिखिए —
कपिल, शंकर, मुहम्मद इताइत, माधव, निम्बार्क विष्णुधामी।

छठा अध्याय

साहित्य के मूल सिद्धान्त

प्रस्तावना—आज का मानव समाज धन, ऐश्वर्य एवं शक्ति का पुजारी बन गया है। व्यापार ने मनुष्य का धन लोचुप तथा राजनीति ने उसे वैभव प्रिय बना दिया है। इसीलिए धन एवं ऐश्वर्य की खाज में मानव अर्थात् एव पागल होकर देश विदेश का भ्रमण करना है और इसी मगत्तणा में युद्ध तथा विद्रोह की अग्नि भड़काता जाता है। मनुष्य की सारी मानसिक एवं शारीरिक शक्ति इन्हीं दोनों वस्तुओं की प्राप्ति में लगी हुई है, इसलिये मानव हृदय हीन बनता जा रहा है। इस हृदयहीन मानव का पुनर्जीवन देने के लिये साहित्य का मूजन हाता है। जिसमें प्रत्येक सहृदय मानव के अस्तित्व को स्पर्श करने की क्षमता होनी है। वैसे मानव केवल धन या रोटी व बल पर जाकित भी नहीं रह सकता। उसके शरीर को भोजन चाहिये परन्तु शरीर उसका केवल अर्धा भाग है। उसके हृदय और मस्तिष्क का पोषण भी उतना ही आवश्यक है। इनके पोषण का कार्य साहित्य द्वारा सम्पन्न होता है।

साहित्य—सहित्य भाव साहित्य जिसमें सहित का भाव हो, उस साहित्य कहते हैं। अर्थात् जो हमारे हितकारी भाव हैं वही साहित्य है। कवीन्द्र रविन्द्र का गीता में साहित्य की सुन्दर व्याख्या हुई है। वे कहते हैं—सहित शब्द से साहित्य शब्द की उत्पत्ति है अतएव धातुगत अर्थ करने पर साहित्य शब्द में एक मिलन का भाव दृष्टिगत होता है, वह केवल भाव का भाव के साथ, भाषा का भाषा के साथ, श्रम का श्रम के साथ मिलन है, यह नहीं बरन वह बतलाता है कि मनुष्य के साथ मनुष्य का अतीत के साथ वर्तमान का दूर के सहित निकट का अत्यन्त अन्तरंग योगनाशन साहित्य है यह और किसी के द्वारा सम्भव नहीं। जिस देश में साहित्य का अभाव है, उस देश के लोग परस्पर सजीव वचन से बंधे नहीं विच्छिन्न होते हैं। अतः साहित्य शब्द बहुत व्यापक है। वस्तुतः साहित्य समाज का जीवन एवं समाज का दर्पण है तथा समाज के उत्थान एवं पतन का साधन है। साहित्य के उत्थान होने से समाज उत्थित एवं साहित्य के पतन से समाज का पतन होता है। साहित्य ऐसा आलोक है जो समाज का अंधकार संहित कर उसके मुख को उज्ज्वल बनाना हुआ ज्योतिमय नश प्रदान करता है। वह साहित्य साहित्य नहीं है जिससे समाज का जीवन चेतनाहीन न बन, हृदय में प्रेम का संचार न हो। यह काय गद्य और पद्य साहित्य की दोनों प्रमुख शाखाओं द्वारा संपादित होता है।

साहित्य की आवश्यकता—विचारपूर्वक देखा जाय तो जीवन में आनन्द प्राप्ति के अनेक साधन उपलब्ध हैं। खन कूट भ्रमण आदि कुछ ऐसे ही प्रकार हैं, परन्तु जब शरीर माय न द और विताया का समूह निरंतर बढ़ता जाय, अमफल-

ताप्राप्त जीवन भारमय प्रतीत हो, उस समय साहित्य, और विशेष तौर पर काव्य हमारे जीवन का फिर प्रफुल्लित बना देता है। दुःख तथा ग़म, विरह तथा वदना, भय तथा मृत्यु, राग तथा निराशा, कष्ट तथा कठिनाईयाँ जय अनादिकरण मुद्दा खानकर सम्मुख आते हैं ता हम इलाक़ा हा जान हैं। एम अवसर का मुमकम बना देन की क्षमता दुःख म साधना एन का बन बनन साहित्य म है। कवि एव साहित्यकार एम ही मूक साहित्य का मूजन करत हैं। परन्तु एमम यद् निरूपण नहीं निबन्ना कि हमारे मुम्की जीवन म साहित्य का उपयोग नहा है। मुम्की जीवन म भी साहित्य उनना हा उपयोगी रहता है। वास्तव म साहित्य हमारे अवकाश का गानि तथा ध्यस्त जीवन की प्रकृतता का सात है।

भारतीय साहित्य का विकास—भारतीय साहित्य का आरम्भिक रूप एम में उपलब्ध जाता है। बरिह साहित्य का अनेक स्थितियाँ हैं—मूर्तियाँ ब्राह्मण ग्रथ आरण्यक उपनिषद् ब्राह्मण स्मृतियाँ और अथर्ववेद एनम ब्राह्मण ग्रथ, ब्राह्मण और स्मृतियाँ सूत्र ग्रथ गद्य म हैं। प्रायः यमगायत्रि है ता पद्य म किन्तु एनम काव्य तन्त्र का अभाव है। एमना कारण यथा कि एम साहित्य में विषय प्रदान और पार्थिव है। एमम मात्र एन और नीतिकता का अभाव है। एमतिरिक्त बरिह साहित्य म बार्डे काव्यगतता विकसित नाकर उन्नत नहा टुट। बरिह साहित्य क बार्ड ममृतन साहित्य हा युग आरम्भ जाता है। वास्तविक त्त रामायण एन युग का प्रथम मया काव्य है। एम युग म अनेक मयाकवि एम और अनेक मयाकाव्या का मजन टुट्टा। एम समय काव्य का अरिह मत्व रता। एमक एमबान प्राकृत साहित्य का विकास टुट्टा। पानी म कया बानन साहित्य का विकास टुट्टा परन्तु एमम मय साहित्य प्रदान हान क कारण प्रभाव मामित रता। प्राकृत म पद्य साहित्य का प्रदानता एन क कारण विकास प्राप्तता म टुट्टा और प्रभावगतता ना रता। एमबान अवतरण साहित्य प्रकट टुट्टा। एन मयाका क एमय एम धर्मा म आत है। एम समय तक यद् स्पष्ट एम म कया जा सकता है कि बरिह साहित्य म आरम्भ करत प्रमया काव्य का एम और आकार देना रता है और गद्य का चरता रता है और अवतरण तक आत आत काव्य ना काव्य उपलब्ध जाता है। एमक अतगत मिद्ध साहित्य तथा नाम साहित्य का प्रमथ स्थान रता है। एमका गताता क अत तक एम विकास उपलब्ध रता। आरनिह साहित्य का आरम्भ बार काव्य म नाकर पार्थिव काव्य, शृंगारिक काव्य स्वयंसेविका साहित्य क एमबान उपलब्धता रम्यवाक्य प्रगतिगत प्रताकवाक्य एमबानवाक्य तथा प्रयोगवाद साहित्य का आरम्भ देना जा रता है।

साहित्यिक सिद्धांत—साहित्य, मूलतः एव कथा का मानव जीवन म एमका सम्बन्ध है। वीम ना प्राणभाव म अनेक अनुभवों क अन्वितिक वा एनक एमका गती है परन्तु साहित्यकार म एनका मूमम एलि क कारण यथा एमका और भी बनवता हाती है और साहित्य एम बान पद्य क माध्यम म व अनेक अनुभव माधारण जनता तक पहुँचा एन है। एम साहित्य म स्याधी आकषण तथा एमबान आनन्दानिना अतिरिक्त हाती है। वास्तव म कथा का नीति साहित्य का अन्वितिक ट्टा जीवन क विरह

है। विशेषतः काव्य जीवन से ही आविर्भूत है इसकी सत्ता जीवन से ही है और जीवन ही के लिए उसका प्रकाश है। उत्तम साहित्य के लिए कुछ विशेषताएँ अनिवार्य हैं जिनके कारण उसकी लोकप्रियता एवं महत्ता सदैव बनी रह सकती है। अनेक ऐसी विशेषताएँ मे से कुछेक निम्न हैं —

(१) सावभौम मानव अनुभूतियाँ—इसका समावेश साहित्य में हो जाने से साहित्य अमरत्वं प्राप्त कर लेता है क्योंकि मानव मूल्य अधिकांश समय और स्थिति के साथ घोर परिवर्तित नहीं होते। इसलिए ऐसे अनुभव सदैव नवीन और जीवित प्रतीत होते हैं तथा पाठकों को आत्मानुभूति द्वारा आनन्द प्राप्त होता है। जैसे कालीदास का मेघदूत, शंकराचार्य के नाटक, तुलसी और सूर के भजन और गीत आज भी वही आनन्द प्रदान करते हैं जो प्राचीन काल में करते थे। इसका कारण यही है कि मानव अनुभूतियाँ उसी कोटि की हैं जो सदैव, सब परिस्थितियाँ में सदा एक ही और महत्वपूर्ण रहती हैं।

(२) काव्य और छन्द—काव्य प्रत्येक साहित्य का विशेष अंग होता है और छन्द के साथ इसका गहरा सम्बन्ध है। फिर भी छन्दहीन कविताएँ होती हैं जिन्हें कुछ लोग गद्य काव्य की सजा देते हैं। साथ ही छन्दमय काव्य को पद्य भी कहते हैं। वास्तव में गद्य और पद्य में विरोध नहीं है। श्रेष्ठ कलाकार गद्य में भी काव्य की आत्मा रख सकता है। इसलिए काव्य रूप पर ही निर्भर नहीं हाता वरन् आंतरिक लक्षणों ही पर निर्भर होता है जिसमें कल्पना की मात्रा विशेष होती है। इसीलिए गद्य में भी कल्पना का आनन्द पर्याप्त मात्रा में होने पर वह भी गद्य काव्य कहलाता है। साथ ही पद्य में कल्पना का अभाव हो तो वह भी केवल छन्दपूर्ण पद्य मात्र रह जाता है जैसे बघरू, ज्योतिष आदि की पुस्तकें। इस प्रकार साहित्य में कल्पना का स्थान बहुत महत्वपूर्ण माना गया है। काव्य रचना में संगीत की मात्रा अनिवार्य है और इस संगीत का प्रकाश छन्द द्वारा सुविधापूर्वक हो जाता है। छन्द काव्य सुंदरी का आकर्षक आभूषण है इससे उसके सौन्दर्य में चार चाँद लग जाते हैं। इसलिए प्राचीन एवं अर्वाचीन साहित्यकारों और कवियों ने छन्द और काव्य में आत्मिक सम्बन्ध स्वीकार किया है। पद शब्द का प्रयोग भी इसी रूप में अनेक स्थानों पर विभिन्न अर्थों में किया जाता है। नृत्यकार का पद कविता के पद, भजन आदि पद कहलाते हैं और इसीसे पद्य शब्द बना है।

(३) साहित्य, रस तथा अलंकार—किसी भी साहित्य को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए विभिन्न अलंकार और रस का प्रयोग किया जाता है। परिस्थिति के अनुसार अनुकूल रस अपनी अमिट छाप जमाने में और अलंकार उसके प्रकाश को जागृत्यमान करने में सफल होते हैं। इसीलिए साहित्य में नवरस और उनकी महत्ता तथा विभिन्न प्रकार के अलंकारों का विश्लेषण करते हुए उन्हें साहित्य के अमूल्य अंग के रूप में स्वीकार किया गया है।

साहित्यिक समालोचना—वर्तमान समय में समालोचना साहित्य का अनिवार्य अंग बन गया है। अतः समालोचना का अर्थ एवं उसकी महत्ता को समझना

के लिये प्रस्तुत रहना चाहिये। वह सूक्ष्म वृद्धि तथा चतुर हो। वह निष्कल रहत हुए भी स्वतंत्र उद्घोषणा करने की क्षमता से युक्त हो। उसका ज्ञान नवीनतम तथा पूण होना चाहिये। उसे अर्थ भाषाभाषा का ज्ञान होना चाहिये तथा पर्याप्त भ्रमण का अनुभव भी आवश्यक होता है। अपने विषय की तकनीकी से पूणरूपेण विज्य होना चाहिये। अतः म, उसे इस क्षेत्र का दोष अनुभव हो और प्राकृतिक श्रुति के साथ अथवा अर्घ्यवसाय सरीखे गुणों का समन्वय हा यह भी आवश्यक है।

वर्तमान समय में साहित्य का बलेवर वृद्धि विवर्धित हो गया है। प्राचीन साहित्य शिगु साहित्य प्रौढ साहित्य सिनेमा साहित्य गल्य साहित्य आदि अनेक शाखायें प्रचलित हैं और दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। एम अवसर पर समस्त साहित्य का अध्ययन न तो सम्भव है और न वाञ्छनीय। अतः समालोचक का कार्य और भी अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण हा जाता है। अपनी शक्ति की दृष्टिया का सज्जन होने के पश्चात् सर्वप्रथम उनकी समालोचना पर ही दृष्टि जानी है। इमनिधि यदि उचित समालोचना है तो लक्षक के प्रति पाठक के प्रति और समाज के प्रति मन्वी सेवा होती है किन्तु अपने कर्तव्यमार्ग से विचलित नाकर यदि अन्यायपूर्ण स्तुति प्रथवा अनुचित निन्दा कर ली जाय तो इन सभी के साथ धार अयाय होना है। अतः इस विज्ञान के विकसित निरन्तर दीन सज्जन साहित्यिक विश्व में समालोचना एव समालोचक का स्थान अभूतपूर्व एव महत्व का बन गया है।

अभ्यास के लिए प्रश्न

- १ साहित्य से आप क्या समझते हैं ? इसकी मानव समाज में आवश्यकता है, इस कथन की पुष्टि कीजिए।
- २ भारतीय साहित्य का विकास किस प्रकार हुआ ? संक्षेप में लिखिए।
- ३ साहित्यिक विद्वान्त क्या होते हैं व्याख्या कीजिए।
- ४ समालोचना किसे कहते हैं ? समझाइए और इसकी उपयोगिता पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।
- ५ अच्छे समालोचक के अनिवार्य गुणों पर टिप्पणी लिखिए।

भारतीय निधि

(HERITAGE OF INDIA)

सातवा अध्याय

भारतीय सभ्यता तथा आर्यों का आगमन

प्रस्तावना—आज भारतवर्ष सगार व प्राचीनतम सभ्य देश की श्रेणी में बहुत ऊँचा स्थान रखता है। सन् १६२२ तक तो भारतवर्ष की सभ्यता बसल बर्तमान तक ही स्वीकार की जाती थी किन्तु सिंध व लखाना जिले में माहिनजोडा तथा पञ्जाब व मॉण्टगमरी जिले में हरणा स्थान पर पुनर्दा द्वारा प्राप्त धवणियों से भारत का सभ्यता व प्राचीनतम होने का मान हुआ और अब भारतवर्ष सभ्यता के क्षेत्र में और भी अधिक प्राचीन सिद्ध हो गया। डॉक्टर राधाकुमु मन्त्रों तथा अग्रज विद्वान श्री बस तथा श्री मागन इन विषय पर एकमत हैं कि भारतवर्ष की यह (सिंध की घाटी की) सभ्यता समस्त विश्व में प्राचीनतम तथा प्रारम्भिक रही है। प्रायः विद्वान लोग भी अब इन मत का समर्थन करते हैं। यह प्रकार प्राचीनकाल में भारतीय सभ्यता उन्नति की चरम सीमा पर रही है। मध्ययुग में गरीबता अज्ञानविश्वाम आदि दोषों व कारणों के कारण फिर उसका पता हुआ और लुप्त प्रायः भा हो गई। सौभाग्य से भारतवर्ष पुनः स्वतन्त्र हुआ है और अब हमारे देश की नवीन विकसित सभ्यता उत्तरोत्तर प्रगति की ओर अग्रसर हो रही है। इसकी प्राधुनिक प्रगति की प्रबल प्रेरणा निस्सन्देह हमारी प्राचीन सभ्यता में ही प्राप्त हो रही है।

विशेषताएँ—भारतीय सभ्यता में निहित अनेक गुण और विशेषताओं का विस्तारपूर्वक वर्णन करना यहाँ सम्भव नहीं है किन्तु फिर भी मुख्य मुख्य विशेषताओं पर संक्षेप में विचार करना अनिवार्य भी है। प्रथम विशेषता यानि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो उमम समर्थ्य की भावना है। अपनी मौलिकता की रक्षा व साथ ही साथ इस सभ्यता में दूसरे तबकों को धार धीरे अदानाएँ एकाकार हो जाने का क्षमता विद्यमान है। यही कारण है कि भारतवर्ष विश्व में अग्रमूर्त धर्मों और सम्प्रदायों को अपने यहाँ स्थान दे सका है। दूसरी विशेषता है सहिष्णुता अथवा सन्तुलन की क्षमता। साधारणतया विश्व में दूसरे देशों और सम्प्रदायों में गरीबता की बलि निहित रही है जिसके द्वारा स्वयं को उत्कृष्ट तथा अन्य दूसरों को हीन समझने की प्रथा उनको आलोचना करने की प्रवृत्तियाँ चलती रही है। किन्तु भारतीय सभ्यता अपने वास्तविक रूप का पान धारण किए हुए दूसरों का समान सम्मान करने में सदैव आग्रह रहा है। इसलिए दूसरों का पतन देखकर नहीं बरन् प्रगति देखकर प्रसन्न होने की प्रथा का अनुसरण करती रही है। तीसरी विशेषता है धार्मिक व्यापार। अर्थात् भारतीय जीवन में प्रत्येक वस्तुव्यवहार इसलिये ही महत्व नहीं

रखता कि वह यथाथ अथवा अनिवाय है वरन् इसलिए भी कि वह एक आदर्श है। और ऐसे समस्त आदर्शों का आधार धर्म है जिसका महत्त्व आज बीसवीं सदी में भी कम नहीं कहा जा सकता। चौथी विशेषता है व्यापकता इसका क्षेत्र किसी सीमा में रूँधा हुआ नहीं है। जीवन के समस्त क्षेत्र भारतीय सभ्यता की सीमाओं में सम्मिलित हैं। इसलिए यह कहकर नहीं बचा जा सकता कि यह व्यक्तिगत जीवन की बात है अथवा पारिवारिक प्रश्न है अथवा राज्य के क्षेत्र का विषय है। इस प्रकार इन मुख्य विशेषताओं के कारण भारतीय सभ्यता विश्व की शाश्वत सभ्यताओं में प्रमुख स्थान रखती है।

सिंधु घाटी की सभ्यता—यद्यपि पिछले अध्याय में इस सभ्यता का पर्याप्त वर्णन किया जा चुका है किन्तु कुछ और ऐसी विषयनाएँ हैं जिनका यहाँ उल्लेख करना उपयुक्त जान पड़ता है। उदाहरणार्थ यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि इस सभ्यता के निवासी कौन थे तथा कहाँ से आये थे? साधारणतया मोहनजोदड़ो और हरप्पा के अवशेषों के आधार पर यह अनुमान किया जाता है कि वहाँ के निवासी एक ही जाति अथवा नस्ल के नहीं थे। वहाँ प्राप्त मानव अवशेषों यह प्रमाणित करती हैं कि वे लोग भिन्न भिन्न जाति और स्थानों से आए हुए थे। इस विषय के पारंगत डा० गुहा और कनल स्प्यूल का विचार है कि इन निवासियों में कम से कम तीन चार प्रकार की जाति के लोग थे। वे यह भी अनुमान करते हैं कि इन निवासियों का सम्बन्ध मेसोपोटामिया से प्रवक्ष्य रहा होगा।

यह निस्सन्देह सत्य है कि इस सभ्यता का सम्बन्ध अथवा सभी मुख्य मुख्य सभ्यताओं से रहा था। जब तक हम इसे वैदिक काल तक सीमित समझते थे, विश्व की अथवा प्राचीनतम सभ्यताओं के सम्बन्ध इसे रखते ही नहीं थे, किन्तु अब प्राचीनतम सभ्यताओं की श्रेणी में आने के उपरान्त यह भी स्वतः सिद्ध ही जाता है कि मिस्र, ईरान आदि सभ्यताओं से भी यह सम्बन्धित थी। खुदाई से प्राप्त अवशेषों से यह पूर्णतया सिद्ध भी हो गया है। मुद्राएँ और तांबे की जिन पर विप्रात्मक अक्षर अंकित हैं मेसोपोटामिया की सभ्यता में निकट सम्बन्ध सिद्ध करते हैं। कुछ मुद्राओं पर बस्त्र के निशान हैं जिससे प्रकट होता है कि यहाँ बस्त्र अधिक उत्पन्न होता था, और मुख्य व्यवसाय भी यही था। सुमेरिया के साथ यह व्यापार अधिक होता था। इसीलिए उस सभ्यता से सम्बन्ध होना भी प्रकट होता है। बस्त्रों की उत्पत्ति रुई की उत्पन्न पर निर्भर था और रुई की उत्पन्न में मिस्र के साथ समानता और सम्पर्क प्रमाणित होना है। इस प्रकार सिंधु घाटी की सभ्यता एकाकी नहीं थी बल्कि अपने आस पास की प्रसिद्ध सभी सभ्यताओं के साथ घुली मिली थी और अपना प्रभाव दूररी सभ्यताओं पर पर्याप्त रूप में स्थापित था। यही कारण है कि वर्तमान समय में भारतवर्ष के स्वतंत्र होने के पश्चात् विश्व के अथवा देशों से सम्पर्क स्थापित करना हमारे लिए सुगम रहा है।

आर्यों का आगमन—सबप्रथम भारतवर्ष में द्राविड लोग निवास करते थे। लगभग २००० ई० पू० खबर की घाटी से भारत में ऐसे लोगों ने प्रवेश किया जो

होलहोल में लम्बे हृष्ट पुष्ट, गौर वण, लम्बी नास वाले और साहमी वीर प। ये लोग कहीं से आय इसका पूरा-पूरा ज्ञान अभी तक भी नहीं है। विद्वानों के विचार इस विषय पर भिन्न भिन्न हैं। डा० अविनाशचन्द्रदास ने मतानुसार ये लोग सप्त सिंधु के निवासी थे। वाल गगाधर तिलक ने माना है कि आय उत्तरी ध्रुव से भारत आये थे। डा० स्मिथ आयों का मूल स्थान मध्य एशिया को मानते हैं। यूरोपियन विद्वान मगमूनर भी इसी मत के समर्थक हैं। कुछ भारतीय विद्वान भारत को ही आयों का मूल निवास स्थान मानते हैं। फिर भी साधारण धारणा यही है कि आय वे हर स भारत में आए और आय कहनाये। 'आय' शब्द का अर्थ 'सम्य अथवा 'गच्छति' समझा जाता है। कुछ लोग 'उच्च वा' भी इसका अर्थ लगाने हैं। श्री तिनकर ने आय शब्द का अर्थ फुटनोट में 'घुमना' भी दिया है। ये लोग अपनी सभ्यता को आय सभ्यता कहने लग। इनके प्रयोग के समय भारत में रहने वाले द्राविड लोग धीरे धीरे दक्षिण का ओर जान लग। आय लोगों का प्रयोग वास्तव में एक ही बार नहीं हुआ किन्तु धीरे धीरे कई भूभाग में ये लोग आयें।

आय सभ्यता का मूल ज्ञान वे माने जाते हैं। वे शब्द 'विद्' धातु से बना है जिसका अर्थ है जानना अर्थात् ज्ञान प्राप्त करना। उत्तर भारत में वेम ज्ञान के वात वात की रचना हुई। ये रचना ज्ञान भी विभिन्न विद्वानों द्वारा अलग अलग माना जाता है। श्री तिनकर यह रचना काव ईसा से छ हजार वर्ष पूर्व और श्री अविनाशचन्द्रदास ईसा से लगभग २५ हजार वर्ष पूर्व का मानते हैं। भारतीय परम्पराओं के अनुसार वे अनादि माने जाते हैं। कुछ भी हो वे आय जाति का अत्यन्त प्राचीन मान्य है और ज्ञान वात में अत्यन्त गवस अधिष्ठ प्राचीन है। वे के वे भाग है जिनमें गन्ता द्राष्टाण आदि मुख्य है। कुछ विद्वानों की राय है कि इंग्लैंड ईगन भारत और जर्मनी में ज्ञान वात आयों का कोई सामान्य निवास स्थान रहा होगा क्योंकि इन स्थानों पर विकसित भाषाओं में अनेक शब्दों में बहुत गहरी समानता है जिनमें 'गिता' के लिए सभ्यता में (भारत) पितृ यूनानी में पेटर्' या पेट्रियर और अग्रजी में (इंग्लैंड) पार्' शब्द प्रयोग से ज्ञान हैं इसी प्रकार माना के लिए भी समान ध्वनि वात शब्द नाम में ज्ञान हैं। इसीलिए कुछ विद्वान आयों का मूल निवास स्थान यूरोप का भी बताते हैं।

आयों का सामाजिक जीवन—मुख्य रूप से आय लोग पशुपालन और कृषि कार्य करते थे और भारत में ज्ञान पर भी बड़ी व्यवसाय करते रहे। गमाज का संगठन परिवार पर आधारित था। परिवार पितृ प्रधान होता था। पिता की परिवार का अध्यक्ष और सर्वोच्च होता था। संयुक्त परिवारों की प्रथा प्रचलित थी बहुत विवाह प्रथा का रिवाज नहीं था था केवल राजतन्त्र में मुख्य रूप में चर्चित थी। परिवारों में भाई-बहिन के पवित्र सम्बन्ध मानना था। गमाज में दूरीविए भाई बहिन और पिता पुत्रों के विवाह सम्बन्ध का स्पष्ट नियम था। दत्तेज आदि प्रथाएँ प्रचलित हो गई थीं। फिर भी स्त्री जाति का सम्मान अधिक था। अतिथि सत्कार

गौरव का विषय माना जाता था। सती प्रथा प्रचलित नहीं थी। विवाह धार्मिक बंधन समझा जाता था। विधवा विवाह चलता था। नियोग प्रथा भी प्रचलित थी। तलाक असम्भव था। स्त्रियाँ जीवन भर नियंत्रण में रहती थी। शगवकाल में पिता के आधीन यौवनकाल में पति के आधीन और वृद्धावस्था में पुत्र के आधीन रहने की व्यवस्था थी। स्त्रियाँ अध्ययन करती थीं। गार्गी आदि उसी समय की परम विदुषी महिलाओं में से हैं। सत्तानहीन लोग पुत्र गोद भी लेते थे। विवाह सवधा के लिए चार गोत्र टालने का रिवाज इसी समय से चल चुका था। द्राविडों के सम्पर्क से जाति भेद भी उत्पन्न होने लगा। वैसे व्यवसायों के अनुसार आर्य लोग चार भागों में सगठित हो गए थे। अध्ययन और अध्यापन करने वाले ब्राह्मणों की रक्षा करने वाले क्षत्रिय कृषि, पशुपालन तथा व्यापार करने वाले वश्य और तीनों की सेवा करने वाले गूढ़ लोग कहलान लगे थे। चौथी श्रेणी में साधारणतया द्राविड लोग थे। द्राविडों से सम्बन्ध रखने के आधार पर ही आर्य लोग ऊँच और नीचे बनने लगे। अधिक सम्बन्ध रखने वाले नीचे और कम सम्बन्ध रखने वाले ऊँचे। इसीलिए ब्राह्मण क्षत्रिय और वश्यो में भी क्रमशः उच्चता की भावना जन्म गई। वास्तव में वषण श्रेणी ही है। परन्तु बाद में व्यवहार द्वारा वषण का श्रेणी 'वर्ग' और जाति के रूप में समझ लिया गया जो स्वतंत्र होने के पूर्व तक उग्र रूप में भारतवर्ष में रहा। आर्यों का भोजन साधारण होता था, त्योहारों पर मुग्ध पान भी किया जाता था। वस्त्र भी साधारण होने से किन्तु आभूषणों से उन्हें विभक्त स्नेह था। उनका जीवन सतोषी होता था। स्त्रियों का प्रिय मनाविनो नृत्य एवं भक्तता था और पुरुषों का घडदौड शिकार तथा जुआ आदि। घट्यष्टि संस्कार के कई रूप प्रचलित थे जिनमें दाह-संस्कार, जन समाधि, भूमि समाधि और पशु भक्षण मुख्य थे किन्तु प्रथम अग्नि दाह अधिक प्रचलित था।

राजनैतिक व्यवस्था—तत्कालीन सभ्यता का केंद्र उस समय का ग्राम था। उसका अध्यक्ष ग्रामणी कहलाता था। वह राज्य के प्रत्येक महत्वपूर्ण कार्य में ग्राम का प्रतिनिधि बनकर जाता था। अनेक ग्रामों की एक समिति (Assembly) होती थी और प्रत्येक ग्राम का प्रतिनिधि उसका सन्स्य होता था। इसे विंग अर्थात् प्रजा भी कहते थे। इसके ऊपर वाना सगठन 'जन' कहलाता था जो समद की भाँति होता था। इस प्रकार ग्राम, विंग और जन के रूप में राज्य सगठित होता था। जन या जनपद का स्वामी राजा होता था। राजा को लोग प्रायः निर्वाचित करते थे किन्तु वंश परम्परागत राजाओं का भी प्रचलन था। राज्य के कार्य संचालन के लिए 'सभा' और 'समिति' नामक दो संस्थाएँ होती थीं। ये संस्थाएँ ही राजा का निर्वाचन राजा का परामर्श देना पञ्चयुक्त करना पुनः मिहामनाहट करना आदि कार्य करती थीं। पुरोहित राजा का प्रधान परामर्शदाता होता था। राजा स्वयं प्रजावत्सल होता था और समाज में बहुत सम्माननीय होता था। राज्य सम्बन्धी प्रत्येक कार्य के लिए राजा ही उत्तरदायी समझा जाता था। प्रजा को रक्षा, पशु से युद्ध आदिकाल में धार्मिक कृत्य और त्योहारों की व्यवस्था तथा अपराधियों के लिए दण्ड व्यवस्था का

भार उमी पर होता था। अग्नि, वरुण, वायु, सूर्य, चन्द्रमा आदि व अर्गों म लखर राजा व निर्माण की कल्पना इमी दृष्टि म की गई थी कि गमय और स्थिति व अनुसार राजा को अपन कतध्व या पानन दत्तापूजक करना चाहिए।

धार्मिक व्यवस्था—धाय अधिकांग कृषक व और पशुपालन का व्यवसाय भी करत थ। कृषि म बन्ना या प्रयाग होता था। गाय आन्तरणीय पशु मान लिया गया था। बकरी, भ्रू कुत्त और गध भी उपयोग मान लिए गय थ। बुद्धिमान होन व कारण धाय लोग पीछे ही कृषि-वदित बन गय थ। इग्निय गिचाइ करन लग थ। गहूँ जौ निवहन और कपास की खती भी करत थें और धीर धीर गिता कता की और भी आग बढ़ र्ण थ। मुद्रा का प्रचलन न हान हुए भी व्यापार की आर अग्रगर हा र्ण थ। विनिमय व लिए गाय और आभूषणा का प्रयाग होता था। खती स सम्बन्धित लोगर बढ़ई और कुम्हार व व्यवसाय भा विकसित हा गय थ। युद्धकता म भी निपुण थ। रथ की मकारी बर्छी मात्र का प्रयाग तथा बबक धारण करना य जानत थ। पुण्य और श्रिया बटूमूय धानुषा व मग्रह की दृष्टि म आभूषणा का बन्धन धारण करत थ। गिता का महत्व बढ़न या और कष्ट विद्या का सिद्धान्त व्यवहार म आता था। मौखिक गिशा की परम्परा थी। 'Simple living and high thinking' साधारण जीवन और उच्च विचार का सिद्धांत वास्तव म कार्यान्वित होता था। धार्मिक गिशा पर अधिक बन श्रिया जाता था। गुरुकुल प्रथा विकसित हा र्ण थी इमीनिग गद-श्रिणा भा प्रचलित हा र्णी थी। गिता का माध्यम मस्कृत भाषा था और गणित व्याकरण साहित्य आदि का प्राधाय था। ण प्रचार समाज की आर्थिक व्यवस्था उत्तम थी।

धार्मिक जावन—य लाग प्रकृति व विभिन्न श्यों की पूजा करत थ। इनक दवताप्रा की मस्या २० थी। सूर्य, चन्द्र यम, अग्नि वरुण आदि मुख्य थ। पूजा म यन का स्थान प्रधान समभा जाता था। नग और वनों की पूजा इान शक्ति स सीमा थी और मारण, उच्चात्न वगीकरण आदि भी उही म अपनाए थ। ईश्वर व अनक श्वा म ता इनका विश्वास था किन्तु फिर भी एक-वरवा म ही इनकी श्रद्धा अधिक थी। मत्यु व पश्चान जीवन क्या है? इस पर उनका कोई स्पष्ट विचार नहीं था। मति पूजा प्रचलित नहीं थी और न व योग प्रनिमा म विश्वास करत थ। बलिदानों की प्रथा थी। गायत्रा और सावित्री मन्त्रा का प्रयोग अधिक होता था। धारे धार उत्तर वैदिक काल म कुछ पनन आरम्भ हुआ और यन और कम-नाण्य का प्रचार बना। भूत प्रत तत्र मन्त्र, जादू टोना आदि की प्रथायें बन पनी।

धार्मिक प्रसार—धार्मिक के समूह निरन्तर खँबर का घाटी स भारतवर्ष में आत रहे और मस्या निरन्तर बढ़ती गइ जिसक पन स्वल्प गया और यमुना व रुदान तक इहें पहुँच जाना पडा और अन्त म पूव म बगान तक, दक्षिण म विष्णु चल तक इनका प्रसार हो गया और मम्पूण उत्तर भारत पर धार्मिक का अधिपत्य जम गया। इस काय म द्राविड लोग पीछे हटत गये किन्तु पूरी तरह सब लोग नहीं

जाते थे इसलिए द्राविडों से सम्पर्क हुआ और आर्य सभ्यता पर भी द्राविडों का प्रभाव पड़ा। आर्यों ने शुद्ध रहने की चेष्टा की और अनेक प्रकार के नियम बनाए। शुद्ध स्त्रियाँ के साथ विवाह न किया जाय। द्राविड लोग काल छोटा बंद और बुरूप होते थे, किन्तु फिर भी सम्पर्क से वर्णों में हेल मेल बढ़ता ही गया और आज तो समस्त विश्व में ही वणतकरता व्याप्त हो चुकी है। फिर भी आर्यों ने अपना प्रयास नहीं रोका। जाति नियम कठोर बनाए। फलस्वरूप नई नई जातियाँ बनने लगीं और आर्य जाति का प्रसार आशातीत गति के साथ समस्त भारत में व्याप्त हो गया।

आर्य सभ्यता का महत्व—त्रय विकसित होकर आर्य सभ्यता अपनी उत्तमता की चरम सीमा पर पहुँच गई थी। राजनैतिक क्षेत्र में राजा का स्वरूप एक वास्तविक सवधानिक शासक के रूप में विकसित हुआ। राज्यों के आकार बड़े। बड़ी बड़ी सेनाएँ की व्यवस्था की जाने लगी। सामन्त विकसित हुए। प्रजातन्त्रात्मक भावनाओं के प्रतीक स्वरूप सभा और समितियाँ स्थापित हुईं। राज्याभिषेक के समय शासक महत्वपूर्ण शपथ ग्रहण करने लगा। मन्त्रिपरिषद् जैसी संस्था की स्थापना हुई। आर्य और नियम का स्पष्ट स्वतंत्र अस्तित्व समझा जाने लगा। कर सिद्धांत और भूमि संबंधी उत्कृष्ट नियमों को मान्यताएँ दी गईं और राजा नियमों के आधीन बना दिया गया। आर्थिक क्षेत्र में, गंगा यमुना के उबरा मदानों के कारण आर्य निश्चित बने रहे और समृद्धि की वृद्धि के साथ वस्त्र आभूषण भवन और विनोद के साधन भी विकसित होते गए। सात मजिल तक के मकान भारतवर्ष में उस समय बनने लग गए थे। गणित विद्या की उत्तमता भी आशातीत थी। उद्योगिक पान विकसित हो गया था। पट्टण की उत्पत्ति इसी समय में हुई थी। आत्मा परमात्मा का सम्बन्ध और जीव ब्रह्म का विचार इसी समय प्रारम्भ हुआ। इस प्रकार लगभग ईसा से ६०० वर्ष पूर्व तक वैदिक कालीन सभ्यता एक उच्च कोटि की सभ्यता थी जो कई गताब्दियाँ तक फलती फूलती रही जिस पर वर्तमान भारत खूब करता है।

अभ्यास के लिए प्रश्न

- १ सिंधु की घाटी की सभ्यता का वर्णन कीजिए।
- २ आर्य कौन थे? उनके सामाजिक राजनैतिक और आर्थिक जीवन का वर्णन कीजिये।
- ३ 'आर्य सभ्यता' पर एक संक्षिप्त निबंध लिखिये।
- ४ आर्य लोग कहाँ से, तथा कब आये? इस प्रश्न पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

आठवाँ अध्याय वैदिक-काल की सस्याएँ

प्रस्तावना—भारतीय गम्यता और वैदिक गम्यता मूलतः एक ही है। किन्तु उस समय की गम्यता जो विनाश रूप में बना म प्रभावित रही और पहल तथा वात में बलान गई वैदिक गम्यता बदलानी है। मौलिक रूप से दोनों एक ही ग्रथ म प्रयोग म आती हैं। एम गम्यता का पर्याप्त बलन हम समय परम क अध्याय म कर चुके हैं और यम भी बताया जा चुका है कि द्राविड और प्राय गम्यताओं का समन्वय किस प्रकार बस हुआ। यम यम बचन उन सामाजिक गम्यताओं का अध्ययन करेंगे जो इस युग म विवर्णित और स्थापित हुईं। इनम मुख्य रूप म वण-व्यवस्था आश्रम व्यवस्था गुप्त परिवार प्रथा, जानि प्रथा और अस्पृश्यता आदि हैं।

वण व्यवस्था—जसा पहल बना जा चुका है त वानीन समाज का गणन वनानिक ढंग म करन क तिम नागरिका न स्वयं यमन व्यवस्था का घनमार वण-व्यवस्था की थी। यम समाज का तिम ध्यान रखकर किया गया था। प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यता और क्षमता क घनमार इन व्यवस्थाओं का अनुमान था। जमजात वण-व्यवस्था नहीं था। प्राय जागा क ध्यान म कुटुम्ब टाँपन हुआ और प्राय और धनाय का म स्थाकार किया जान जागा और नद वण पर्याप्त 'रग' व्यवस्था बन पटी। प्राय और वण क हृष्ट-गुष्ट जान य और धनाय का न बरूप और छोटे वण के हात य। यमन और वण पर गव करन क कारण क यमन का अष्ट समन्त य। धानी विवाह भी क यमन हा वण म करना चान य और का न कूट लोगों का हान समन्त य साधारण काय कृषि मन्त्रदूरी आदि धनायों म करान य। इसा साधार पर काय व्यवस्था स्थापित हुन और ब्राह्मण क्षत्रिय वण्य और गूढ क चार वण स्वीकार कर तिम गण। मकी पुष्टि वणों का ऋषियों द्वारा का गई कि ब्राह्मण मव अष्ट और फिर उमी प्रम म गव जाना वणों का निम्न स्तर का माना जान नगा। अणोरुपय बना न यह प्रकट किया कि ब्राह्मण भगवान क मुख म क्षत्रिय भुजा मे वण्य जसा स तथा गड परों स उपन्न हुए हैं और मनातिए य धनी उत्तमि क स्थान के अनुसार समाज म वस्तुय भा करेंगे। वास्तव म यम समाज क काय और व्यवसाय विभाजन की व्यवस्था या तिमम नागरिक धनी रति क धनकू न चारा प्रकार के काय म स एक चुनकर जीवनयापन कर सकना था। जम स एम व्यवस्था का वाड सम्बन्ध नहीं था। इसा प्रकार परस्पर भाजन पारिवारिक सम्बन्ध आदि पर भी कोई प्रतिबन्ध नहीं य। परस्पर वणों क बीच वाड नीवार नहीं था। परन्तु जानातर म वण-व्यवस्था कम प्रधान न रखकर जम प्रधान बन गई। ब्राह्मण-भुज वणों स धनमिप रहकर भा ब्राह्मण ही बना रहन लगा। और क्षत्रिय पुन पारौरिक

बल विहीन रहकर भी रक्षक ही बना रहने लगा। सूद का पुत्र अत्यंत बुद्धिमान होने हुए भी सेवक ही बना रहने लगा। इस प्रकार रुद्धिगत समाज में वण-व्यवस्था का आधार कम के स्थान पर जन्म ले लिया और वर्तमान समय तक के उत्पन्न वण व्यवस्था के समस्त अवगुणों को जन्म दे दिया। अथवा यह समाज के वैज्ञानिक संगठन का एक सुन्दर स्वरूप था। वैसे आज के युग में भी व्यवस्था यही है किन्तु उसका कोई संगठन नहीं है।

आश्रम व्यवस्था—यदि सूदम दृष्टि से देखा जाय तो तत्कालीन समाज वास्तव में वन निकट आधार पर संगठित था। वण व्यवस्था उस समय के समाज के गठन की रूप रक्षा थी, परन्तु केवल वह पर्याप्त नहीं थी। समाज व्यक्तियों से बनता है इसलिए जब तक व्यक्तियों का जीवन व्यवस्थित नहीं है समाज भी व्यवस्थित नहीं हो सकता है। इसीलिए समाज की स्पर्शा के साथ और अधिक लक्षणापूर्वक आश्रम व्यवस्था का पालन किया जाता था। प्रत्येक नागरिक का यह धर्म या कर्तव्य था कि वह आश्रम व्यवस्था का अनुसरण करे। यही स उसे अनुष्ठान की शिक्षा मिलती थी और नागरिक गुणों के विकास का अवसर मिलता था। जन्म से देहावसान तक समस्त जीवन चार आश्रम में विभाजित किया गया था और मानव की औसत आयु १०० वर्ष की अनुमान की जाती थी और २५ वर्ष की अवधि का प्रत्येक आश्रम माना गया था। सब प्रथम ब्रह्मचर्य आश्रम होता था। इस समय व्यक्ति अपनी पारिवारिक, बौद्धिक और चरित्र सम्बन्धी उन्नति की ओर ध्यान देता था और आत्मा-परमात्मा के सम्बन्ध पर भी गंभीर अध्ययन और अनुभव प्राप्त करता था। इस समय वह अथ सत्र प्रकार की चिन्ता यथा समुक्त रहता था। गुरुओं के आश्रम में ममानता के आधार पर सच्ची शिक्षा दी जाती थी। जीवन सरल और साधु होता था। आजकल की भाँति विद्यालयों की भीड़ भी नहीं होती थी क्योंकि अध्ययन की चाह ही विद्यार्थियों में प्रथम और अन्तिम अनिवाय गुण समझा जाता था। सब लोग उस अवस्था में ब्रह्मचर्य धारण करते थे इसीलिए इस ब्रह्मचर्य आश्रम कहते थे। दूसरा आश्रम था गृहस्थाश्रम। यह आश्रम २५ वर्ष की आयु से लेकर ५० वर्ष की आयु तक माना गया था। इस समय नवयुवक गृहस्थ बन जाता था और पति-पत्नी के परस्पर सम्बन्ध निर्वाह का भार सत्तातात्पत्ति समाज के प्रति कर्तव्य पालन अतिथि सत्कार माता पिता की सेवा आदि काय इसी समय करने होते थे। इस आश्रम को सबसे अधिक महत्व दिया गया था। धर्म के सिद्धांतों के अनुसार धर्म, अथ, काम और मोक्ष की सुगम प्राप्ति इसी आश्रम के द्वारा ही सकती थी। इसके पश्चात् ५० वर्ष की उम्र से ७५ वर्ष की उम्र तक वानप्रस्थ आश्रम होता था। इस समय गृहस्थाश्रम का त्याग करना होता था और निष्प्रयोजन समाज तथा देश की सेवा में जुटना होता था। आजकल की भाँति मरते दम तक सासारिक भाषा छोड़ने में कंठे रहने का विचार भी नहीं किया जाता था और फिर अन्तिम समय ७५ वर्ष अवस्था से लेकर १०० वर्ष की अवस्था तक सत्यास आश्रम होता था। इस समय मनुष्य ससार के सब सम्बन्ध छोड़कर सत्यास ग्रहण करता था। शिक्षा द्वारा अपनी

उदरपूर्ति करने लगता था और परिवार छोड़ जाता था जिगसे अपनी सत्तान जायदाद आदि से मोह छूट जाता था और निरन्तर परमात्मा के स्मरण द्वारा मोक्ष प्राप्ति में लग जाता था इस प्रकार मानव का जीवन 'गत वय जीवत' के आधार पर १०० वय का मानकर उसकी व्यवस्था और विभाजन किया था और सम्पूर्ण जीवन ही एक सरल क्रिन्तु कठिन स्त्र-अनुशासन में आरम्भ था। इसका पालन करने वाले समाज में सदा प्रसन्न रहते थे और पालन न करने वाला के लिए कोई दण्ड व्यवस्था भी नहीं थी। ऐसा स्वयं स्वीकृत अनुशासन बर्दिक कानून सम्पत्ता में नागरिका के लिए विद्यमान था। यह आश्रम व्यवस्था पूर्ण रूप से कानूनी थी और आज भी है। प्रारम्भ के २५ वय शिक्षा और शारीरिक मानसिक विकास के लिए उपयुक्त है। उसका बाद ही गृहस्थ धर्म की आवश्यकता होती है और सत्तानोपति आश्रम का उपयुक्त अवसर होता है। इसका बाद वानप्रस्थ न करने वाला आज भी मृत्यु पथ त रोने रहते हैं और सत्यास की सोचने तो वास्तव में जाग्रित ही मुक्त होने की अवस्था है। इन सबका अनुभव आज भी बलपूर्वक करने मात्र से ही अत्यन्त गति प्राप्त करता है इसलिए अनुसरण तो अवश्य ही मोक्षदायक होता है यह निश्चय है।

संयुक्त परिवार प्रथा—अथ सस्याप्रा की भाँति संयुक्त परिवार प्रथा भी कानूनी आधार पर स्थापित की गई थी। यह भारतीय समाज की ही विशेषता है। नागरिक के जन्म से ही उसका सर्वोच्च गुण का विकास सब प्रथम परिवार से ही होता है। समाजशास्त्रियों का विश्वास है कि पारिवारिक मिद्धातों में एक व्यक्ति का प्रभाव रक्त द्वारा चौदहवीं पीढ़ी तक जाकर पुनः प्रकट और विवक्षित हो जाता है। इसलिए परिवार का प्रभाव बहुत गहरा और व्यापक होता है। इस भी सामाजिक प्राणाग्नेय के कारण मनुष्य को समाज चाहिए और वह भी ऐसा समाज जिस में अन्तर्गत हो। इसी कारण संयुक्त परिवार प्रथा का जन्म हुआ जहाँ अपने ही परिवार के समस्त सन्तानों में जुलुकर रह सकें। समाज की उत्पत्ति का दूसरा साधन सहयोग है। यह सहकारिता की भावना भी परिवार में बँकर अग्रज नहीं हो सकती। 'रक्त पानी की अपेक्षा अधिक गाढ़ा होता है तथा बंधी दुष्टारी लाभ की आश्रि बहावते इसी आधार पर प्रचलित रही है। वास्तव में संयुक्त परिवार का प्रभाव बहुत होता है और अग्रज अग्रज हो जान पर सभी की सम्मिलित प्रतिष्ठा एकत्र बँकुर हो जाती है। अनुशासन की दृष्टि से भी यह पद्धति ठीक थी। एक पूजक के नियंत्रण में मरने रहना होता था और उसकी आत्मा माननीय होती थी। पिता माता, चाचा चाची माई मनीज पुत्र वधू आश्रि सभी साथ रहते हैं इसलिए परस्पर प्रेम भी विद्यमान होता रहता है। अथ लाभ यह कि बढावम्ब्या में हर प्रकार के साधन उपलब्ध होने से विधवाप्रा का निर्वाह भी होता था, बीमारी के समय सबका हर प्रकार का सहयोग मिलता था कुछ कम या न बमान वाले अथवा अपाहिज तथा कुछ अच्छा बमान वाले मिलकर सम्पूर्ण परिवार को सुखी बनाय रखते थे और सधन की दृष्टि से भी सबका मिला जुला एक अच्छा गगटन होता था। व्यावसायिक दृष्टि से कृषि पशुपालन, कुटीर उद्योग आदि में भी यह व्यवस्था सहायक होती थी।

इसलिए इस प्रथा का महत्व था। आधुनिक काल में पश्चिमीय सभ्यता के प्रभाव से लोग व्यक्तिवादी या कहिए स्वार्थी अधिक हो गये। सहिष्णुता का अभाव और माता पिता के प्रति सेवाभाव शून्य हो जाने के कारण भी यह प्रथा नष्ट होती जा रही है।

जाति प्रथा— जिस सभ्यता ने व्यक्ति पर अनुशासन लाने के लिए आश्रम व्यवस्था और समाज को सुदृढ़ बनाने के लिए वर्ण व्यवस्था का प्रचलन किया, वही विकास स्वयं आगे भी बढ़ता गया। वर्ण व्यवस्था के अनुसार समाज के माग दर्शन, अध्ययन, अध्यापन काय ब्राह्मण ने अपना उत्तरदायित्व समझा और उसमें पारंगत हो गए। अच्छा स्तर रखने के लिए नियम उपनियम बनाए। कुछ गुप्त ज्ञान भी रखा और धीरे धीरे अपना क्षेत्र सीमित बना लिया और दूसरों से भेद करने लगे। एक वेद का पाठ करने वाले पाठक दो का पाठ करने वाले द्विवेदी, तीन का पाठ करने वाले त्रिवेदी त्रिपाठी या त्रिवाडी और चारों वेदों का पाठ करने वाले चतुर्वेदी या चौबे कहलाने लगे और जातियाँ बनने लगीं। अथ वर्ण के लोग भी इसी प्रकार विशेषता के आधार पर अपना एकाधिकार जमाने लगे। क्षत्रिय लोगो ने देश की सुरक्षा और प्रशासन पर अधिकार जमाया। वश्यो ने व्यापार में एकाधिकार जमाया और शूद्रों से भेद करना आरम्भ कर दिया। कालांतर में रीति रिवाज अलग अलग बन गए खान पान और विवाह शादी के नियम भी रूढ़िगत बन गए और ये जातियाँ कमप्रधान रहने के स्थान पर जन्म प्रधान बन गईं। मनुस्मृति द्वारा ये जातियाँ स्थायी बन गईं। तब जाति, उपजाति आदि चल पड़ी और हिंदू समाज विघटित होने लगा। ऊँच नीच का भेद प्रकट होने लगा और व्यक्तिगत उत्थिति में बाधा हुई। लोगो का परस्पर व्यवहार बंधन में बंध गया और इस प्रकार राष्ट्र की मानसिक और शारीरिक उत्थिति में बाधा पहुँची और राष्ट्रीय भावना का विकास भी रुक गया। अब स्वतंत्र होने के बाद यह दोष कम हुआ है। किंतु समूल नष्ट होने के लिए अभी कम से कम २० वर्ष और चाहियें।

अस्पृश्यता—हमारी संस्कृति के भाग पर यह एक कलकमय अत्यंत खद-जनक प्रथा थी जो सक्डा वर्षों तक प्रचारित रही। वास्तव में इसका श्रीगणेश तो आय और धनार्थों के भेद के समय से ही हो गया था किंतु बाद में जब वर्ण व्यवस्था के अंतर्गत ब्राह्मण, क्षत्रिय और वश्य भी स्वयं जन्म एक दूसरे से थोड़ा समझने लगे तब विवाह खानपान आदि के बंधन कठोर बनाए गए और उनका उल्लंघन करने वालों को पतित और शूद्र की भाँति गिरा हुआ समझा जाने लगा तब यह दोष स्पष्ट रूप से प्रकट हुआ। वर्तमान समय के प्रचलित जीण जाति संगठन में आज भी यह नाटक देखने को मिलते हैं कि किसी व्यक्ति को जाति से निष्कासन करने पर उससे पानी नहीं छुआते, उसके साथ बँठकर धूम्रपान नहीं किया जाता। अतः इसी प्रकार निम्न जाति में ब्याह करने पर, जाति के नियमों का उल्लंघन करने

अभ्यास के लिए प्रश्न

- १ वैदिक काल की प्रमुख सामाजिक सस्याओं पर एक निबन्ध लिखिए ।
- २ निम्नलिखित में से किन्हीं दो पर टिप्पणियाँ लिखिए —
 (अ) जाति प्रथा (आ) वण व्यवस्था (इ) आश्रम व्यवस्था (ई) अस्तुद्यता
 (उ) सयुक्त परिवार ।
- ३ आर्य और अनाय सस्कृति के समन्वय से आप क्या समझते हैं ? समझाकर लिखिए ।

बौद्ध तथा जैन धर्मों का सामाजिक महत्त्व

प्रस्तावना—बौद्ध और जैन धर्मों का स्वल्प और गिद्धाता का अध्ययन हम विद्यते अध्यायाः म कर चुक ह । यही हम कवन उन महत्त्व पर विचार करना है । भारतवर्ष म गौता का बहुत अधिक महत्त्व माना जाता है और उगवा प्रत्येक ब्रह्म भगवान श्रीकृष्ण क मुम म प्रमाणित हुआ माना जाता है । उसम कहा है "यथा यथाहि धर्मस्य गतानि भवन्ति भारत । अमुं यान सवस्य तदात्मान सजाम्यहम् ॥ प्रयात जव जव धर्म की हाति होती है तव तव म स्वय आरर त्रिव की रणा करना हूँ । बौद्ध धर्म और जैन धर्म क प्रादुर्भाव क समय भी भारत की स्थिति दयनीय थी । यद्यपि ब्राह्मण लोग बहुत बुद्धिमान थे और समाज का नतत्त्व उनका हाथ म था । किंतु फिर भी ऊच-नीच का भ्रम, असुस्थता और जानिगत जति दीवारों समाज का सामान्य प्रगति को अवरोध बनान म पूण समय हो चुकी थी । नागरिक नागरिक म परस्पर भ्रम उत्पन्न हो चुका था । एक ब्राह्मण दूसरे ब्राह्मण म ऊंचा होना चाहता था । दूसरे का नीचा श्रेणी का समझकर पणा की जाती थी । समाज में कमकाण, यव बनि, मात्र नत्र जादू टोना अपना मत्त्वपूण स्थान उन जा रत थ । वास्तव म मानवता बरान्त नगी थी । एम ही अग्रसर पर बौद्ध धर्म और जैन धर्म अवतरित हुए ।

कानांतर म अय धर्मों की भांति बौद्धधर्म म भी मतभ्रम उत्पन्न हो गए और हीनयान और महायान का गायण बन गई । एम बौद्धधर्म क प्राचीन रूप का ही मानता था बुद्ध की पूजा करता था और नए परिवर्तन स्वीकार नहीं करता था । दूसरा महायान पार था । स्त्रिया क विगद्ध विद्वरहित को अधिक महत्त्व देता था इसीलिए विचार स्वन बना आदि का स्थान दिया गया था । यव बनि धर्म क अधिक समीप आ गया था और वास्तविक प्रगति दगी धर्म क द्वारा हूद था । जैन धर्म में भी दगा प्रकार का गायण स्वनाम्बर और (त्रिप्रस्वर) त्रिप्रस्वर बन गई थी । इनम त्रिप्रस्वर कट्टर मान थे और स्वनाम्बर परिवर्तन स्वीकार करत थे । वास्तव म य टाना धर्म भारतवर्ष म थोड म अंतर क अतिरिक्त लगभग साथ साथ ही चल ।

सामाजिक महत्त्व—अधिकांश विद्वाना का मत है कि बौद्ध और जैन धर्म धार्मिक धर्म नत ना थे न किंतु उसम नी अधिक ये वास्तव म सामाजिक प्राप्तिजन थे । धार्मिक क्षेत्र म नी क और उपनिषद म न्दुयन मून तत्त्वों का समावेश इन धर्मों म हुआ है और यही कारण है बौद्ध धर्म का वा म उच्च धर्म क अत्यधिक निकट समझा जान गया और बुद्ध भगवान का भी अय अंगारा न साथ सम्मिलित किया जान गया । परंतु इसमें भी अधिक इन धर्मों का महत्त्व सामाजिक

रूप में हुआ। तत्कालीन समाज धर्मक कुप्रथाओं और विषमताओं से पीड़ित था। एक मनुष्य दूसरे मनुष्य को मनुष्य ही नहीं समझता था। प्रत्येक व्यक्ति अपने को श्रेष्ठ तथा दूसरे को निवृष्ट समझने का धर्म्यस्त हो गया था। अस्पृश्यता का भीषण रोग प्रचण्ड रूप धारण कर चुका था। जाति की दीवारें अभय बन गई थी। स्त्रियाँ और गूढ़ों का जीवन दयनीय था। इस ही समय में इन धर्मों ने जाति प्रथा और छूआछूत को महत्त्वहीन बताया। मौलिक मानव समानता को आधार बनाकर समाज में समानाधिकार की स्थापना की। ऊँच नीच का भेद मिटाकर अपने धर्मों का माय सत्र प्रचार के लोभा के लिए प्रगस्त बना दिया। गूढ़ और स्त्रियाँ के लिए कोई रुकावट नहीं रखी। नैतिकता और सुमस्तु जीवन के आत्म समाज के सामान उपस्थित किए। बलि के स्थान पर अहिंसा तथा मद्य और जादूटोना की घोषणा की। दृष्टिहीन हटाकर सत्य सभाषण का महत्त्व सामान्य जीवन में सिद्ध और सदाचारमय आचरण और व्यक्तिगत प्रतिष्ठा के धमण्ड के स्थान पर नम्रता को स्थान देने का महत्त्वपूर्ण प्रयास इन धर्मों ने किया। बड़े माता पिता और बड़े बूढ़ों का सम्मान करने की परिपाटी पुनः आगम की। इस प्रकार पतन की ओर अग्रसर समाज को बौद्ध और जैन धर्म ने समाला। अश्वमेध, नरमेध आदि का ऊपरी अर्थ लगाकर ब्राह्मणों ने बौद्ध की बलि और मनुष्य का बलि चढ़ाना आरम्भ कर दिया था। बौद्ध और जैन धर्म ने अहिंसा का पाठ पढ़ाकर हर प्रकार के जीव जन्तुओं की रक्षा का दायित्व मनुष्य को समझा दिया। इस प्रकार इन धर्मों के प्रचार से समाज का ढाँचा बदलने लगा। जाति पाँति की उपेक्षा होने लगी, ब्राह्मणों का महत्त्व जाता रहा। आत्मा और परमात्मा के सम्बन्ध पर वे सभी प्रसंग भी नहीं लाते थे। सम्भवतः वे नास्तिक बन गए, परन्तु स्पष्ट रूप से उन्होंने ईश्वर के अस्तित्व का खण्डन भी नहीं किया। ऐसे धर्म की उन्नति और विकास के लिए सभा की स्थापना भी की। धर्म में विशय रुचि रखने वाले लोग घर-घर छोड़कर सभ में सम्मिलित हो जाते थे। ये सब भिक्षु कहलाते थे। अपने गिण्या के आग्रह पर बाद में महिलाओं के सभ भी स्थापित किए। इनमें जाति पाँति और खान पान का कोई भेद नहीं होता था। उनके निवास के लिए बड़े बड़े विशाल विहार और चैत्य बनाए गए जिनमें हजारों की संख्या में भिक्षु या भिक्षुणियाँ रहते थे। वे लोग भिक्षा द्वारा जीवन निर्वाह करते थे और सारा समय पठनपाठन और चिन्तन में व्यतीत करते थे। अतिथि सत्कार और अभ्यागत की प्रतीक्षा की मुदर परिपाटी इसी समय से चली थी। बाद में इन विहारों में पतन और भ्रष्टाचार भी फैल गया था किन्तु यह तो स्वीकार करना पड़ेगा कि वृषण व्यवस्था और अस्पृश्यता को इन्हीं धर्मों के कारण ध्वस्त लगा और अवनति की ओर जाते समाज को रोक कर पुनः उन्नति की ओर आगे बढ़ाया।

सांस्कृतिक महत्त्व—सामाजिक महत्त्व के साथ इन धर्मों का सांस्कृतिक महत्त्व और भी अधिक है। दोनों धर्मों के प्रमुख सस्थापकों ने अपने उपदेश जनता की बोल चाल की भाषा में प्रस्तुत किये जिसे जनता समझकर स्वागत कर सकी।

प्रतिपादन उल्लेखनीय है। इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक विषय का अध्ययन अनेक पक्षों से किया जाना चाहिए। केवल एक पक्षीय नान द्रष्टृ ही नहीं पातक भी होता है। अध्ययन की गहनता और व्यापकता की ओर लक्ष्य करता हुआ यह सिद्धांत, विन्तन की गम्भीरता के साथ विचारा की उदारता का प्रतीक भी है। इन दोनों धर्मों ने भारतवर्ष का साहित्य के सभी क्षेत्रों में योगदान किया है। कथाएँ, दान, उपदेश, काव्य नाटक इत्यादि सभी इनके साहित्य में उपलब्ध हैं। अन्य अनेक विनोदक्यों के साथ इनके साहित्य और कला में सरल उच्च आदर्श और जन साधारण के लिए उपयोगी सिद्धांतों का लोकप्रिय प्रतिपादन बहुत ही सुंदर ढंग से हुआ है।

इस प्रकार भारतीय सृष्टि बौद्ध और जैनधर्म के सद्व्योग विना अपूर्ण रहती है। इसीलिए हिंदू-सृष्टि, बौद्ध और जैन सृष्टि सभी के समन्वय के फलस्वरूप ही हमारी वर्तमान भारतीय सृष्टि प्रस्तुत होती है, जो विश्व के वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय आदर्श के अनुकूल सज सृष्टियाँ से अधिक उपयुक्त है।

अभ्यास के लिए प्रश्न

- १ बौद्ध और जैनधर्म का सामाजिक महत्व समझाइए।
- २ "बौद्ध और जैनधर्म ने भारतीय सृष्टि के विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान दिया है" इस मन की पुष्टि कीजिएगा।
- ३ बौद्ध और जैनधर्म के साहित्य, कला और दान के सम्बन्ध में एक विवेचनात्मक निबन्ध लिखिए।

द्वितीय अध्याय

भारतीय सभ्यता का स्वर्णकाल (Classical Indian Civilization)

प्रस्तावना—भारतवर्ष का प्राचीन सभ्यता का स्वर्णयुग इगो म पूरु सद्यन्तर्ग
नीची सनाका म प्रारम्भ होकर र्गो का साया सायाका तर्ग माना जा सकता है ।
यह मा प्रामाणिक रूप म गिद्ध हा चूता है कि भारत का सभ्यता का प्रारम्भ प्रना
काय म हा चया या त्रिपद चयाय हम त्रिप का पाया का सभ्यता क रूप म
साद्वनसाया प्राणि सदाना पर प्राण हूय है । परन्तु उमर पचास ना भारतवर्ष
सभ्यता निरन्तर र्ग धीर काय क अनुसार चयन का सगापित धीर परिवर्तित
करता गर् है । प्राणि सभ्यता क पचास या सभ्यता का प्राग्भाक दुया धीर
दोना क समारय द्वारा पर तशन भारतवर्ष सभ्यति का सिकार दुया त्रिप कुछ
विद्वान भारत का पौराणिक सभ्यता का सभा र्ग है । स्वरा रूप सिद्ध हात र्ग
तब बीड धीर अन धम प्रतिपाति त्रिप मय धीर र्गका त्रास्रिय रूप जनता
जनायन र नामन सभ्यति हूया । अन मय क समारय क पचसस्य त्रा सभ्यति
मुगलि हर् क भारतवर्ष का सभ्यता का स्वर्ण काय है त्रिप कुछ विद्वान (Classi-
cal Indian Civilization) सनायन चयका उ हूय नाशार सभ्यता का नाम र्ग
है । इस समय भारतवर्ष सभ्यता न चयना कचय र्ग विकसित नया किया किन्तु
चयन व्यापक विस्तार क माय र्ग विर्गों पर चयना प्रनाय स्यापित करन हय उर्गे
नी उपरति का धार चयनय नान की प्ररणा प्रान का । न सनायन भारतवर्ष सभ्यता
का सभ्ययन हम सुदरस्य म नान नागों म करेग । प्रथम, सभ्यतवस्था धीर समार
दुगता बीडिक एव साभ्यतिक प्रगति धीर ताकरा, विर्गा क माय साभ्यतिक
सभ्यय ।

तत्कालीन राज्य व्यवस्था और समाज

भारतीय सभ्यता क स्वर्णकाल का राज्य व्यवस्था वस्तु मुत्तर था । साया
रपतया उम समय सनायन राज्य नान क धीर सभ्यता का विस्तार ही र्गका ज्ञान
की पहचान था । सभ्यति सायायन का स्यायता सायका का र्गका हाता था । इस
उत्सय की प्रति क त्रिप सभ्यत हात क सना सभ्यतानी हाता था धीर पुड
कीयल का वहुत सभ्यतिया ताता था । इसतिय सनायन व्यवस्था की दृष्टि म
राज्यों का स्वयन नाननामन (राज्यत) र्ग ताता था किन्तु सभ्यता का
प्रचयन भी था । राज्यत व्यवस्था म राजा स्वय सनायन सवायन करता था धीर
चयनी महायता क त्रिप सभ्यतारिप का व्यवस्था करता था । सभ्यता म जनता
क प्रतिनिधि सायन चयत था । सभ्यता ना कर्द प्रचार क हात क परन्तु सुतस्य

से शासन क्षेत्र में एक ही सिद्धांत काम में आता था जैसे राज्य की नीति का निर्धारण ये प्रतिनिधि ही करते थे राज्याध्यक्ष इही प्रतिनिधियों द्वारा निर्वाचित किया जाता था, चाहे जनसाधारण में से हो अथवा वगानुक्रम राज्य परिवार में से कोई हो आदि आदि। राजतंत्र में राजा निरकुण्ठ होता था किंतु शास्त्र मर्यादा और नियमों के कठोर प्रतिबंधों के कारण वह वास्तव में जनता का सेवक होता था। वे मंत्रीपरिषद के परामर्श से ही राज्य का काम चाल करते थे। इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण हैं जहाँ राजा लोग अपनी इच्छानुसार राज्य में साधारण से साधारण कार्य अथवा धन खर्च करने में असमर्थ रहते हैं।

राजनीति के सिद्धांत—तत्कालीन युग में राज्य और राजा को एक ही रूप में माना गया था और राजा का अभाव समाज में अराजक स्थिति उत्पन्न कर देता था अथवा समाज की व्यवस्था राजा के बिना सम्भव ही नहीं मानी गई थी इसीलिये शास्त्रों में उल्लेख किया है कि जब राजा नहीं था तब समाज में 'मत्स्य' याय की स्थिति थी और अब भी यदि राजा न रहे तो वही 'मत्स्य' याय की प्राकृतिक अवस्था उत्पन्न हो जायगी। जीवोन्निवस्य भोजनम का सिद्धांत कार्यान्विष्ट होने लग जायगा। इस प्रकार राजा ही समस्त सामाजिक व्यवस्था का मूल स्वीकार किया गया था। राजा की उत्पत्ति के अनेक सिद्धांत प्रचलित हैं। वहीं उग्र भगवान के अर्थ से उत्पन्न माना है वहीं भगवान का प्रतिनिधि स्वीकार किया है और वहीं देवताओं के अर्थ को लेकर राजा के निमाण का वर्णन किया गया है। इन सब सिद्धांतों का तात्पर्य यह है कि राजा समाज में सर्वोपरि है और ईश्वर का प्रतिनिधि है इसलिये हर स्थिति में उसकी आज्ञायें गिरोधाय होनी चाहियें। कुछ लोग तो यह भी मानते हैं कि यदि राजा अनाचार करता है तो उसे प्रजा अपने बुरे कर्मों का दण्ड और अच्छा शासन करता है तो पुण्य का फल समझे। इस प्रकार राजा को बहुत ऊँचा उठा दिया है और सर्वशक्तिमान शासक बनाया है। किंतु दूसरी ओर वह प्रजा का सच्चा सेवक भी है। राज्य का शासन वह वास्तव में स्वेच्छापूर्वक नहीं कर सकता था। तत्कालीन राजनीति अथवा दण्डनीति जो महर्षियों के शास्त्र चिन्तन के फल स्वरूप प्रणीत होनी थी वे आचार पर ही चलता था। दण्ड राजा से भी ऊपर समझा गया था, वह अच्छे राजा का पालक किंतु पतित राजा के अनेक बर्णों को नष्ट करने वाला समझा जाता था। इसलिये राजा दण्ड के सिद्धान्तों का ही अनुसरण करता था। उसके लिये अनेक योग्य व्यक्तियों का परामर्श भी अनिवार्य था इसलिये मंत्रीपरिषद का विधान था। मंत्रियों की योग्यतायें निर्धारित की गई थीं। उसी राज्य के नागरिक, जो निम्न गूर बुद्धिमान, कुलीन और दृढभक्त हो चही मंत्री बन सकते थे। राज्य चर की मात्रा भी सिद्धांतानुसार निश्चित की हुई थी—राजा स्वयं अपनी मनमानी करने में सवधा असमर्थ था। राज्याभिषेक के समय गणप प्रहण की जाती थी जिसमें शासक नतिका मर्यादायें स्वीकार करता था और अपने कर्तव्यनिष्ठ बन रहने की प्रतिज्ञा करता था। जीवन भर ये प्रतिज्ञायें उनका मार्ग दर्शन करती थीं। इस शपथ का निर्वाह न करने वाला शासक 'प्रतिज्ञा

दुर्बल' कहा जाता था और उसका निन्हा की जाती थी। इस प्रकार राज्य व्यवस्था के विनाश मिद्धात प्रचलित थे। इस विषय पर अनन्व ग्रन्थ भी लिख गये थे, किन्तु अधिकार श्रव प्राप्य नही है। अधिकांश एम ग्रन्थ मित्त * जिनम ग्रन्थ विषया क गाय इन सिद्धांता का बर्णन हुआ है। तत्कालीन ग्रन्था म चाणक्य का ग्रन्थाम्त्र, कामन्दकीय नीति शास्त्र महानारत का राजधम पय श्राप्ति मुख्य ह। इन ग्रन्था का विशेष बर्णन अगले अध्याय म किया जायगा।

प्रशासन—राजनैतिक सिद्धांता का व्यवहारिक रूप प्रशासन म प्रकट होता था। उस समय साम्राज्य श्रवरा राजन प्रशासन का मुखिया की शक्ति म बहुत गुत्तर द्य से संगठित किया जाता था। प्रत्येक राज्य श्रवरा प्रांता म विभाजित किया जाता था। प्रांता का शासन गवर्नर प्रांतपाल या राज्यपाल क अधीन होता था। एम पद पर साम्राज्यतया राजवग क कुमार श्रवरा कुलीन व्यक्ति ही नियुक्त हान थे। सम्राट मंत्रीपरिषद् का अनुमति म म नियुक्तिर्षा करता था। कुमार श्रवरा प्रांत पालों की सहायता क नियम प्रांताय मंत्रीपरिषद् भा हाती थी और य गय भाग मिलकर हा प्रांत का सारी व्यवस्था संचालित करता थे। प्रांत का विभाजन आशारा म हाता था जिस मुक्ति भी कर्त थे। मृदु आज कन क द्विजाजन की भाति हाता था। यर्षा का भी एन अध्वयन होता था। मुक्ति का विभाजन विभिन्न विषयों म हाता था जा आजकन क दिन की भाति होता था। इसमें उगभग एक हजार ग्राम हान थे। फिर सो गो गाँवा क अनुमान म एम भाग निय जान थे और प्रत्येक भाग का एक अफसर हाता था। फिर प्रत्येक भाग क दस भाग निय जात थे उसका भा एक अफसर होता था। फिर प्रत्येक ग्राम का म्य भी और राज्य की श्रास सं भी एन अध्वयन हाता था जिस ग्रामणी, मुखिया श्रवरा पटल कहते थे। सामंत प्रथा का उम समय श्रभाव था। ममल्ल भूमि राज्य का मानी जाती थी। जनता की मुखिया क निये अनन्व काय निय जात थे और आपत्तिनाश म राजा विगप प्रबन्ध करता था। इस प्रकार व्यवहारिक शासन का संगठन श्राप्ति रूप में हुआ था।

विभिन्न विभागों की व्यवस्था—राज्य की व्यवस्था म प्रशासन विभाग तो मुख्य हाता ही था किन्तु श्राप अनिवाय विभागों का संगठन भी पूरा तरह किया जाता था। न्याय विभाग गुरुणा विभाग स्थानीय स्वशासन विभाग स्वाध्व्य विभाग आदि अनन्व एसे ही विभाग थे। चाणक्य न एम छत्तीस विभागा का बर्णन किया है। प्रत्येक विभाग एक अध्वयन क अधीन हाता था जिसकी प्रतिष्ठा मन्त्रिया क समान ही हाती थी और बड़ी ही योग्यतायें भी विभागाध्यक्ष क निये अनिवाय हाती थीं। राज्य की सेवा में योग्यता का ही सर्वथष्ठ स्थान दिया जाता था, ता भा श्रव्य योग्यतायें नागरिकता, कुलीनता कायकुलता का भी दर्ज म रखा जाता था। तत्कालीन विभागाध्यक्ष क विगप पारिभाषिक दस स सम्बाधित किये जात थे। उदाहरणाय राजस्व आयुक्त (Revenue Commissioner) को समाहता, काषाध्वर (Treasury Officer) का काष्ठागाराध्यक्ष और व्यापार एक उद्योग आयुक्त

(Commissioner of Trade and Industry) को पध्याध्यक्ष करने थे। इस प्रकार प्रत्येक विभाग पूरी तरह से संगठित एवं व्यवस्थित था। इनमें से मुख्य एक दो विभागों के गठन का वर्णन हम यहाँ करते हैं वह प्रतीक रूप में पद्याप्त रहेगा।

‘याय विभाग’—इस क्षेत्र में राज्य पूर्ण रूप से मिद्धान्ता का पानन करता था। तदनुसार राज्य में नियम सर्वोपरि होता था। मनीषिया द्वारा शास्त्रानुसूत नियम ही ‘याय का आधार थे। व्यवहार में सम्राट ही सर्वोच्च ‘यायाधीन होता था किन्तु वह नियम के विरुद्ध जाने में असमर्थ रहता था। ‘याय की दृष्टि से दीवानी और फौजदारी दोनों शाखाएँ मानी गई थी और दोनों ही प्रकार के ‘यायालय होते थे। दीवानी की घमस्थीय और फौजदारी को ‘कटक गायन’ ‘यायालय कहा जाता था। क्रमिक संगठन में सम्राट के पदचान ‘याय मन्त्री का स्थान था जिस पर अधिकार ब्राह्मण (पुरोहित) को ही नियुक्त किया जाता था जो ब्राह्मण और अन्नब्राह्मण दोनों को, अन्नराश्र और धान दोनों ही दृष्टि से देख रक्षक बनता था। उसक पदचान व्योहारिका प्रदेष्टा, राजकुं आदि अन्न ‘यायाधीन होने थे और प्रारम्भ में ग्राम की पचापत्तें ही प्रथम ‘यायालय होती थीं। निम्न ‘यायान्त्य के निणय की शपील सद्व ऊपर बाल ‘यायालय में जा सकती थी। अतिम शपील सम्राट के पास होती थी। वकील प्रथा भी अग्रप्रथम रूप में चल पडी थी। ‘याय शुद्ध रूप में सम्पादित होता था। ‘याय परीक्षा के अनेक उपाय प्रचलित थे जैसे अग्नि परीक्षा, जल-परीक्षा आदि। झूठी साक्षी भयकर अपराध माना जाता था और उनक अग्न भग कर दिये जाते थे। भयकर अपराधों के लिए प्राणदण्ड भी लिमा जाता था। साधारण अपराधों के लिए हाथ, पैर, बान आदि काटने की प्रथा प्रचलित थी। अशुभ भी लिमा जाता था। फिर ‘याय व्यवस्था उदार ही मानी जाती थी। अपराधों की सख्या गिरना, ‘याय की उत्तम व्यवस्था और बढ़ना हीन व्यवस्था का द्योतक समझा जाता था। इस प्रकार तत्कालीन राज्या में ‘याय व्यवस्था की जाती थी।

सुरक्षा विभाग—मानव सभ्यता के विकास से लेकर आज तक राज्या का भौतिक आधार सेना का संगठन ही है और रहेगा। वर्तमान समय में सनित्र सहायता से ही पल भर में राज्या का स्वरूप बदल जाता है। इसीलिए प्राचीन काल में भी सेना का विभाग पूर्ण रूप से संगठित था। सेना में भी अनेक शाखाएँ होती थी जसे, जल सेना, स्थल सेना आदि और स्थल सेना में भी अश्वारोही, रथ सेना आदि संगठित होती थी। सेना की व्यवस्था के लिए एक अलग परिपद भी होती थी जिसमें ३० सदस्य होते थे और उनकी ६ समितिया सम्पूर्ण काय की व्यवस्था करती थीं। वनी समिति, रसद और वाहन, पदाति अश्व, रथ और गज समितिया कहलानी थी। चतुर्गुप्त मौर्य के राज्य में चतुरगिणी सेना थी जिसमें नौ हजार हाथी, आठ हजार रथ तीस हजार अश्वारोही और छ लाख पैदल थे। प्रत्येक हाथी पर चार और रथ में तीन सनिक बैठते थे और कुल सेना मिला कर छ लाख नव्व हजार के लगभग थी। उसी समय नौ सेना भी संगठित होती थी और ऊँटों की सेना भी

अधिक धर लगान या बसूल करने का सदेह नहीं था। यात्रियों की सुख सुविधा के लिए माग निमाण, वृक्षारोपण रूप बनवाना, धमालायाँ बनाना, दूरी सूचक पट्ट या प्रस्तर अंकित करवाना आदि कार्य भी राज्य करता था। जाता की गुण समृद्धि बढ़ाने के लिए व्यापार की सुविधाएँ देना, श्रृषि की उन्नति के लिए सिंचाई आदि की व्यवस्था भी राज्य करता रहता था। यह सारा कार्य तत्कालीन राज्य व्यवस्था द्वारा किया जाता था।

तत्कालीन समाज—प्राचीन भारत का स्वर्णकाल में समाज गुणवत्तन था। यद्यपि शीघ्रकाल व्यतीत हो जाने के कारण कुछ ऋषियाँ धर धर गई थी और कुछ निदान्ति विस्मरण होकर दास रूप में अज्ञान लक्ष्य में तथापि उनका वास्तविक प्रचलित रहा। आश्रम व्यवस्था, वन व्यवस्था और मनुवत परिवार प्रणाली द्वारा व्यक्ति, समाज और परिवार गाम्भीर्य अनुगामन में बद्ध था। मुद्द और महाभार स्वामी ने जाति प्रथा का बहाना हुए दास पर धार प्रहार किया था जिससे जाति की मर्यादाएँ, जो अवाञ्छनीय बन गई थीं, नष्ट भ्रष्ट हो गईं किन्तु जातियाँ का अस्तित्व बना रहा। मेगास्थनीज ने मौर्य साम्राज्य के समय भारतवर्ष में मुख्यतः जातियाँ का उत्तम किया है जिनमें दाम्निव, श्रृषक चरवाहे, गिल्ली सैनिक प्रतिवन्त तथा सभासद प्रथमा राजकर्मचारी सम्मिलित थे। समाज में अणित कार्य करने वाले चण्डाल, मास विप्रता आदि लोग का निम्न श्रेणी का सम्मान जाता था और वे ग्राम की सीमा का बाहर ही निवास करते थे। नगर प्रवेश के समय वे धरी बजाते हुए या आनाज करने हुए चलते थे ताकि वे श्रृषी से स्पर्श न कर जायें। सन १६४७ तक भी यह प्रथा भारतवर्ष में हरिजना के लिए प्रचलित थी। पशुधरा का उपयोग मन्वरी के लिए भी होता था। शायी, घाण्डा और आदि मुख्य पशु थे। समाज समृद्धि गानी था। उद्यान धन व्यवस्थित और उन्नत थे, पडोसी देना से गन्ना व्यापार होता था। उच्च कर्मचारियों को मुद्रर बतन मिलता था। लगभग ४५ हजार पण (वर्तमान समय का एक रूप के समान) प्रतिवष होता था। समाज में जाति स्थापित थी। दण्ड व्यवस्था कठोर थी। प्राणदण्ड भी दिया जाता था किन्तु फाँसाना न उल्लेख किया है कि प्राणदण्ड की धापणा उसने कभी नहीं मुनी। इससे प्रकट है कि समाज दृष्ट अरुत ढंग में व्यवस्थित था। उपचार का हेतु बडे-बडे विद्वित्मालय बनाये गए थे। रोगियों के निवास का प्रबंध भी होता था। इन सम्बन्ध में भारत यूरोप से लगभग १००० वर्ष पहले ही सचेत हो गया था। जनता में सचाई और ईमानदारी तथा अहिंसक प्रवृत्तियाँ मूल रूप में जागत हो चुकी थीं। परस्पर व्यवहार अत्यन्त गिष्ट तथा स्नेह मिद्ध होता था। आतिथ्य शक की वस्तु माना जाता था। चोरिया का नाम नहीं था। यही युग था जब भारतवर्ष में ताले नहीं लगाए जाते थे दूध शी की गरिलायें प्रवाप्ति होती थीं और यह देना 'माने की विडिया' कहाता था।

महिला समाज—उन समय समाज में महिलाओं की प्रतिष्ठा होती थी। 'यत्र नायस्तु पूज्यते रमते तत्र देवता' का अर्थ होता था। किन्तु समाज में

बहु विवाह की प्रथा भी प्रचलित थी। इससे कई कारण थे। उस समय बड़े परिवार कई रूप में मुगल और गतिनायक हान थे। इसलिए अपना सगठन बनान और मजबूत करने के लिए इनके मताना की उत्पत्ति सामाजिक प्रतिष्ठा का कारण माना जानी थी। बहुत से लोग मानसिक शक्ति की स्थिति में पौराणिक विद्वानों के अनुसार 'पानी देने वाला' अथवा पूजा का 'उत्तम चरण प्राप्त उत्पन्न करने के धर्म में बट्टे विवाह करते थे। कुछ लोग ब्रह्म समाज के अनुभवों को अपना करते थे। सम सन्दर्भ नहीं है। कौटिल्य ने यह सिद्ध है कि पुरुष जितने ही विवाह कर सकता है और स्त्रियाँ सन्तानोपत्ति के लिए ही जाती हैं। पुरुष और स्त्रियाँ सभी का विवाह स्थिति में पुनर्विवाह की स्वतंत्रता थी। इन परिस्थितियों का उत्पन्न, मनस्मन्ति और अथवात्म्य में पर्याप्त विचार के साथ नृणा है नियोग प्रथा और तद्वत् भी प्रचलित था किन्तु बहुत कम। बानांतर में जाकर स्त्रियाँ का स्थान समाज में पूज्य बन गया। न पूणरूपेण पुरुष के आधीन हाना चला गइ। उनका अथ विचार मान गया और सामाजिक प्रतिष्ठा का भी धार की अभाव माना गया गया। फिर भी गुप्तकालीन भारत में महिलाओं का स्थान अच्छा था। उनका विवाह के लिए मुगल व्यवस्था थी। विवाह पत्रिका सम्भार माना जाता था। नृत्यिका का अर्थ पिता की सम्पत्ति में उत्तराधिकार का अधिकार ता नहीं था किन्तु स्थापन का मन्त्र बट्टे अर्थिक था। किंगोरावस्था में भी कन्याओं का विवाह के इन का नियम था था। विवाह विवाह भी हान था किन्तु कम र्था युग में मना प्रथा का चर पी थी किन्तु अर्थिक व्यापक नहीं बूट था। विवाही आश्रमों के कारण स्त्रियाँ परते में रहने लगी थीं। इस प्रकार महिलाओं का समाज बट्टे ऊँची अस्थिति में ना गया था किन्तु फिर भी सामाज्य स्तर भी अवश्य था।

नागरिक जीवन—न कालीन समाज का जीवन बट्टे मरत था। माधारण भोजन और अति सरल वेशभूषा का प्रचलन था। सामाहार प्रचलित था। पशुपति का सहार और शिकार किया जाता था किन्तु बौद्ध और जन धर्म में अग आर पर्याप्त शांति स्थापित हो गई थी। मुरा का प्रचार भी बट्टे था। सरकार की आश माधारण रूप में मद्य विभाग द्वारा बट्टे हाने थी। मद्य की व्यवस्था बड़ा नृणा दुकानों में की जाती थी। बेचन और पीन का स्थान भिन्न हाना था। ये स्थान पुष्पाणि सजाकर आकर्षित बनाए जात थे और वहाँ सब प्रकार के एण आराम की व्यवस्था भी हाती थी। दानियाँ और नृणाजीवायें वहाँ सवा करती थीं। परन्तु नावजनिक स्थानों पर मद्य पान निषिद्ध था। इन स्थानों पर स्वल्पी और त्रिणी शोभा प्रकार की गराव का प्रयाग नियमानुबूत था। विवाही मद्य पर कर अधिक र्माया जाता था। इनकी दुकानों और स्थानों के लिए राज्य की स्वीकृति (लाइसेंस) अनिवार्य हाती थी और इसका उपलब्ध में कुछ शुल्क भी जमा करना पड़ता था।

नागरिक जीवन में प्रफुल्लता और आनन्द बनाए रखने के लिए आमाद प्रमाद को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया गया था। तत्कालीन समाज में सगात, नृण,

त्योहार, शिकार, शत-खल (in door-games) और क्षेत्र खेल (out door-games) का बहुत प्रचार था। समाज में कुछ लोभा का यह व्यवसाय ही था कि वे नागरिकों का मनोविनोद करते हुए ही जीवनयापन करें, जैसे नट, नर्तक, गायक, वादक, बाजीगर, कालवेलिषा, बन्दर और रीछ नचाने वाले मदारो और चुटके और पक्ष-बद्ध विरदावलि और अथ हास्य रस का काव्य सुनाने वाले भाट और चारण इसी श्रेणी में आते हैं। पुरे समाज की दृष्टि से नगर में ऐसी सस्यायें, नाट्यशालायें, रंगमंच आदि की व्यवस्था भी होती थी। राज्य का इन सब श्रिया कलापा पर पूर्ण नियन्त्रण होता था।

इसी प्रकार भारत की सभ्यता का स्वर्ण काल वैसा था यह भली भाँति पता हो जाता है और तत्कालीन राज्य-व्यवस्था और समाज के सम्बन्ध में अनेक प्रश्नों का हम पर्याप्त परिचय मिलता है। इसलिए उपरोक्त आधार पर यह कहा जा सकता है कि राजनतिक और नागरिक क्षेत्र में प्राचीन भारत बहुत अग्रसर हो चुका था और अथ देना के समझ तुलना की दृष्टि से भी काफी उन्नत और अग्रसर था, यह सिद्ध होता है।

अभ्यास के लिये प्रश्न

- १ भारत की सभ्यता के स्वर्णकाल से आप क्या समझते हैं विस्तारपूर्वक लिखिए।
- २ भारत के स्वर्णकाल के समय के राजनतिक सिद्धांत और प्रशासन की व्याख्या कीजिए।
- ३ तत्कालीन भारत का नागरिक-जीवन कसा था—इस विषय पर निबन्ध लिखिए।
- ४ भारत के स्वर्णकाल में महिलाओं की स्थिति कसी थी—वर्णन कीजिए।

और बौद्ध और जन घर्मावतम्रिया ने भी अपने ग्रन्थ इसी भाषा में लिखना आरम्भ कर दिया। प्राकृत और पाली भाषा के गौण हो जाने से ससृष्ट भाषा की और भी अधिक उन्नति हुई। इसीलिए यह ससृष्ट भाषा का स्वर्णकाल कहा जाता है। ससृष्ट भाषा और साहित्य की सर्वांगीण उन्नति इसी युग में हुई और महान्विवालिदास ने इस उन्नति में चार चीजें लगा दीं। वालिदास ने शकुंतला विनमोवगी, मालविकाग्निमित्र तीन नाटक और रघुवंग मधूत और कुमारभय तीन काव्य लिखे हैं। नाटका में शकुंतला प्रत्यंत लाक्षणिक है और यह माना जाता है कि इसका अध्ययन प्रत्येक ससृष्ट भाषी विद्वान के लिए अनिवार्य है। इस समय विद्व की लगभग समस्त मुख्य भाषायां में इसका अनुवाद हो चुका है। इसमें शकुंतला और दुष्यंत की प्रमूख कथा है। विनमोवगी में विनम और उवगी तथा मालविकाग्निमित्र में मालविका और अग्निमित्र की प्रेम कथायें हैं। उनका काव्य में रघुवंग में महाराज दिलीप से शरर भगवान राम तक का सुंदर वर्णन है और बाद में राम के विरह में अयोध्या की स्थिति का ममस्वर्गी चित्रण है। मधूत में यक्ष और यक्षिणी (उमकी पत्नी) के विरह का सुन्दर चित्रण है जिसमें यक्ष मध के माध्यम से अपनी विरह कथा और सदैव अपनी प्रियतमा के पाम भजता है और अलकापुरी का माग करता है। यह बहुत सुंदर रचना है। कुमारभय में शिव-पावती और स्वामी वातिक्रय के जन्म का वर्णन है। इसमें अमुरा का सृष्ट और शिव-पावती वाक्ता बहुत सुन्दर लिखी गई है। इन ग्रन्थों में जैसे ऊंचे भाव हैं भाषा भी उही के अनुसार सरल अथवा गम्भीर, परिवृत्त और काव्यमयी बन गई है। वास्तव में वालिदास कवि शिरोमणि थे। भास भी इस युग का उत्तम नाटककार और कवि था। विशाखदत्त का मुद्राराक्षस भारवि का 'किराताजुनीय' और गूढक का 'मच्छकटिका' भी तत्कालीन साहित्य के महत्त्वपूर्ण रत्न हैं। इन सभी साहित्यकारों द्वारा भारत का तत्कालीन युग साहित्य का स्वर्णकाल कहा जाता है।

कला के क्षेत्र में स्थापत्यकला, वास्तुकला, मूर्तिकला, चित्रकला, ललितकला तथा संगीत कला आदि में भी सर्वांगीण उन्नति हुई थी। अशोक के समय के स्तम्भ जो एक ही पत्थर पर बनाये गये हैं, उनकी कला आज भी मनुष्य का आश्चर्याकृत करने में सफल हैं। उनकी चिकनाई नकली पालिश की भाँति दिखाई पड़ती है जिसमें देखने वाले की प्रतिच्छाया भी दिखाई देती है। ये बहुत भारी और लम्बे हैं। कई एक स्तम्भ पचास फीट तक ऊंचे और १३५० मन तक के भारी हैं। स्तम्भों के तीन भाग होते हैं—भूमि भाग तथा शीप भाग। प्रथम भाग भूमि में गड़ा होता था, दूसरा भाग उससे ऊपर और तीसरा उससे भी ऊपर होता था। शीप भाग या शिखर में सिंह, घोडा, अथवा बिल आदि के चित्र खुदे हैं। बुद्ध धर्म का प्रतीक चक्र भी उसमें अंकित है। ये चतुर्दिग और धर्म चक्र अब हमारा राष्ट्रीय चिह्न स्वीकार किया गया है। इन पशुओं के चित्रों में वास्तविक गति और वेग दिखाया गया है। इसी प्रकार अशोक के राजप्रासाद भी विलक्षण ढंग से बने हुए हैं। स्तूप का तोरण और शिखर भी प्रशंसनीय है। इसी के साथ मूर्तिकला का

(सुश्रुत द्वारा) बहुत सुन्दर और विलक्षण ग्रन्थ लिखे हैं जिनमें रोग के निदान से लेकर उसके उपचार, शल्य चिकित्सा, औषधि उसके गुण और प्रभाव आदि समस्त विषया का विवरण है। यह ईसा की लगभग दूसरी शताब्दी से प्रयोग आया और अठारहवीं शताब्दी तक समस्त विश्व में अत्यधिक सफल और सुगम चिकित्सा पद्धति के रूप में चलता रहा। कालांतर में इसी क्षेत्र में इस पद्धति का विकास हुआ और अनेक ग्रन्थ भी लिख गये। विभिन्न घातुघ्रा के सस्य से पारे की रस में बदलना और घातुघ्रा की भस्म बनाना भी इसी समय आरम्भ हुआ। इससे यह प्रकट होता है कि भारतीय लोग किसी भी क्षय में सत्सोपी होकर गान्त नहीं बैठ रहते थे वरन् प्रत्येक क्षय में नये नये आविष्कार करते रहते थे और बहुत अधिक चतुर, वनानिव और परिश्रमशील थे। यह समस्त ऊन्नति भारत की सम्प्रदाय के स्वर्णकाल की ही मानी जाती है। इनमें से अनेक बातें आज भी मनुष्य के लिए कीमती पदार्थ बन करन में सफल हो जाती हैं। वास्तव में विज्ञान का चमत्कार सर्वत्र ही इसी प्रकार रहा है।

धार्मिक प्रगति—धार्मिक क्षय में सनातन धर्म और बौद्ध धर्म का संघर्ष केवल आरम्भ में रहा। कालांतर में दोनों धर्मों का संघर्ष ही गया और फिर ब्राह्मण धर्म ही बचने लगा एसा प्रतीत होता है। पुनः यज्ञ बलि आदि प्रभावशाली हान लगे और देवी देवताओं की मायना उत्पन्न लगी। प्रत्येक देवता का अलग मन्दिर बनना लगा। एक प्रकार से धर्म का स्फूर्ण हो गया। यज्ञ का स्थान धीरे धीरे नष्ट न बनना आरम्भ कर दिया। देवताओं के रूप भी बदलन लग और उनकी उपासना पद्धति भी। मनीषाञ्छायें पूज करने के लिए देवताओं से याचना की जाती थी और उन्हें प्रसन्न करने के उपाय भी किये जाते थे। धार्मिक ग्रन्थों की सुगानुमार रचना हुई और प्राचीन ग्रन्थों में संशोधन भी किए गए। भारतीय धर्म इस प्रकार समयानुसूल बनना गया। फिर भी यह कह सकते हैं कि प्रमुख विगपतायें और मुख्य आधार बही बन रहे। उदाहरणार्थ—ब्रह्मा विष्णु महेश और कुछ देवियों की मायतायें पूर्ववत् चलती रहीं। भगवान के अनेक रूपों का वर्णन किया गया। गण गम्या पर भगवान का शयन और उनकी नाभि से ब्रह्मा की उत्पत्ति और ब्रह्मा द्वारा सृष्टि का सज्जन आदि विश्वास प्रचलित रहे। गीता जी का 'यदा यदा ही धर्मस्व में ढूँड विश्वास होन लगा। भगवान के अनेक अवतार राम, कृष्ण नसिंह वामन, कश्यप मत्स्य, वराह आदि की मायता बढी। अठारह पुराणों का नया संस्करण हुआ। परन्तु देवताओं में से अनेक में 'निर्मुक्ति' ही लोकप्रिय रही और इनमें से भी निम्न अत्यधिक लोकप्रिय बन गये। समस्त भारत के कोने-कोने में नगर, पहाड़ी, माग आदि सभी स्थानों पर निम्न मन्दिर पाये जाते हैं। ब्रह्मा की पूजा कम हुई। इस समय ब्रह्मा के मन्दिर केवल इने गिने हैं। विष्णु भी निम्न के बाद लोकप्रियता में दूसरा स्थान पाते हैं। धीरे धीरे अन्य देवी देवताओं की भी उपासना होने लगी। देवी के भी अनेक रूप हैं कुछ देवों की गृहिणी हैं और कुछ कुमारियाँ हैं। इनमें पावती, दुर्गा, लक्ष्मी सरस्वती आदि हैं इनके वाहना की

विविधता भी ध्यान दन योग्य है। शिवजी का नाना (वपन) विष्णु का तट्ट और दुर्गा का मित्र अत्रिकाण साकप्रिय है।

ब्राह्मण धर्म व प्रभाव स बौद्ध और जन धर्म म भी नैव और नवियां प्रकट हो गइ। प्रतिमाओं वनन नगीं और पूजा आरम्भ हा गइ नु प्रकार मनी धर्मों के अनुयायी अथनी मुविधानुमार विभिन्न दवनाप्रा म श्रद्धा करन नग और उर्ही की उपासना द्वारा अथन कार्यो की सिद्धि का अथना करन थ। नमी प्रकार तीथयात्रा की प्रथा भी साकप्रिय वनी। गकराजाय द्वारा प्रसिद्ध मन्नाकाना की म्यापना और बद्दी विगाण जगन्नाथपुरी सनुब्रज रामस्वरम और टागिकापुरी चारा विगाप्रा म चारों तीथों को मायता दकर तीथयात्रा का परम्परा का भारतीय जीवन का एक आवश्यक अंग बना लिया। तत्र मात्र का विश्वास भा नूनानिक प्रवर्तित रहा। नम युग की एक और बात ना ध्यान दन योग्य है व न है उक्तानीन गायका और मन्नाओं की उदारता। अगाव न चा न बौद्ध धर्म स्वीकार किया किन्तु उमन प्रथा पर यह धर्म थाग नहा। नमी प्रकार नाग्नवप म वनी भा वाद् राजवम ननी रहा। अथ धर्मों के प्रति मन्व नी न्कारता का नाति अथनाद गइ। धर्म व प्रति नमन नीति से भारत अथरिचित है। इसनिए यहा व नु जा सकता है कि यनी धार्मिक प्रगति मुदैव हा किन्व धर्म की आर हाती गई और न्मा का य न है कि धार्मिक सहिष्णुता भारतीय जीवन का एक सर्वोत्कृष्ट विगापता माना जाता है।

अभ्यास के लिए प्रश्न

- १ इस युग का साहित्य और कला की प्रगति का विस्तार से वणन कीजिये।
- २ इस युग की बहानिक और धार्मिक उन्नति पर निबन्ध लिखिये।

दारहर्वा अध्याय

विदेशों के साथ सांस्कृतिक सम्बन्ध

प्रस्तावना—भारतीय सभ्यता के स्वर्णकाल में भारतवर्ष में केवल राजनैतिक एक सामाजिक क्षेत्र में ही उत्पत्ति की हो अथवा केवल बौद्धिक एवं सांस्कृतिक प्रगति से ही सन्तुष्ट रहा हो, ऐसा नहीं था। अपनी समृद्धि, दमता और कर्तव्य दृष्टि से प्रेरित होकर भारतीय नागरिक विदेशों की धार भी गढ़ और समय तथा स्थिति के अनुसार राज्य, उपनिवेश या व्यापार स्थापित किया। साथ ही साथ मातृभूमि का स्नह बराबर बनाये रखने के लिए, इन्हीं लोगों ने अपनी सृष्टि के सभी महत्वपूर्ण तत्वों को अपने जीवन का अंग भी बना लिया। बहुत बड़ी मर्यादा में इन्हीं के साथ ऐम लोग भी गये जिनका एक मात्र उद्देश्य धर्म प्रचार सृष्टि विस्तार, जनसंख्या वृद्धि अथवा सभ्यता प्रदान करने का था। इन्हीं के साथ भारतीय परम्पराएँ रीति रिवाज भाषा साहित्य और मस्तिष्क भी विदेशों में पहुँचे थे। वर्तमान समय में विभिन्न स्थानों पर अनेक ऐसे प्रमाण प्राप्त हुए हैं जैसे मन्दिर, शिलालेख नाम, भाषा ग्रन्थ आदि जिनसे उन स्थानों का भारतवर्ष से सम्बन्ध सिद्ध होता है। यही हम यहाँ के प्रमाण हैं कि भारत के विदेशों के साथ अनेक महाने सांस्कृतिक सम्बन्ध रहे हैं। अतः इसी विषय का हम अध्ययन करेंगे।

भारतवर्ष की स्थिति—सभ्यता और सृष्टि के विकास की दृष्टि से भारतवर्ष का अत्यन्त सम्यक् और सफल देश होना अविनाशक था। हम पूर्व के अध्यायों में यह देख चुके हैं कि सभ्यता नदी की घाटियों में विकसित हुई थी। भारतवर्ष इस दृष्टि से पूर्ण रूपेण नदियों का ही देश है। सिन्धु की घाटी गंगा यमुना की घाटी ब्रह्मपुत्र की घाटी कृष्णा गोदावरी की घाटी आदि सबके सरिताया का प्रसार है, इस लिए नदीकालीन सभ्यता की दृष्टि में भारतवर्ष अवश्य अग्रणी रहा है। इसके अतिरिक्त भारतवर्ष की साधारण भौगोलिक स्थिति भी बहुत अनुकूल थी। क्षेत्रफल का दृष्टि से देखा जाय तो भारतवर्ष तत्कालीन युग में बहुत बड़ा राज्य था। मार्गों की दृष्टि से देखा जाय तो इसे जल और स्थल दोनों मार्गों की सुविधा थी। पटौस की दृष्टि से देखा जाय तो किसी एक ही ओर के देशों पर इसे निर्भर रहने की आवश्यकता नहीं थी बरन् चारों ओर के देशों से समीप था और इन सबसे अधिक विदेश सृष्टि की बात थी भारतवासियों की समृद्धि और उससे साथ सहिष्णु धर्म धारणार्थ। इन विशेषताओं के कारण ये किसी का संचमूच गोपण नहीं करत थे। अपनी समृद्धि से दूसरों को सांसारिक दृष्टि से सुखी बनाना चाहते थे और इसके साथ सरल और सत्य धर्म की शिक्षा का उत्तरदायित्व पूरे उनका सौजन्य के सुवर्ण की सुगन्धि बना देता था। यहाँ के गिरी और कलाकार जाकर दूसरों के देशों की कला बनाने में जुट जाते थे। इसलिए एक भी घटना ऐसी नात नहीं है जहाँ भारतवर्ष

विविधता भी ध्यान देने योग्य है। गिबजी का नया (नयन), विष्णु का गहन और दुगा का गिब अधिकांग नासप्रिय है।

शास्त्रों में धर्म का प्रभाव म बौद्ध और जन धर्म म भी एक और नवियों प्रकट हो गई। प्रतिमाओं बनने तथा और पूजा आरम्भ हो गई इस प्रकार सभी धर्मों का अनुयायी धर्मना मुक्तिदानुसार विभिन्न न्यायाधी म श्रद्धा करने तथा और उपायों की उपायना द्वारा धर्मन कायों की गिद्धि की प्रपत्ता करत थ। नयी प्रकार तीर्थयात्रा की प्रथा भी नासप्रिय बनी। गकराचाय द्वारा प्रसिद्ध मन्त्राज्ञा का स्थापना और बड़ी विधान जगन्नाथपुरा मनुष्य म रामचरम् और द्वाविकापुरा चारों न्यायाधी म चारों तीर्थों को मायजा कर तीर्थयात्रा का परम्परा का भारतीय जीवन का एक आवश्यक अंग बना लिया। तत्र मात्र का विधान भी पुनापिन प्रवृत्ति रहा। हम युग का एक और बात जा ध्यान देने योग्य है न है न्यायान गामका और मन्त्राज्ञा की उत्पत्ति। अज्ञान न ना बौद्ध धर्म स्वीकार किया किन्तु ज्ञान प्रजा पर धर्म धर्म धारा नया। नयी प्रकार भाग्यधर्म म कभी भी वाद रात्रधर्म नहीं था। धर्म धर्मों का प्रति मन्त्र था उपायता का नीति धर्मना गद। धर्म का प्रति ज्ञान नाति म भारत अपरिवर्तित है। ज्ञानिण यही कहा जा सकता है कि यहाँ धार्मिक प्रगति मन्त्र था किन्तु धर्म की आर श्रद्धा गद और नयी का यत्न करना है कि धार्मिक महिष्णुता भारतीय जीवन का एक सर्वोत्कृष्ट विपत्ता माना जानी है।

अन्यास के लिए प्रश्न

- १ हम युग की माहित्य और कला की प्रगति का विस्तार म धर्मन कीजिय।
- २ हम युग की यत्नानिक और धार्मिक उन्नति पर निबन्ध लिखिय।

धारहर्षा अध्याय

विदेशों के साथ सांस्कृतिक सम्बन्ध

प्रस्तावना—भारतीय सभ्यता के स्वर्णयुग में भारतवर्ष में बचन राजनतिक एवं सामाजिक क्षत्र में ही उन्नति की ही अपनानी बचन बौद्धिक एवं सांस्कृतिक प्रगति से ही सन्तुष्ट रंग ही, ऐसा नहीं था। अपनी समृद्धि शक्ति और वस्तुव्य दृष्टि से प्रेरित होकर भारतीय नागरिक विदेशों की धार भी गये और समय तथा स्थिति के अनुसार राज्य उपनिवेश या व्यापार स्थापित किया। साथ ही साथ मानू भूमि का स्नह बराबर बनाय रगन के लिए, इही लोग न अपनी सृष्टि के सभी महत्वपूर्ण तत्त्वों को अपने जीवन का धर्म भी बना लिया। बहुत बड़ी गत्या में इही के साथ ऐग लोग भी गये जिनका एक मात्र उद्देश्य धर्म प्रचार, सृष्टि विस्तार जन सम्पन्न वृद्धि अथवा सभ्यता प्रदान करने का था। इही के साथ भारतीय परम्पराएँ गीति-रिवाज भाषा, साहित्य और सस्वार भी विदेशों में पहुँचे थे। वर्तमान समय में विभिन्न स्थानों पर अनेक ऐसे अवशेष प्राप्त हुए हैं जैसे मन्दिर गिनालेख नाम भाषा ग्रन्थ आदि जिनमें उन स्थानों का भारतवर्ष से सम्बन्ध सिद्ध होता है। यही इन बातों के प्रमाण हैं कि भारत के विदेशों के साथ अच्छे गहरे सांस्कृतिक सम्बन्ध रहे हैं। अतः इसी विषय का हम अध्ययन करेंगे।

भारतवर्ष की स्थिति—सभ्यता और समृद्धि के विकास की दृष्टि से भारतवर्ष का अत्यन्त सम्य और महत्त्व देण होना अनिवाय था। हम पूरे के अध्यायों में यह देख आए हैं कि सभ्यता नती की घाटियों में विकसित हुई थी। भारतवर्ष इस दृष्टि में पूरे रूपण नदिया का ही देण है। सिन्धु की घाटी गंगा यमुना की घाटी, ब्रह्म-पुत्र की घाटी कृष्णा गोदावरी की घाटी आदि सबत्र सरिताया का प्रसार है, इस लिए नदीकालीन सभ्यता की दौड़ में भारतवर्ष अवश्य अग्रणी रहा है। इसने प्रति रिकत भारतवर्ष की साधारण भौगोलिक स्थिति भी बहुत अनुकूल थी। क्षेत्रफल का दृष्टि से देखा जाय तो भारतवर्ष तत्वानीन युग में बहुत बड़ा राज्य था। मार्गों की दृष्टि से देखा जाय तो इसे जल और स्थल दोनों मार्गों की सुविधा थी। पत्थर की दृष्टि से देखा जाय तो किसी एक ही और के देण पर इसे निर्भर रहने की आव-श्यकता नहीं थी बरन चारों ओर के देण से समीप था और इन सबके अधिक विगप मन्त्र के बान थी भारतवासियों की समृद्धि और उसके साथ सहिष्णु धर्म धारणायें। इन विशेषताया के कारण ये किसी का सचमुच शोषण नहीं करते थे। अपनी समृद्धि से दूसरों को सासारिक दृष्टि से सुखी बनाना चाहते थे और इसके साथ सरल प्रौ-सत्य धर्म की शिक्षा का उदारतापूर्वक पुट उनका सौजन्य के सुवर्ण की सुगन्धि बना देता था। यहाँ के शिल्पी और कलाकार जाकर दूसरे देशों को बना बनान में जुट जात थे। इसलिए एक भी घटना ऐसी पात नहीं है जहाँ भारतवा

का विरोध हुआ हो या इन्होंने बन्धुत्व अपने को बसाया हो, राज्य स्थापित किया है। यह है भारतीय स्थिति जो विदेशों के साथ सांस्कृतिक सम्बन्धों के लिए उत्तरदायी है।

विदेशों के साथ सम्बन्ध मांग—बस तो सामायण शक्ति के प्रमाण से यह प्रकट होता है कि वायु मार्ग भी भारतवर्ष में प्रयुक्त हुआ था और हमारे दरवाजों के बाह्य, जस विष्णु के बाह्य, गंगा भी इसी ओर मुक्त करत है, किन्तु फिर भी ठान प्रमाण के अभाव में हम उन मार्गों को भी जोन और स्थान मांग जाना भारतीय अभ्युत्थान के प्रमाण के लिए खुद हुए थे। स्थान मांग में अवर और वानन के दरों और अश्वत्थ के घाटी ताना मांग प्रधान थे। अर्थात् का सहायता से उत्तर और पश्चिम के प्रदेशों में पहुँचा जाता था। व्यापार भी इन्हीं मार्गों से होता था और पत्थरों का जल मार्गार तुर्किस्तान प्रफगानिस्तान तिब्बत, चीन जापान आदि में इन्हीं मार्गों से पहुँचत था। धर्म प्रचारक और साहित्यकार इन देशों में जाकर बनी बने जाते थे परन्तु मान भूमि के स्वरूप के कारण अनाश्रित जान के सम्बन्ध बनाय रगत थे। वे लोग वहीं अपना उद्यम अध्ययन, व्यवसाय अथवा व्यवसाय करने लगत थे। पूर्व के ओर ब्रह्मपुत्र के मार्ग से लोग चीन और दूसरे पत्थरों के देशों में पहुँचत थे। यहाँ नगी जनमाग का उपयोग भी बहुत हुआ था। समुद्र पार निकम्प्य अथवा लून्य देशों के साथ जनमाग द्वारा ही सम्बन्ध भी सक्ता था। इसका प्रमाण भारत वानियाँ न बनी अभ्युत्थान से किया था। उस समय अनेक प्रसिद्ध बन्धुगण बने हुए थे जम गागानपुर (पूर्वी तट), भगुच्छ (पश्चिमी तट) ताघनिष्ठी (उत्तरी) आदि जगह से जनमान नियमित रूप से आते जाते रहते थे। बनी से भारतीय लोग पूर्वी द्वीप समूह के अन्धकारों जापान आदि देशों में पहुँचत थे। उक्त शहर और अरबमागर या बगान के खाड़ा के पार करके मिस्र मत्तानामिया यूनान आदि यूरोपीय देशों और यहाँ तक कि दक्षिण अमेरिका में भी भारतवर्षा लोग पहुँच गये थे। यद्यपि निश्चित प्रमाण तो नहीं है, किन्तु यह कहा जा सकता है कि स्थान मार्गों के अभाव में जनमाग अधिक उपयोग में आते और सुविधाओं की दृष्टि से भी मुख्य दायक मिद्ध जगह थे। अन्तिम दूर दूर तक भारतीय संस्कृति विस्तृत भी सक्ता और विदेशों में सम्पन्न स्थापित हो सकत था।

भारतवर्ष की महानता—जब तक किसी देश में वास्तविक महानता नहीं है वह दूसरे देशों की सामाजिक प्रणाली करने योग्य नहीं हो सकता। पिछले युग में अनेक प्रकार की दृष्टि से महानता थी इसीलिए वह इतना बड़ा साम्राज्य बना सका था जिसमें मूर्धन्य नहीं होता था। उस दृष्टि से तत्कालीन भारत की महानता भी निश्चित रूप से माना जाता है। साम्प्रतिक धार्मिक और राजनितिक दृष्टि से भारत विश्व का अग्रणी देश था। आध्यात्मिक शक्ति में भारतवर्षा पहुँचे हुए थे साथ ही साम्प्रतिक दृष्टि से कमठ और निष्प्रवाहन भाषा और अपने इन अनुभवों के दूसरे के पत्रचान के अभाव में उनमें जाते ही चुकी थी। अर्थात् अपने अनुभवों में अथ मानव समुदाय के आनामिक्त करने की भावना से वे प्रेरित थे। अन्तिम दस

अथात्त में भारत के नर-नारी, राजा रज, व्यापारी वग, साधु सन्त, विद्वान-गुणो-बलाकार, शिल्पकार, चिकित्सक, चित्रकार आदि सभी लोग सामर्थ्य के अनुसार लग गये और विदेगा में पहुँचकर अपने स्वामाशानुसार उद्यम करने लगे। अपने निकट के स्थान, पर्वत सरिताएँ, नगर आदि को भारतीय नाम देकर वहाँ भी भारतीय सृष्टि की स्थापना और प्रतिष्ठा कर दी। यह उनकी दूरदर्शिता और मात प्रेम की गहराई का सीधा सच्चा प्रमाण है। ऐसे कौन-कौन से देश और प्रदेश हैं जिनके साथ हमारे सांस्कृतिक सम्बन्धों के प्रमाण उपलब्ध हैं और जहाँ भारतीय सृष्टि की छाप अंकित हो चुकी थी, अब श्रमण हम उनका ही अध्ययन करेंगे।

लका से सम्बन्ध—प्राचीन समय से लका के साथ भारत का सम्बन्ध गहरा रहा है। यदि परम्परा के अनुसार समझा जाय तो यह घनिष्ठता अति प्राचीन है। सम्राट अगाक के समय बौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिए भारतवासी लका भी गये थे, यह तो ऐतिहासिक सत्य है। यह भी सच है कि बौद्ध धर्म का प्रचार लका में बहुत दृष्टा था और इस समय भी वहाँ का प्रमुख धर्म है। बौद्ध धर्म के प्रभाव से ही लका में पाली भाषा और ब्राह्मी लिपि का प्रसार हुआ। यह तो हम सब जानते ही हैं कि लका का हमारे यहाँ सिंह न द्वीप कहते हैं और पौराणिक दानी नानी की कहा निया म आनन्द भी काई न कोई राजकुमार सिंहल द्वीप की राजकुमारी के स्वरूप की प्रणामा मुनकर मुग्ध होता या उससे विवाह करता हुआ मुना जाता है। यह भी प्रचलित है वगाल के एक राजकुमार विजय ने जो बहुत गतिगाली था लका पर विजय प्राप्त की थी और बाद में अपना राज्य भी स्थापित किया था इस घटना का चित्रण भारतवर्ष में कई स्थानों पर मिलता है जैसे अजन्ता की गुफा में जयपुर के अजायबघर में आदि। इस प्रकार राजनीतिक प्रभाव भी लका पर रहा था और धीरे धीरे साहित्य कला, धर्म विज्ञान सभी क्षेत्रों में भारतीय सृष्टि की छाप लका पर जम गई थी। जा अभी तक स्पष्ट दिखाई देती है। वहाँ के मन्दिरों की बनावट, शिलानक्ष मूर्ति कला, ग्रन्थ आदि इस निकट सम्बन्ध के उज्ज्वल प्रतीक हैं।

ब्रह्मा से सम्बन्ध—दूमरा निकटस्थ पड़ोसी देश ब्रह्मा है। इस पहले गंधार नाम से पुकारते थे और लगभग तरहकी शताब्दी तक यह नाम प्रचलित रहा। इस देश में अशोक वगाल और बिहार के निवासी भारतीय गये थे। इस देश का दूमरा नाम 'स्वर्ण भूमि' भी है। यहाँ भी व्यापार वृद्धि और धर्म प्रचार दोनों उद्देश्यों से भारतवासी गये थे। बौद्ध भिक्षुओं ने ब्रह्मा में अपना धर्म प्रचार अत्यधिक किया और लगभग सम्पूर्ण ब्रह्मा पर बौद्ध धर्म का प्रभाव जमा दिया। इससे पूर्व भी भारतीय सभ्यता का प्रभाव ब्रह्मा पर रहा है क्योंकि तत्कालीन विष्णु की प्रतिमाएँ भाषा के ग्रन्थ वैदिक धर्म का प्रभाव और लिपि आदि पर भारतीय प्रभाव स्पष्ट परित्रक्षित होता है। फिर अशोक के समय में तो ब्रह्मा और भारतवर्ष एक ही छत्र के आधीन रहने और भी निकट आ गया और अभी तक अपने विभिन्न क्षेत्रों में ब्रह्मा और भारत मिन जुन कर सच्चे पड़ोसी राष्ट्रों की तरह रह रहे हैं। वास्तव में हमारी आन का घनिष्ठता का आधार हजारों वर्ष प्राचीन हमारी सृष्टि की

निकटता और गहरा सम्बन्ध ही है।

चीन से सम्बन्ध—चीन और भारत के सम्बन्ध भी प्राचीन हैं। ऐतिहासिक प्रमाण बौद्ध धर्म के प्रसार के समय से ही स्पष्ट ही प्राप्य हैं किन्तु इससे पूर्व भी गहरा सम्बन्ध रहा है। इसके अनेक प्रमाण उपलब्ध हैं। कल्पित मातंग और धर्म रत्न दोनों बौद्ध भिक्षु चीन में धर्म प्रचार के उद्देश्य से गये और वहीं बसे गये। इसी क्षेत्र में व्यापक कार्य करने की दृष्टि से उन्होंने अपने धर्म ग्रन्थों का अनुवाद चीन की भाषा में किया और चीन निवासियों के लिए बौद्ध धर्म सुगम बना दिया। इस प्रकार लगभग ३५० धर्म के पुस्तकों का उल्लास किया गया था। चान निवासियों बौद्ध धर्म के द्वारा पूरी तरह प्रभावित हो गये थे। यही कारण है कि उनकी गहरी श्रद्धा ज्ञान के कारण आवागमन की अनेक कठिनाइयाँ हट गयीं और भी फाह्यान ह्वेनसांग जैसी विद्वान् महत्त्वात्मा भारतवर्ष में आए और स्वयं प्रत्येक चीन का अध्ययन कर सहाय्य किया। यही नहीं इसी धार्मिक धर्मिष्ठता के फलस्वरूप व्यापारिक और अन्तर्गत राजनतिक सम्बन्ध भी चीन के साथ बन गये। जैन और सैन दोनों भागों का पूरा उपयोग किया गया। राजनतिक क्षेत्र में राजदूतों का आदान प्रदान ज्ञान गया। परस्पर यात्रियों का आनन्द जान का सुविधाएँ भी जान लगीं। उन लोगों की विद्वान् दृष्टि स्मृतियाँ आज अत्युत्तम प्रमाण हैं। निम्न आचार पर भारत और चीन अपने प्राचीन सम्बन्धों की सीमा समझ सकते हैं। राजनतिक क्षेत्र में प्रतिनिधि सुस्थाएँ, निवासन पद्धतियाँ मतपत्र आदि चान और भारत में एक ही प्रकार से विकसित हुए और उपयोग में आए हैं। अफीम की उपज भारतवर्ष में अत्यधिक होती थी और चान में अत्यधिक उसका प्रयोग होता था। जब फाह्यान जायस गया तो लगभग भी भारतवासियों उसका साथ जहाज में चीन गए थे। यह भी गहरा सम्बन्धों का ही प्रतीक है। इससे भी स्पष्ट है कि भारतीयता चान में जाकर प्रत्येक क्षेत्र धार्मिक राजनतिक सामाजिक दार्शनिक आदि में स्थापित हुई किन्तु उस पर भारतीयता का प्रभाव स्पष्ट रूप में रहा था भी मन्थ है। इस प्रकार चीन और भारत में गहरा सम्बन्ध रहा है।

पूर्वी द्वीप-समूह (हिन्दिया Indonesia) से सम्बन्ध—प्राचीन पूर्वी द्वीप समूह का अब आधुनिक नाम हिन्दिया है। इसमें मुख्य रूप में जावा सुमात्रा बान्दी बानिया आदि के साथ प्राचीनकाल में विनाय सम्बन्ध रहा है। जिसके फलस्वरूप वहाँ के नर-नारा और नगरों के नाम मूर्तियाँ, भाषा अर्थ तथा परम्परा आदि पर भारतीय प्रभाव प्रकट होता है। इसी का मूर्ति अध्ययन हम यहाँ करेंगे।

चम्पा (अनाम)—यह नाम उस प्रदेश का था जिस अब अनाम कहते हैं। यहाँ पर भारतीय लोग जाकर बसे गये और बाद में अपना राज्य भी स्थापित कर लिया। लगभग प्रथम से लेकर पन्द्रहवीं शताब्दी तक यह राज्य चलता रहा। अन्त में माना जाता है कि यहाँ के शासक बिहार के राजवंश से सम्बन्धित थे और उन्होंने ही यह राज्य स्थापित किया था। अमरावती चम्पा की राजधानी थी।

सत्त्वमालीन राजाओं के नाम पूरणरूप से भारतीय थे जमे जयपरमेश्वर देव वर्मा, इन्द्रवर्मन, हरिवर्मन आदि जयपरमेश्वर ने तो ब्रह्मा की प्रतिमा बनवाई थी और उसके राजकुमार और भेनापति ने प्रतिमा की पूजा प्रतिष्ठा कर भूमि दान किया था। अभी वहाँ अनन्तगायी विष्णु की एक प्रतिमा भी मिली है। धीरे धीरे यह राज्य निचल हो गया और मुसलमानों के आक्रमण होने लगे और अन्त में यहाँ इस्लाम का प्रभाव अधिक हो गया। फिर भी भारतीय सभ्यता का प्रभाव समूह नष्ट नहीं किया जा सका। तेरहवीं शताब्दी में चम्पा की एक महारानी थी, उसका नाम गौडेन्द्र-लक्ष्मी था। यह महिला बंगाल के गौड़ बंग की राजकुमारी थी ऐसा लगता है क्योंकि उपनिवेश में जाकर राज्य स्थापित कर लने पर भी अपने सम्बन्ध बनाए रखा और बंग की गुदता रखने की दृष्टि से य प्राचीन भारतवासी अपने विवाह सम्बन्ध आदि भारतवर्ष में ही आकर करते थे, यह रिवाज सदब से ही रहा है। इस समय भी अनेक भारतवासी विरायकर पजाबी और मारवाटी लोग हिन्दुगया में हैं किन्तु वे सब शादी विवाह भारतवर्ष में ही आकर करते हैं। इसके अनिश्चित वहाँ पर प्राप्त सिलालेख सस्कृत भाषा में लिखे हुए मिले हैं। इसका अर्थ है कि इन उपनिवेशों में सस्कृत भाषा का बहुत प्रचार था, राज वाङ्मय, अध्ययन-अभ्यापन में यही भाषा प्रयोग में लाई जाती थी। समस्त ग्रन्थ, काव्य आदि इसी भाषा में लिख जाने थे। इस प्रकार भारतीय सस्कृति का प्रभाव यहाँ पर बहुत था यह सिद्ध होता है।

कम्बोज (कम्बोडिया)—इस प्रदेश को उस समय कम्बुज या कम्बोज कहते थे। अब इसका नाम कम्बोडिया है। यह किंवदन्ती है कि दक्षिण के कौडिय नामक ब्राह्मण ने यहाँ हिन्दू राज्य की स्थापना की थी। उस ब्राह्मण ने सोमा नामक नाग बच्चा से विवाह किया था इसलिए इस बंग का नाम 'सोमबन्ध' कहते हैं। चीन के विद्वान इस राज्य का नाम फूना कहते थे। कुछ विद्वानों की राय में यहाँ 'सोमबन्ध' का राज्य नहीं था, 'सूमबन्ध' का राज्य था और प्रथम शताब्दी से लेकर १५वीं शताब्दी तक चलता रहा है। यहाँ पर भारत के अवधम का प्रभाव अधिक हुआ। शिवजी की प्रतिमा और गिग दोना ही रूपों में उपासना होती थी और पावनी जी की पूजा भी उमा, भवानी गौरी दुर्गा आदि सभी रूपों में होती थी। भगवान विष्णु की मूर्तियाँ भी यहाँ प्राप्त हुई हैं इसलिए यह भी सच है कि वैष्णव धर्म भी यहाँ पहुँच चुका था और बौद्धधर्म तो आया ही था। हाँ यह अवश्य लगता है कि इस प्रदेश में हिन्दू धर्म की प्रभुत्व थी। धर्म के साथ साथ ही कला, भाषा और साहित्य भी यहाँ आया। यन्त्र आदि प्रचारित रहे। सस्कृत भाषा का अध्ययन लोक-प्रिय रहा। मन्दिरों का निर्माण हुआ और वास्तुकला की उत्पत्ति हुई। यहाँ पर कुछ प्रतिमाएँ यम, वायु अग्नि सूर्य आदि की प्राप्त हुई हैं और कुछ मन्दिर अभी भी हैं जस अगस्तस्यार का मन्दिर आदि जो पूरणरूपेण भारतीयता के प्रतीक हैं। चतुर्भुज चन्द्र का स्तूप भारतीय कला का सुन्दर उदाहरण है। इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि कम्बोज पर भारतीय सस्कृति का बहुत प्रभाव था और इन दोना में परस्पर गहरा सम्बन्ध रहा था।

मसाला—इस भारत में मलय क्षेत्रीय कहा जाता था। यहाँ भी भारत बसा गया था और अपना राज्य स्थापित किया था। आठवीं शताब्दी में गणेश्वर बन न यहाँ हिन्दू राज्य की स्थापना की थी और बाद में यही साम्राज्य बन गया था। इस साम्राज्य में धर्म-धाम का सभी मुख्य प्रयोग हुआ मुमात्रा बानी आदि सम्मिलित हो गए थे। भारतीय पद्धति का अनुसरण यहाँ का धर्म 'महाराज' आदि उपाधियाँ भी धारण करती थी। यहाँ बौद्धधर्म की मन्थान नाम का अधिक प्रचार हुआ क्योंकि राजवंश का विद्वान् इसी सम्प्रदाय में था। इस राजवंश में मलय प्रायद्वीप में धर्म मन्दिर मूर्तियाँ और स्तूप बनाने और भारतीय मूर्ति का प्रतिष्ठा स्थापित किए किन्तु दुर्भाग्यवश लगभग तुरन्त ही गताग्नी में यह वंश समाप्त हो गया और बाद में विभिन्न जातियाँ का अधिकार हो गया। किन्तु भारतीय सम्प्रदाय का प्रभाव वहाँ बना रहा।

जाया—भारतवर्ष में इस यज्ञदीय वंश का जाया का सम्प्रदाय में कई प्रकार की बहानों और परम्पराएँ प्रचलित हैं। जाया में भी एका कहा जाता है कि कतिपय वर्ष में भारतवासी यज्ञदीय गए और वहाँ यग्यर दीय का धाम कर लिया। यह भी प्रचलित है कि ईसा के पचास वर्ष बाद गुजरात के एक राजकुमार यज्ञदीय पहुँचे और उन्होंने यज्ञदीय को अपना उपनिषद् बना लिया। एक मुगलमान लखन का विश्वास है कि उस समय यहाँ का राजा मन्थाराज उद्गता था। अर्थात् उस समय यहाँ पूर्णरूपेण भारतीय प्रभाव स्थापित हो चुका था। बौद्धधर्म का प्रचार भी था और भारतीय विधि भी प्रयोग में आती थी। राज्य काय ना मस्तुन और पाती में होता था। धार्मिक कार्यों में श्राद्धणा का बुराया जाता था। जाया की राज्य गति धीरे धीरे स्थिति में और धर्म में मन्थारा पर भी अधिकार जमा लिया। तैरहवीं शताब्दी में उत्तरार्द्ध में मन्थारा विजय में एक राजकुमार का स्थापना की थी। पन्च हिन्दू धर्म और बाद में बौद्धधर्म का प्रचार हुआ। इस समय भी धर्म मन्दिरा का अन्वय धर्म की प्रतियाँ और मूर्तियाँ आदि उपनय है। रामायण और महाभारत यहाँ का अत्यधिक प्रिय मन्थाराय्य थे जो जन जन का मान में अपना स्थापना बनाए हुए थे। इस प्रकार जाया में भारतीय मस्तुन और सम्प्रदाय का प्रचार रहा है।

मलक्का, बाली, सोनियो और सिलिप्पाइम—सिन्धिया का यह अन्वय महत्त्वपूर्ण टागुओं में भी भारतीय सम्प्रदाय का प्रभाव था। एक हिन्दू सामन्त ने १५वीं शताब्दी में मन्थारा में अपना राज्य स्थापित किया और धार धार बहुत गतिगती राज्य का रूप में विकसित कर लिया था। यह व्यापार का भी केंद्र बन गया था। बानी में ठा बहुत पढ़ने लगभग छोटी या गातवीं शताब्दी में ही हिन्दू राज्य के स्थापित होने की बात प्रचलित है और वहीं बौद्धधर्म का प्रचार भी हुआ था। धर्म का भी बानी में भारतीय सम्प्रदाय प्रचार है यह सब का विषय है। इसी प्रकार अन्वय कई स्थानों में जैसे बकनपुर (बालिया) आदि जगहा पर हिन्दू धर्म का प्रभाव अब भी बहुत है। वहाँ का धर्म भारतीय धर्म का अनुसरण है। देवमन्दिरों का विधान है और उनमें प्रतिमाया की स्थापना शिव उन्की पूजा शिवी

है। वास्तुकला और चित्रकला में भी भारत की छाप है। इन स्थानों में एक शिला लेख मिलता है जिसमें 'त्रिमूर्ति' ब्रह्मा, विष्णु महेश की स्तुति लिखी हुई है। और भी अनेक प्रकार की मूर्तियाँ आदि यहाँ मिली हैं जिनसे भारतीय सम्पत्क और निरुद्धता सिद्ध होती है। इसके अतिरिक्त यहाँ के रहन-सहन वेशभूषा रीति रिवाज, साहित्य कला, भाषा और सामाजिक ढर्रिया में भी भारतीयपन के स्पष्ट दर्शन होते हैं।

उपनिवेश और भारतीयता—उपरोक्त वणन में आए हुए पड़ोसी देश भारतीय उपनिवेश थे जहाँ भारतीय नागरिक अपने और वहाँ के नागरिकों का हिन करने की दृष्टि से जाते थे किन्तु मान भूमि का स्नेह निरंतर बनाए रखते थे। लगभग इन सभी उपनिवेशों में संस्कृत भाषा का प्रसार था। संस्कृत ही पठन पाठन साहित्य सजन तथा जनता के व्यवहार में आने वाली भाषा थी। तत्कालीन शिलालेख, धर्मग्रन्थ आदि सभी संस्कृत में ही लिखे जाते थे। वहाँ के देवी देवताओं की भावना भी भारतीय परम्परा के अनुसार ही थी। पौराणिक एक बौद्धधर्म दोना का प्रसार हुआ था। पौराणिक धर्म के अनुरूप ब्रह्मा, विष्णु और महेश की भावना थी तथा इन्हीं के साथ अन्य देवता भी पूज्य माने गये थे। जैसे शिव व साथ पावती, उनका नदी गणेश स्वामी कार्तिकेय आदि भी पूज्य थे इसी प्रकार विष्णु की पूजा होती थी, किन्तु इनके अवतारों का प्रचार अधिक था और उनमें भी राम और कृष्ण के रूप अधिक लोकप्रिय थे। चम्पा आदि स्थानों में राम लक्ष्मण आदि चारों भाइयों की पूजा होती थी। बाली द्वीप में रामायण ग्रन्थ भी उपलब्ध हुआ है। इन स्थानों में अन्य पौराणिक गाथाएँ भी बहुत प्रचलित रहीं हैं, भारतीय परम्पराओं की भाँति ही महा भी राजा ईश्वर का अवतार समझा जाता था कई शासक अपने आप को भगवान विष्णु का अवतार कहते थे। जैसे चम्पा बाली आदि के राजा यह प्रकट रूप से कहते थे कि हम विष्णु के अवतार हैं। इन देवताओं के वाहन भी भारतीय पद्धति के अनुरूप ही हैं केवल स्थान और काल के कारण कुछ परिवर्तन अवश्य हो गए हैं। वही वही विष्णु और शिव की तथा कहीं ब्रह्मा विष्णु महेश तीनों की भी सम्मिलित मूर्तियाँ मिली हैं। यह भी प्राचीन भारत की परम्परा थी। 'सर्वदेव नमस्कार' की भावनानुसार सभी देवता समान थे। यह भाव इन स्थानों में था इससे यही सिद्ध होता है। मन्दिरों का निर्माण भी हुआ है। धार्मिक ग्रन्थों में से रामायण, महाभारत और गीता की कुछ प्रतियाँ इन स्थानों में उपलब्ध हुई हैं। वे यह सिद्ध करती हैं कि इन स्थानों पर भारतीय संस्कृति का बहुत गहरा प्रभाव रहा है। मूर्तिकला और चित्रकला के क्षेत्र में भी ये प्रदेश प्रभावित हुए थे। परन्तु उनके स्पष्ट प्रमाण समय की गति के कारण नष्ट हो गये। इस प्रकार इन उपनिवेशों में भारतीय संस्कृति की जड़ें गहरी जमी हुई थीं जिनके कुछ अवशिष्ट प्रमाण वर्तमान काल में भी सर्वत्र मिलते हैं। सुवारणों (सुन्दर वण वाला), मण्डारलायक आदि नाम पूण रूपेण भारतीय हैं यह कभी भी अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

मध्य एशिया और पश्चिम के देश—भारतीय संस्कृति की प्रगति और विस्तार सबसे उत्तम थी। इसलिए अफगानिस्तान, बिलोचिस्तान, काशगर, झोक्न्द (खोतान),

चीनी बुद्धिमान आदि धनक दगा म ना भारतीय मध्यता का प्रसार हा चुना था । धम त्रिपि, मसूति, भाषा, कथा आदि विभिन्न विधाएँ ज्ञान की रथा इन दगों मे पहुँची थी । लगभग रंगा की पाँचवा गताङ्गी तक य प्रभाव रगा । तत्पश्चात् दूसरी जातिया क आक्रमण क कारण य प्रभाव जाता रगा । मीथ गात्राय क समय अस्फानिस्तान आदि तो भारतवर्ष म भी ममक जान थ और वातुन और कंधार क नाम उम समय तनत नासप्रिय थ जम आक्रमन ककता और कान्धीर । अफानिस्तान क पाग पश्चिम का भाग 'बकिष्पा' कताता था । उमम नी भारतीय मध्यता की गन्ना छान था । विधाएँ बौद्ध धम का प्रभाव वीं अत्रि थ । बिन्दुकिस्तान म भारतीय मप्रिय नी राच्य करन थ । मुमवमाना क निरन्तर आक्रमणों म वचन क विण निर य लाग भारत का आर आ गण थ । चीनी बुद्धिस्तान तो भारतीय मसूति का वन्दे हा था । ज्ञान का आर जान ज्ञान भाग यीं म जान थे । इमीविण भारतीय न मत्र अमन मुनाम बना विण थ । आक्रम और भिण योग धम प्रचार क विण जान थ और वग वम जान थ । धम क प्रचार क माय माय ही रथाभाविक र्ग म गात्रिय रना और मध्यता का प्रसार नी ज्ञान रना था । काणगर और सोतान आदि रग जगनग पूरूपण भारतवर्ष रग म हा वन गण थ । राजा का मगाराज और पण्डित का पुगतिन कर्तुन रा परधरायें भी वरी थी । त कानीय प्राप्त भवणपा म पात जाता है कि वीं मसूति और पाती भाषयें और आत्मी त्रिपि का प्रचार था । वीं का आत्मी त्रिपि ना विधाएँ रग का है जिम वारम्भना पद्धति क मकन है । पहन भारतवर्ष म ना वारम्भनी पद्धति का प्रचार था और आक्रमन जम मत्रप्रथम जमाना माथा जानी है वम ना पत्र वारम्भनी मिखाट जाना था । सोतान ना वद्ध धम का मूत्र वन्दे रगा है । वीं मसूति भाषा का प्रचार था और मराठा त्रिपि व्यवहार म जा जाती था । यीं एन जिना रम म नामन का नाम राजाधिरान र व विजितमि विखा हुमा मिता है । इमय यह अनुमान रगाता है कि किक्कि क धनमार मगाराज अगाह क म पुत्र विजितमम्भन था थ विधान मानान म अमन रात्र का स्थापना की था । उमव बाद धनक रान्तधा क नाम क माय विजित म का प्रदाग ज्ञाना रगा जम विजितमि विजित-वानि आदि । य राजवग ना बुद्ध धम का ही अनुयाया रगा । पहने भारतीय मध्यता क प्रसार तु मसूति भाषा और गात्रिय का प्रचार करन म त्पायता ना विज्ञानय स्थापित करवाण । म प्रचार क स्थाना म बौद्ध मुनिवा स्तून, चित्र और व-वड पुस्तकानय प्राप्त हुए हैं । विमान भारतवर्ष क अ-वधोय क वदे नाटका का प्रतिधा नी इन स्थाना म उपनय हु हैं । यान्तर म मध्य एशिया गगा स्थान रगा है जहाँ विभिन्न रगों का मसूतियाँ मित्रनी जूनता रगा है । मनातिण भारतीय मध्यता का प्रभाव नी रग क्षेत्र नी मध्यताया पर पना और दीध कान तक रगा । निरन्त मव म भारत और चीन क बीच का महवपुण रगा रगा है । चीन जान क विण और चान म भारत आन क विण निवत हा मध्य म आता है । इमविधे बौद्ध धम का प्रचार करन जो लाग चीन जात्र थे पहुँचे माय म

उन्हें तिब्बत आता था इसलिये बौद्ध धर्म का प्रभाव तिब्बत में बहुत अधिक है। व्यापारिक सम्बन्ध भी इसी कारण तिब्बत से अधिक घनिष्ठ रहे। वर्तमान समय में भी भारतीय प्रभाव बहुत था किन्तु अब साम्यवाद के विस्तार के कारण मय नष्ट भ्रष्ट होना जा रहा है। इधर के प्रदेशों में इन्हीं कला आदि श्रम भी कई विख्यात नगरों में जहाँ भारतीय सृष्टि की आभातीत उन्नति हुई थी। वहाँ अनेक भवन विहार आदि थे तथा सृष्टत भाषा एक विंगप पद्धति जिस कालांतर प्रणाली कहते हैं, से पढाई जाती थी यहाँ बौद्ध धर्म व अनेक अति प्राचीन एमे श्रम भी मिले हैं जो अब तक प्रकाश में नहीं थे। ज्योतिष, साहित्य, चिकित्सा गणित आदि के श्रम भी उपलब्ध हुए हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि इन प्रदेशों में भारतीय सम्प्रदाय पर बर गई थी और कई गताश्रित्या तक उसका एकछत्र प्रभाव बना रहा था।

पश्चिमी देशों में भारतीय सृष्टि मुख्य रूप में व्यापारियों के द्वारा पहुँची। धर्म प्रचारकों के द्वारा नहीं। इसमें तो सन्देह नहीं है कि जब लोग भारत के सम्पर्क में आने से तो एक बार ता के मुग्ध हो ही जाते थे और भारतीय गान, साहित्य, कला आदि के सम्मुख नतमस्तक होकर नमस्कार करते थे। जलमाग ही इन क्षेत्रों तक पहुँचने का सरल माग था। स्थान माग कठिन भी था और दीर्घ भी। यूनान और रोम तक भारतीय सामान जाता रहता था और अधिकतर जलमाग का ही उपयोग होता था। निरन्दर के समय में यह सम्पर्क और भी बढ़ा और यूनान को प्रभावित किया। उद्धान कमवाद और पुनर्जन्म के सिद्धांत स्वीकार किए। इसके अतिरिक्त तक्षशिला में विद्याध्ययन के लिये अनेक विद्यार्थी भी आने लगे। इसी प्रकार रोम के साथ भी व्यापार हुआ। वहाँ भारतीय वस्त्र मलमल बहुत लोकप्रिय हुआ। वहाँ की स्त्रियाँ इस बहुत पसन्द करती थी। इनके अतिरिक्त हिन्दुस्थान से लाये हुए गरम मसाले और अन्य विलास की सामग्री भी यहाँ बहुत खरीनी जाती थी। यह व्यापार बहुत लाभदायक रहा। महात्मा ईसा ने स्वयं भारत की सीमा पर रहकर बौद्ध धर्म का अध्ययन किया था अपने ईसाई धर्म के प्रचार से पूर्व वह बौद्ध धर्म से प्रभावित भी बहुत हुआ था।

इस प्रकार पश्चिमी मसार भी भारतीय सम्प्रदाय से प्रभावित रहा है। इन परिस्थितियों से यह भी अनुमान होता है कि वास्तव में आय लोग यही के निवासी थे और इसीलिये आय सृष्टि का इतना यापक प्रसार सम्भव हुआ है। हजारों वर्षों तक चलत रहने वाला यह सम्पर्क यही सिद्ध करता है कि य सभी लोग आर्यों की सन्तान हैं और एक दूसरे से बहुत दूर होने लगे भी अनेकता में एकता के सिद्धान्त का ज्वलन्त उदाहरण है। एक ही जाति होने के कारण और श्रत्युत्तम सृष्टत सम्प्रदाय होने के कारण अनेक उपनिवेश और राज्य बसाये और गोप क्षत्रों में अपनी सम्प्रदाय और सृष्टि का प्रसार किया, यह भारतवर्ष को सदैव गौरवावित करने वाली विशेषता है और इससे भी अधिक महत्व इस बात का है कि इस समस्त प्रसार और प्रभाव में शक्ति प्रयोग दमन नीति गोपण वृत्ति उच्चता के भाव आदि का कहीं लक्ष्य भी नहीं था। यदि कोई भाव था तो वे आतृभाव, मानव स्नेह

सामाजिक चरित्र की वृत्ति प्राप्ति से जो सदैव ही अच्छी मस्तिष्क के उत्कृष्ट गुण माने जाते हैं। इसलिये भारतीय सभ्यता की विशेषताओं में स्थापना करना भारतवासियों के पुरुषार्थ और साहस का फल है।

अभ्यास के लिये प्रश्न

- १ मध्य एशिया और पश्चिम के देशों पर भारतीय सभ्यता का प्रभाव किस प्रकार हुआ—समझाकर लिखिए।
- २ उपनिषदों के साथ भारतीय सभ्यता के सम्पर्क और उसके प्रभाव पर एक निबंध लिखिए।
- ३ भारतीय भाषा धर्म कला और सभ्यता के प्रमाण कहीं २ किस रूप में प्राप्त हुए हैं टिप्पणियाँ लिखिए।

तेरहवा अध्याय

तुर्कों की भारतीय विजय और इस्लाम का प्रभाव

प्रस्तावना—हिंदू राजाओं से बहुत समय शांति रहने के बाद भारतवर्ष पर तुर्कों के आक्रमण आरम्भ हुए और धीरे धीरे वे लोग यहीं पर बसने लगे और अंत में वे स्वयं भी भारतीय मुसलमान बन गए। जब ये आक्रमण आरम्भ हुए उस समय भारतवर्ष की राजनैतिक एकता नष्ट प्रायः सी थी। महाराजा हर्ष के देहावसान के पश्चात् अनेक समय सामंता और प्रभावशाली व्यक्तियों ने अपने छोटे छोटे राज्यों की स्थापना कर ली थी और ये लोग परस्पर मेष म व्यस्त रहने लगे थे। इसका फल यह हुआ कि किसी भी राज्य का स्वरूप, सीमा व्यवस्था निर्दिष्ट नहीं थी और पड़ोसी देशों की दृष्टि इस प्राचीन सोने की चिड़िया पर लगी हुई थी। ऐसा अक्षर पाकर मुसलमानों ने सर्वप्रथम आक्रमण किया और तब से निरंतर कई आक्रमण हुए। इनका वर्णन अब किया जायगा।

अरब लोगों के आक्रमण—जिस समय भारतवर्ष में यूनाधिक अराजकता सी फैली हुई थी लगभग आठवीं शताब्दी का आरम्भ ही था। उस समय (७१२ ई०) खलीफा के सेनापति मुहम्मद बिन ने भारत पर आक्रमण किया और सिंध पर अपना आधिपत्य जमा लिया परन्तु इससे आगे बढ़ने में उन्हें राजपूत नरेशों की सजगता ने सफल नहीं होने दिया। वास्तव में अरब लोग बहादुर ही थे चतुर शासक नहीं। इसलिए वे सिंध प्राप्त में भी शासन व्यवस्था स्थिर नहीं कर सके। ऐसी दशा कुछ समय तक चलती रही और अंत में दसवीं शताब्दी में सिंध का विभाजन हो गया और दो भिन्न भिन्न मुसलमान सम्प्रदायों के लोगों ने शासन चलाया आरम्भ किया। इस समय न तो और कोई बाहर के आक्रमण हुए और न भारतीय अथवा शासकों ने ही इस ओर ध्यान दिया। इसलिए तीन सौ वर्ष तक यह राज्य चलता रहा। इस प्रकार सिंध की विजय भारत में सर्वप्रथम विदेशी विजय थी। इसका राजनीतिक प्रभाव भयंकर हुआ। अथवा आक्रमणकारियों के लिए यह एक उदाहरण बन गया। राजस्थानी बहादुर चरितार्थ हुई कि 'बुद्धिया के मर जान का खद उतना नहीं था जिनका इस बात का कि मौत द्वार देख गई सचमुच विद्वानों आक्रमणों का इनके बाद से ताता ही लग गया था। अथवा क्षेत्रों में भी अरबों के साथ सम्पर्क का गहरा प्रभाव हुआ। परन्तु भारतवर्ष से अरब लोगों ने अधिक बातें सीखीं। भारतीय तत्त्व ज्ञान, गणित ज्योतिष, साहित्य, प्राकृतिक विज्ञान और अथवा विषयों के अध्ययन से पश्चिमी एशिया में सांस्कृतिक पुनरुत्थान हुआ। यहाँ से इन्होंने शासन प्रबंध सीखा। व्यापारिक लाभ के लिए उन्हें भारतीय क्षेत्र की प्राप्ति हो गई। हिंद महासागर पर उनका प्रभाव जम गया। भारत से आगे वे अब चीन तक जाने लगे और उनकी समृद्धि बहुत बढ़ गई। ये लोग भी आरम्भ में अग्नेय की

भाति गतिपूज द्य स ही भारत आए थे और व्यापार की शुरुआत किया था। परन्तु बाद में सिंधी शासकों की सहायता से जयपुर और मथुरा बनाए, काशी नियुक्त किये। ये लोग अरब और अन्य मुस्लिम राजा से ही अपनी निष्ठा अनुभव करते थे। इसलिए बाद में अरब मुस्लिम शासन के ये लोग प्रथम हान लगे।

तुर्कों के आक्रमण—उपरोक्त अरब राज्य अथवा समय तक नहीं टिक गया। परस्पर राग द्वेष और अन्य कारणों की वजह से राजाओं का राज्य था। तुर्क लोग ने मथुरा प्रथम पञ्जाब पर भी आक्रमण किया और ब्राह्मण राजा का वहाँ से खदेड़ा किया और अपना राज्य स्थापित किया। यह अन्तिम का महत्त्वपूर्ण घटना है। अन्तिम गौतम नामक तुर्क ने यह राज्य स्थापित किया और गजनी का अपना राजधानी बनाया और फिर भी अन्त में विस्तार में व्यस्त रहा। सन् ६७७ ई० में अन्त में मुहम्मद गौतम ने जयपुर के राज्य पर चढ़ाई कर ली परन्तु युद्ध में हार गया। उस समय मथुरा गजनी के विजय का भाग्य ही था। उस समय अन्त में अथवा पन्द्रह वर्ष का भी परन्तु उसका मस्तिष्क बहुत उतरा था। वह भारतवर्ष के राजा राजाओं में प्रथम परिचित था और नौगोत्रित स्थिति का जान भी उसे बहुत था। उसने अपने विना में प्रायः की कि युद्ध के वजाय युक्ति में काम दिया जाय और युद्ध स्थान से समीप जा एकमात्र जनश्रान्त है उसका मन्त्र मिश्रित कर दिया ताकि ब्राह्मण विराजित वगैरे जन न विषे और जन श्रान्त में व्याकुल राजा तमें तत्र आक्रमण किया जाय। ऐसा ही किया गया और फतहपुर तुर्क लोग विजय प्राप्त परन्तु फिर भी जयपाल का राज्य चला रहा। मुहम्मदगान ने भारत पर अन्त में आक्रमण किया था। तुर्कों के पश्चात् मथुरा गजनी ने भी भारत पर अन्त में आक्रमण किया किन्तु स्थायी राज्य का नींव डालने में वह मन्त्र अमल रहा। मथुरा मथुरा गजनी ने सन् १००७ में फिर जयपाल पर आक्रमण किया और उसे हरा दिया। जयपाल इस पराजय में अन्त में अन्त में दुःख कि उसने प्राणात् कर दिया। उसके पश्चात् उसका पुत्र अन्त में राजगद्दा पर बसा और मथुरा ने भी उस माचता ली किन्तु कुछ समय पश्चात् पुन युद्ध हुआ और अन्त में पञ्जाब पर मुहम्मदगान का राज्य स्थापित हो गया।

दूसरी प्रकार गार पर भी गजनी ने आक्रमण किया और तुर्कों के सिद्ध राजा का लड़ा किया। जनता का बंध प्रयाग द्वारा घम परिवर्तन किया और अपने राज्य की सीमाओं विस्तृत बनाने लगा। मथुरा गजनी ने भारत का लू लू कर बहुत क्षति पहुँचाई। अन्त में नगरकाट, यान्त्रिक मयूरा, बन्नीय स्वाधियर काठिन्यर आदि के प्रसिद्ध अन्त में हुए और सामनाथ के मस्तिष्क पर किया गया आक्रमण अत्यधिक महत्त्वपूर्ण और ताक विस्मि है। घम परिवर्तन करना नगर जनता, मस्तिष्क हानता मूर्तिदा मस्तिष्क करना और घन राशि बहार कर ल जाना अन्त में मथुरा काय था। अन्त में प्रकार गजनी का समय चला रहा और स्थायी राज्य स्थापित

नहीं कर सका। सन् ११९१ ई० शाहबुद्दीन गोरी ने उत्तरी भारत के एक बहुत बड़े प्रांत भाग को जीत कर अफगान सल्तनत की नींव डाली। इन आक्रमणों द्वारा महमूद के वंशज वहां से भाग निकले और इन्होंने गजनी को नष्ट कर दिया। इसके बाद उसने पृथ्वीराज चौहान के राज्य पर आक्रमण किया। अनेक बार हार कर अंत में सन् ११९२ में वह विजयी हुमा और उसके पश्चात् लगभग २५ वर्ष में सम्पूर्ण उत्तर भारत पर अनेक आक्रमण किये और वहां अपना राज्य स्थापित किया परन्तु गौरी ने कोई खास नगर अपनी राजधानी बनाकर शासन चलाने का प्रयास नहीं किया और भारत के विजित प्रांतों को अपने सेनापति ऐबक के आधीन कर दिया। इस प्रकार सन् १३०० के लगभग समस्त भारत में मुसलमानों का आधिपत्य हो गया।

तुर्क अफगान सल्तनत—गौरी की मृत्यु के बाद सन् १२०६ में ऐबक कुतुबुद्दीन दिल्ली के सिंहासन का स्वामी बना और वह स्वतंत्र शासक के रूप में कार्य करने लगा। इस समय तक सिंध पंजाब, मगध बंगाल और उत्तर प्रदेश आदि मुसलमानों के अधिकार में आ चुके थे और सन् १२०६ से लेकर १५२४ तक अफगानों का भारत पर अधिकार रहा। इस दीर्घकाल में अनेक सम्राट हुए और राजवंश भी परिवर्तित हुए। ऐबक कुतुबुद्दीन गोरी का गुलाम था इसलिए प्रथम वंश इतिहास में 'गुलाम वंश' कहलाता है। इस वंश में इल्तुतमिश तथा बलबन आदि महान शासक हुए हैं। इन्होंने मंगोल आदि जातियों के आक्रमण से भारतवर्ष को रक्षा भी की है, किंतु इसके अत्याचारों की भी सीमा नहीं थी। लगभग दो सौ वर्षों तक इन्होंने भारतवर्ष में खूब मनमानी की है। हिंदू राज्यों को नष्ट करना सोना चांदी एवं जवाहरात लूटना, स्त्री पुरुषों को गुलाम बनाना, विजित स्थानों पर क्लेथाम करना, मंदिर और मूर्तियां ध्वंस करना, हिंदुओं पर अनैक प्रकार के कर थोपना इनके साधारण कार्य थे। सन् १३०० के बाद इन्होंने अपना विस्तार दक्षिण में भी करना आरम्भ किया और चौहवीं शताब्दी के आरम्भ होते होते सम्पूर्ण भारतवर्ष पर मुसलमान छा गये। हिंदुओं की हर प्रकार मुसीबत आ गई। धर्म, भाषा, साहित्य और संस्कृति सब सन्नत हो गये। इस प्रकार भारत पर मुस्लिम शासन स्थापित हुआ। पहले तुर्क और फिर अफगान लोगो ने यह कार्य किया। इन लोगो ने पांच वंश (गुनाम वंश १२०६-६०) (गिलजी वंश १२६०-१३२०), (तुगलक वंश १३२०-१४१४) (सयद वंश १४१४-१५२६), और (लोदी वंश १४१४-१५२६) ने भारत पर लगभग तीन सौ वर्षों तक राज्य किया। अफगान सुलतानों में अलाउद्दीन खिलजी का नाम उल्लेखनीय है। यही प्रथम मुस्लिम शासक था जिसने दक्षिण भारत पर सर्वप्रथम अपना अधिकार किया था। प्रशासनीय क्षेत्र में भी व्यवस्थित नीतियाँ ही की स्थापना का श्रेय इसी शासक को है। चौहवीं शताब्दी के शासकों में मुहम्मद तुगलक (१३६४-१४१४) और फिरोज तुगलक के नाम उल्लेखनीय हैं। इनके बाद तुगलक वंश का प्रभाव कम होने लगा। इस स्थिति से लाभ उठा कर भारत में पुनः अनेक राज्य स्थापित होने लगे। राजपूताने के शासकों, दक्षिण में बहमनी राज्य

मौर विजयनगर राज्य आदि स्थापित हूँ मय मौर उत्तर भारत म भी बगान गुजरात, खान ग, मानवा, काशपार आदि स्थाना पर मुगलमाना न भी स्वतंत्र राज्य स्थापित कर लिए । इसके पश्चात् मानवों गठान्नी के प्रारम्भ म (१५२६ ई०) म लाली बग क प्रतिम गणक इस्लामी नामी का पानापन क युद्ध में हरा कर बाबर न भारतवर्ष म मुगल साम्राज्य का नींव डाली । यह बग 'मुगल बग' क नाम म विख्यात है ।

मुगल बग—मयप्रथम प्रसिद्ध मगल नती बगल मी मौर तमूरलग न भारत पर आक्रमण किया था मौर उनक आक्रमण बहुत नयकर हुए थ । अफगान मौर हुंजर कुर्बी की गामन व्यवस्था का इन गामा न समाप्त कर दिया था किंतु इन्होंने मी अफना राज्य जमान की शिक्षा म कोई प्रयास नहीं किया । अतः में बाबर न जो गनी का राज था । भारतवर्ष म मुगल साम्राज्य का नींव डाला । उन मी बाग पान बार भारत पर आक्रमण किया मौर अतः म लाली बग क प्रतिम मगल इस्लाम नामी का पानापन म मौर अफन बग मराठ क मराठाणा मीगा का बनवान क युद्ध मत्र म गरा कर मुगल राजवग स्थापित किया । परंतु उनका पुत्र ज़मान यत्र विराजत रचित म न नती समाप्त मरा । गणगाट क ननुत्र म मगलिन अफगाना न ममाय या भारत म निरात बाल किया मौर पुन अफगान राज्य का स्थापना कर ना । परंतु यत्र राजा भा अतःसाय ल रण । यह गामन व्यवस्थित था मौर नीति भा अतःसाय कितु मक अंतराधिकारी मुयाय गही थ । इमतिम ज़मान पुन अफन नाम का छापर करन म मकल हुंजरा मौर जगनग १५ बग तक मर मर मरन क बा अफन फतन राज्य पर आधिकार्य जमा किया । मर १५/६ म उमर दशवमान क पञ्चात अतःसर मगल शिक्षा क सिद्धान्त पर रटा । इम समय भारत का स्थिति प्रत्येक मत्र म विननीय था मौर चारों मार राज्य क गनु छापर नु थ । अतःसर न अफन फना अतःसामगी का महायता न अफना राज्य व्यवस्थित किया मौर अफनी नी मूढि मौर योग्यता द्वारा इत गुण बनाया मौर प्रशासन की शक्ति म मा अतिशय बन गया । अफना अतःसर मौर कुशल नीति द्वारा भारत म नया युग आरम्भ कर दिया । राजगुणों स मिश्रता बनावर कवन मवाट क अतिरिक्त समस्त अतःसर भारत पर अफना आधिकार्य जमा किया । सिद्ध मुस्लिम अतःसर दूर करन क लिए नया मप्रशास आरम्भ किया जिन्का नाम था 'दुनाहा' था । राष्ट्रीय एकता मौर विकास क लिए मौर अतःसर महन्वतू काय किया । अतःसर समय म टाडरमन क द्वारा किया गया बालास्त अमी तक शक्तिम म प्रसिद्ध है । अतः प्रकार नूनाति प्रशासन मौर अतःसरा का अति स अतःसर का शासनकाल अनाथा रण है । अतःसर बा अतःसर न शासन किया मौर अफन पाय क लिए प्रसिद्ध है । अतःसर काय एक नाकाकि बन गया है । अतःसर बा अतःसर का शासन आरम्भ मथा । इसके समय म कना-वीरन बाम्बुका आदि की बहुत अतःसर मूढ । भारत की अतःसर निधि 'ताजमल' का विन क प्रसिद्ध आश्चर्यों में स एक है अमी क समय की कताजति है । मौरमत्रक मवन ही विविध था । अतः

ने परम्परावादी नीति त्याग कर शुद्ध मुस्लिम सिद्धांतों का कठोरता और निममता से पालन किया इसलिए समाज द्वारा विशेषकर हिंदुओं द्वारा वह अप्रिय समझा गया और अंत में ऐसी नीति के फलस्वरूप ही मुगल साम्राज्य का पतन आरम्भ होगया था। इस प्रकार मुगल साम्राज्य भारत में रहा और अंत में छिन्न भिन्न होगया।

इस्लाम का प्रभाव—साधारणतः जब दो सभ्यताओं का मेल होता है तो अधिक विकसित और उन्नत सभ्यता ही अनुनत एवं पिछड़ी हुई सभ्यता को प्रभावित करती है। अथवा यह भी संभव है कि विजेता सभ्यता अधीनस्थ सभ्यता पर बलपूर्वक अपना प्रभाव थोप दे। सम्भवतः बाहर से आकर लोग उस राष्ट्र की सभ्यता को समझकर उसकी त्रुटियाँ दूरकर फिर अपनी सभ्यता की उच्चता सिद्ध करते हुए प्रचार द्वारा उन पर अपनी सभ्यता का प्रभाव डालें। इन अनेक प्रकार के प्रभावों में से कोई भी काम में लाया जा सकता है परन्तु भारतवर्ष में मुस्लिम सभ्यता का प्रभाव एक विशेष ढंग से हुआ। यह तो निश्चित है कि मुस्लिम सभ्यता भारतीय सभ्यता के समक्ष सर्वत्र ही अनुनत और अनुदार रही है इसलिए उच्चता का प्रभाव होने का तो प्रश्न नहीं था किन्तु राजनतिक दृष्टि से शासकों की सभ्यता यह अवश्य थी। इसके अतिरिक्त भारतीय सभ्यता की दो मुख्य विशेषताएँ सहिष्णुता और समय की अपूर्व क्षमता इन दोनों के घनिष्ठ सम्पर्क की स्थापना में बहुत उपयोगी हुए। इसी का फल है कि पहले की हिंदू सभ्यता और बाद में आई हुई मुस्लिम सभ्यता के सम्बन्ध द्वारा नवीन सभ्यता का रूप मुखरित हुआ जिस आज हम शुद्ध रूप से भारतीय सभ्यता कहते हैं। अन्य क्षेत्रों में किस प्रकार यह प्रभाव या सम्बन्ध हुआ इसका अध्ययन अब हम करेंगे।

संस्थाएँ—हिंदू और मुस्लिम सभ्यताओं के सम्बन्ध द्वारा भारतीय सभ्यता का विकास ही हुआ किन्तु एक नये ढंग से। अब तक मुसलमानों की तो यह परम्परा थी कि जहाँ जाने थे वहाँ के सम्पूर्ण निवासियों को वे अपने रंग में रंग लेंगे किन्तु भारतवर्ष में सम्पूर्ण हिंदू जाति का अपने रंग में नहीं रंग सके। यही दंगा हिंदुओं की भी हुई। अभी तक भारतवर्ष में जितनी जातियाँ आईं वे भारत में आकर भारतीय बन गई और उसने अपने पूर्वज और पहले के देश आदि की स्मृति को विस्मृत कर दिया। ऐसा आत्मसात मुसलमानों को नहीं हो सका। भारत में आकर भी मुसलमान बहुत समय तक मुसलमान ही बने रहे। अनेक निरक्षर और सक्षीय बलि वाले मुसलमान अब भी अपने आपको भारतीय कहने से पहले सोचते हैं अतः यह मानना पड़गा कि दोनों तरह की संस्थाएँ अपना अस्तित्व बनाये रही बल्कि दोनों में यदावदा विरोध भी रहा। मुसलमान एवेश्वरवादी थे और मूर्तिपूजा के विरुद्ध थे किन्तु हिंदू लोग अपने देवताओं में विश्वास करते थे और मूर्तिपूजा के समर्थक थे। इस प्रकार विरोध के कारण दोनों प्रकार की संस्थाएँ एक दूसरी से प्रभावित होकर भी अलग अलग बनी रही। उदाहरणार्थ मुसलमान मूर्तिपूजा के तो विरुद्ध थे किन्तु पीर की पूजा करने लगे मायबान मस्जिद में दीपक जलाने लगे।

यह हिन्दू प्रभाव ही था। इस परिचित मुगलमान अधिकांश जगह में एक ही लिए गाँवों का वातावरण बना ही बना रहा। वही वही सामूहिक धर्म परिवर्तन होने से और उगवें बाँध भी बड़ी व धर्म परिवर्तित लोग ही यह भूषा, रानि रिवाज वगैरे ही बन रहते थे। इस प्रकार जगह व हिन्दुधर्म पर मुगलमानों का व्यापक प्रभाव हुआ। सामाजिक समानता का प्रभाव भारत की गमना जातिवादी नृणा में देखा और घटाया। यद्यपि जातिवादी में तो ऊँच-नीच की भावना रही कि तु एक जाति व मानस समानता की स्थापना हुई। इस प्रकार मर्यादा में बहुत घातक प्रदान हुआ।

धर्म—भारतीय मर्यादा व धार्मिक धर्म में मुगलमानों का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है अस्तित्व और मूर्तिपूजा का मर्यादा जगहों पर व धर्म में प्रवृत्त है। सामाजिक समानता और ऊँच-नीच का भावना का त्याग बौद्ध और मन्थीर व सिद्धांतों में भी था। इसीलिए पर उगवें प्रभाव हुआ। मूर्तिपूजा उगी की प्रतिविया थी। धर्म गत न जग रोग, बंधों घाँटि न नाना मर्यादा का धर्मिया की घातकता और अर्यादा का प्रयोग द्वारा मर्यादा विचारधारा का जन्म दिया और इसका प्रभाव भी बहुत हुआ। गुद नानक न इसी आधार पर दाया धर्मों व अर्यादा गुणा का स्वर नष्ट मिश्रण का मूलदान किया। इस प्रकार मर्यादा व प्रयत्न हुए और धर्म में हुआ कि नाना धर्म एक दूसरे में प्रभावित हुए। हिन्दू जग एक-दर-वानी बनने तथा और मर्यादा माननीयता का भी धर्म पर भी पूजा करने लगे। धर्म परस्पर एक दूसरे में प्रभावित होने व धर्म प्रमाण उपस्थित न गये।

बला—तत्कालीन भारत की बला पर मुगलमानों की गहरी छाप है। यह सबविधि है कि इनका प्रभाव उत्तर भारत में अधिक और नित्यी भाग में कम था। इसीलिए उत्तर और दक्षिण का बला व स्वर पद्धति और मोक्ष में ही अंतर है। परंतु उत्तर भारत में मर्यादा और मर्यादा दोनों में बहुत साम्य है किन्तु दक्षिण भारत में भी अधिक है। यही उनका रचना गती में भारी अंतर है। अतः यह सिद्ध होता है कि उत्तर में हिन्दू मर्यादा मर्यादा अधिक परिचित था और नित्य में कम था। इसी परिचितता व आधार पर बला में भी परिवर्तन और प्रभाव हुए जो स्पष्ट दृश्य जा सकते हैं।

साहित्य—यद्यपि मुगलमान जग अनेक साथ अरबी और फारसी भाषाएँ लाए थे किन्तु भारतीय भाषा भी उन्हें अपनाया पढ़ा और उनका साथ भारतीय भाषाओं व मर्यादा में ही उन्हें भाषा का जन्म हुआ है। वह वर्षों बाद उगी में मर्यादा न न का अधिकांश व कारण नित्य भाषा का विकास हुआ। इसीलिए हम यह दखते हैं कि बाल-बाल की नित्य और उद्गु जगमग एक ही है। नाना में अरबी फारसी और मर्यादा भाषा व गद्य का प्राचुर्य और प्रधानता है। ये भाषाएँ भी मर्यादा व साथ नहीं रहीं बल्कि जनता की मर्यादा बन गई। यही कारण है कि उस समय व साहित्यकारों ने तत्कालीन भाषाओं में ही साहित्य मर्यादा किया। हिन्दू सखवा न मर्यादापूर्वक अरबी फारसी का साहित्य नित्य और अनेक मुगलमान

विद्वानों ने हिन्दी साहित्य में सफलता प्राप्त की और यही भारतीय साहित्य कहलाता है। इस समय के साहित्य में विलासिता थी, नायिका भेद काव्यशास्त्र का प्रमुख विषय था।

सामाजिक जीवन—मुसलमानों के आक्रमण के समय और उसके पश्चात् भारतीय समाज कोई उन्नति नहीं कर सका। सम्भवतः पहले वह आत्मरक्षा की ओर लगा रहा और उसके बाद कुछ दिखाई नहीं दिया कि क्या किया जाय। धार्मिक दृष्टि में भी कोई परिवर्तन नहीं हुआ। उस समय भी किसी भारतीय ने यह प्रयत्न नहीं किया कि देश के समस्त मत मतान्तरों को मिला कर एक संगठित मोर्चा कायम किया जाय ताकि वे सुरक्षित रहें। ध्वस्त देवालये पुनः बनवाये गए और कुछ धर्म भी एकत्रित किया गया किन्तु इससे कोई विशेष लाभ हुआ नहीं। पूर्ववत् शव, शाकन, घम प्रचलित रहे। लिगायत सम्प्रदाय नया चल पड़ा था। यह दक्षिण के शव लोग द्वारा चलाया गया था। इस सम्प्रदाय के अनुयायी शिवलिंग गल मलटकाये रहते थे। यद्यपि यह श्राविकारी सम्प्रदाय था, स्त्रियों और पुष्पा को समान मानता था, घम, समाज और परम्पराओं को सममानुसार परिवर्तित करना चाहता था परन्तु नए युग के लिए यह भी उपयुक्त नहीं था। जैन धर्म वदिक घम वष्णव धर्म यथावत् चलते रहे। इसलिए समाज में नई आपत्तियाँ का सामना करने की योग्यता उत्पन्न नहीं हो पाई। जाति-पाति के बंधन कठोर हो गये, ब्राह्मणों का प्रभाव उत्तरोत्तर बढ़ता गया। निम्न श्रेणी के लोगों के प्रति हीनता का भाव बढ़ता गया और अस्पृश्यता का रोग भयंकर होने लगा। अतजातीय विवाह रुक गया और बाल विवाह सती प्रथा, पर्दा प्रथा बढ़ने लगी। समाज में विषमता दिन प्रतिदिन बढ़ती गई। अनेक प्रथाओं का श्रौंगणेश मुख्य रूप से मुसलमानों के आक्रमण के पक्षस्वरूप अपनी मर्यादा और सम्मान की रक्षा करना था। सतीत्व की रक्षा के लिए ही बाल विवाह पर्दा और सती प्रथा चल पड़ी। उच्च कुलों में जैसे ब्राह्मण और क्षत्रीय जाति के लोगों में ही यह अधिक बढ़ी। राजपूतों में उसी समय से 'जौहर' की प्रथा चली। मुसलमान बहुत बबर और असभ्य थे। वे बहिन बेटियाँ के प्रति जो हिन्दू भाव रहते रहे हैं उन्हें समझने के लिए योग्य ही नहीं थे। उनके स्वयं के यहाँ बहिना से विवाह होना एक रिवाज है। इनसे रक्षा करने के लिए ही हमारे यहाँ स्त्रियों के लिए उन्नत सावधानियाँ अपनाई गईं जिसने हमारा स्त्री समाज पिछड़ गया।

फिर भी हम यह स्वीकार करना पड़गा कि भारत में आकर मुसलमान बसे ही नहीं रहे जैसे कि आये थे। वे सत्तावादी थे, बलपूर्वक घम परिवर्तन भी उठाने किये और अपनी ही परम्पराओं का पालन भी करते रहे किन्तु श्राविकारी प्राचीन भारतीय सम्प्रदायों में बहनों के पीसने वाले को जैसे रग लग जाता है उसी प्रकार मुस्लिम जगत पर अपनी कई प्रकार की छापें लगाई। उदाहरणार्थ यहाँ की जाति प्रथा के प्रभाव से मुसलमानों में भेद उत्पन्न हो गया कुछ श्राविकारी परिवार प्रथा जाग्रत हो गई और बाल विवाह भी प्रचलित हो गया। शादी विवाह जन्म मरण तथा त्योहारों

के मनाने की पद्धतियाँ भी परिवर्तित हो गई। हिन्दुओं में देवताओं के विमान उल्लास के साथ निवाले जाने थे इसलिए भारतीय मुसलमानों ने मोहरम गमी का त्योहार हात धूँ भी उल्लासपूर्वक मनाना शुरू कर दिया जा अभी तक प्रचलित है। भारतीय मनीषी कला वास्तु कला और रत्न-सहन के ढंग, भजना की सजावट, वनावट आदि सभी पर एक दूसरे का प्रभाव हुआ किन्तु मुसलमानों का प्रभाव, शासक वर्ग में ज्ञान के कारण अधिक हुआ। प्रसंगीक बात यह फिर भी स्वीकार करनी पड़ेगी कि प्राचीन हिन्दू सभ्यता ने अपनी मूल विगणनाओं को ज्यों का त्यों बनाये रखा। इसका एक कारण यह है कि भारत साम्य व्यवस्था वाला देश है और मुसलमानों का प्रभाव गाँवा तक नहीं पहुँच सका था।

अभ्यास के लिए प्रश्न

- १ भारत में मुसलमानों के आक्रमणों का वर्णन कीजिए।
- २ मुगल साम्राज्य की स्थापना का इतिहास लिखिए।
- ३ भारतीय सभ्यता पर मुसलमानों का प्रभाव का वर्णन कीजिए और उस पर हिन्दू सभ्यता का क्या प्रभाव हुआ, यह भी लिखिए।

चौदहवा अध्याय

मध्यकालीन प्रशासन और समाज

प्रस्तावना—मध्ययुग में भारतवर्ष की शासन व्यवस्था अच्छी नहीं थी। इसका विस्तृत अध्ययन करने के लिए हम इसे दो भागों में बाँट सकते हैं—(१) सुन् और अफगानों की शासन-व्यवस्था और (२) मुगलकालीन शासन-व्यवस्था। चाहे कि इन दोनों व्यवस्थाओं में बहुत अंतर था। यह तो सभी के लिए कहा जा सकता है कि केवल कुछ मुगल सम्राटों को छोड़ कर शेष सभी की व्यवस्था समस्त जनता की दृष्टि से सत्तापन्नक नहीं थी और जैसी व्यवस्था थी वह सदैव ही मुसलमानों के प्रति महानुभूतिपूर्ण और हिंदुओं के प्रति या तो शोषणपूर्ण अथवा उदासीन रही। यही स्थिति तत्कालीन समाज की भी रही है।

सुन् और अफगानों की शासन व्यवस्था—इस समय के शासक वग अधिकांश कट्टर मुसलमान थे और भारतवर्ष में प्रवेश करने के साथ ही जैसे उन्हें हिंदुओं के साथ हर प्रकार से ज्यादतियाँ करने का गुरुमंत्र मिला हो धार्मिक और सामाजिक अत्याचार में रत हो जाते थे। प्रशासन मुस्लिम तरीका से संचालित किया जाता था, इसलिए मुल्तान और झीलबिया का प्राधाय रहता था और सबसे बड़ा 'याय फ्रय अथवा विधान संहिता उनकी कुरान शरीफ ही होती थी। उसी के अनुसार हिंदुवग उनके 'काफिर' की श्रेणी में आता था जिसे पीड़ित करना उससे अधिकाधिक कर वसूल करना, आदि भी धार्मिक कर्तव्य के रूप में माने जाते थे। हिंदुओं की सहाय्य अधिक होने के कारण वे लोग इनके वश में तो पूरा रूप से नहीं आये और जहाँ जहाँ पुराने शासक और राजा लोग प्रभावशाली थे जैसे बंगाल राजपूताना आदि वहाँ मुसलमान लोग अपना सत्तुलित आधिपत्य जमा भी नहीं सके। अक्सर मिलते ही ये लोग स्वतंत्र हो जाते थे और बराबर मुकाबला करते थे। परंतु मुसलमान शासक अपनी नीति में सुधार नहीं कर सके। भेद नीति द्वारा हिंदू मुस्लिम का अंतर स्पष्ट रूप से चलना रहा और जनता के साथ साभिमुख स्थापित नहीं कर सके। कुछ ऐसे प्रशासक और राजा भी अवश्य हुए जिन्होंने जनता के साथ उदारता का व्यवहार किया और धार्मिक सहिष्णुता भी अपनाई, किंतु ऐसे लोग बहुत कम हुए। ऐसे उदाहरण के रूप में मुहम्मद तुगलक आदि के नाम लिए जा सकते हैं। इस युग में कृषि, व्यवस्था कला और साहित्य का क्रम लगभग यथावत चलता रहा था।

इस समय राज्य का संगठन ऐसा था जिसमें सर्वोच्च शक्ति सुल्तान के हाथ में रहती थी। वह अपने परामर्श के लिए परिषद भी रखता था और उनके परामर्श का उपयोग भी करता था परंतु यह परामर्श सुल्तान के लिए बाध्य नहीं होता था। कुरान-शरीफ ही एकमात्र पथप्रदर्शक ग्रंथ था जो धर्म, याय और अनेक उल्लंघनों के हल के लिए सामने रहता था। प्रबंध की सुविधा के लिए प्रशासन में कई विभाग

होते थे और प्रत्येक विभाग एक मंत्री व गुप्त हाता था। यज्ञीर मुख्य मंत्री हाता था और घष व्यवस्था भी उभा व हाथ में हाती थी। इसी प्रकार रगालन (घम), वजा (याय) दगा (पत्र व्यवहार) घाति व मंत्री भी हात थे। राज्य की घाय मुख्य रूप से भूमि कर जरात जजिया घाति गापना से एकत्रित की जाती थी। कुछ घगा म घय-ए-ए लूट और ताबारिस गणति का मद्र्याग भी मिलता था। न्याय का व्यवस्था मुगलमानी ढग पर ही थी। काजी राज्य का प्रधान याया पीग होता था और अधीनस्थ यायातया व यायापीगों की नियुक्तिया भी वनी करता था। तीरानी अधियागा का निणय नागरिसा व सम्बन्धित घमप्रथा की गहायता से निय जान था। फिर भी अधियाग हिंदू विधाए पन पमन व ढारा हा निपटा निय जान था, वयाति उनक लिए एए विधान कठार था और हिंदू मुस्लिम के उाद्वों में याय मुगलमानी घथा का (ए) सहायता से लिया जाता था।

राज्य का विस्तार हात की अयस्या में प्रगासन की दृष्टि में प्राता घाति की व्यवस्था भा का जाती थी परन्तु एक गुप्तर वमिस गामन व्यवस्था जगा बोई वन्तु नहीं थी। एग समय गामत प्रया प्रवर्धित था। दूरस्थ भाग का प्रगासन गामन वग के हाथ होता था जा अरन हाथ में स्वतन्त्र हात था। याय व्यवस्था और मुनिव नियन्त्रण व निण व स्वच्छता जान था। वजन वापिस कर एता और युद्ध व घमवा घावक्षयना व समय मुनिव गहायता पदुवाना हा, गभाट व प्रति उनका मध्य कृत्य था। वजा-वजा हिंदू गामत भी हात था परन्तु उनका नियन्त्रण अधिन होता था। यद् व्यवस्था प्रमुख गामन व व्यक्तिव में अधिन गम्बधित थी। गामप्र-दायिकता का अधिन जाग था और धार्मिक कट्टरता प्रधात था। गार्गीक और मुनिव दक्ति का प्राधाय था एगतिण राज्य और राजनय स्वाधी नहा जान था। मुनिव दक्ति और गगठन में जरा सा अन्तर आत नी गामतनय विद्वाद् करन स्वतन्त्र हो जाता था अयरा बात्रा आनमण का ताता गणना जाता था। यद् व्यवस्था का रूप मध्यकाल व पून भाग में बनता रहा।

मुगलों की शासन-व्यवस्था—हमार दग व इतिहास में मुगल का गामन दोषकाल तक रहा और लगभग मुनी प्रकार व गामन एम वग में उत्पन्न हुए। महान गभाट अकबर में लकर औरगत्र त्त एक म एक अछला गामन दृषा, किमा न गाम्राज्य का विस्तार किया गामन व्यवस्था जमाई ता किमा न जना-वीगत व हाथ में उत्पति की ता जिमी न याय प्रियता में अपना यग वमाया। एम प्रकार जनहित और ताकति का प्रवर्धन वा जागत किया। हिंदू मुस्लिम भए जा युगों में उला भा रहा था निमग एग का उतावरण निरन्तर दृष्टि रहता था, समाप्त कर दिया गया। इस समय क गभाटा की गणना विरर व मगन गामनों में मानी है। ये नी मुगलमान ही थे किन्तु इनकी कट्टरता अपन ही त्त गीमित थी। वजन औरगत्रव में घम प्रियता अधिन थी और घम भए में उनका अधिन विश्वास था इसीलिए उमक गनु भी बहुत ए गये थे और गाम्राज्य की नीव भी हिनत गण थी। उमके बाए लगभग मुगल गाम्राज्य नष्ट ही हा गया।

मुगल साम्राज्य की व्यवस्था बहुत अच्छी थी। सिद्धांत रूप में तो दासक स्वेच्छाचारी ही होता था और उसके चरित्र का प्रभाव अधिक होता था। परन्तु प्रारम्भ के मुगल शासन वास्तव में प्रजावत्सल हुए और लोकहित को सर्वोच्च प्रदानता दी। धर्म भेद को महत्त्व नहीं दिया। इसीलिए राज्य के कमचारियों में सभी सम्प्रदायों के लोगों को सब प्रकार के पद केवल योग्यता के आधार पर दिये जाते थे। केवल अन्त के युग में इस नीति का अनुसरण नहीं हुआ। अच्छी शासन व्यवस्था के लिये सम्राट परामर्शदाता भी नियुक्त करता था और प्रत्येक काम उनकी सलाह से करता था। यद्यपि परामर्श स्वीकार या अस्वीकार करना सम्राट की स्वतंत्र इच्छा पर ही निर्भर रहता था किन्तु वह उसका हमेशा सम्मान करता था। जहाँ में से बजोर (मन्त्री), दीवान और विभागाध्यक्ष भी नियुक्त किये जाते थे। मीर, बख्शी, सदर और बाजी आदि की सहायता की भी शासन में अपेक्षा होती थी। नायब क्षत्र में भी सम्राट सर्वोच्च अधिकार होता था और अन्तिम निर्णय वही करता था किन्तु उसके नीचे दीवानों एवं आर्थिक अभियोगों के लिये सदर की नियुक्ति की जाती थी। बाजी का स्थान भी महत्त्वपूर्ण था। इसके अतिरिक्त मुफ्ती (कानून व्याख्याता), मीर अदल (निष्पक्ष घोषित करने वाला) आदि अन्य कई राज कमचारी होते थे। कानून की सहायता मुख्य रूप से कुरानागरीफ से ली जाती थी और दूसरे मामलों में सम्बन्धित व्यक्तियों के रीतिरिवाज के अनुसार निर्णय किये जाते थे। दण्ड-व्यवस्था कठोर थी। साधारण अपराध के लिए भी दण्ड कठिन दिया जाता था। मत्पुदण्ड भी प्रचलित था, किन्तु यह सदर सम्राट की आज्ञा से ही किया जाता था। अथदण्ड अधिक व्यवहार में आता था।

प्रबंध की दृष्टि से साम्राज्य, प्रांत में प्रांत डिवीजन और जिला में तथा अनुशासन की दृष्टि से जिले भी अनेक भाग और विभागों में बाँटे हुये थे। प्रत्येक प्रांत का मुख्य अधिकारी प्रांतपति या सूबेदार कहलाता था। अधिकतर ये लोग सम्राट के वंशज होते थे और सम्राट की आज्ञानुसार ही शासन चलाते थे। उनके नीचे फिर अनेक कमचारियों की प्रथम शृंखला होती थी जिनमें उपप्रांतपाल (नायब सूबेदार) दीवान (Revenue Collector), मजिस्ट्रेट (District Magistrate) और कोतवाल आदि अनेक प्रधान कमचारी होते थे। सामंत प्रथा भी प्रचलित थी परन्तु ये लोग सम्राट के आधीन होने थे। अपने क्षेत्र में स्वतंत्र होते हुए भी इन्हें सम्राट की सेवा में सदैव प्रस्तुत रहना पड़ता था। अधिकतर ये लोग सम्राट द्वारा ही बनाये जाते थे। अपनी शक्ति के आधार पर स्वयं बने हुये और सम्राट द्वारा वाद में मान्यता दिये हुये सामंत नहीं थे। इस प्रकार मुगल साम्राज्य की शासन व्यवस्था अच्छी जमी हुई थी।

अभाव—फिर भी हम इस व्यवस्था को आदर्श नहीं मान सकते। अफगान एवं मुगल सम्राटों ने देश की सुरक्षा और सुधार की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। सत्ता की कठोरता का उपयोग करते हुए जनता पर निदयता और निममता के साथ अत्याचार रक्खा। आर्थिक क्षय की समस्या बढ़ाने के लिए कृषि की सुविधाएँ देना,

व्यापार बढ़ाना, उद्योग पथ स्थापित करना आदि काय नहीं किया। शिक्षा की व्यवस्था नहीं की। उन्होंने देग व ही भिन्न भिन्न भागों को जीतने व विजय बना कर अधिक व्यय किया इसलिए कुछ लोग इस समय के शासन का 'मजिब गायन' का नाम भी देते हैं। इसके अतिरिक्त गौरी समृद्धि के फलस्वरूप राजवत् में विद्रोहों का साम्राज्य जम गया और शासकों के कारण साम्राज्य का आधार खोखला हो गया। सम्पूर्ण भारत का एक साम्राज्य हान पर भी शासन केन्द्रित बना रहा इसलिए स्थिरता और श्रमार्थ पनपन लगा और औरंगज़ेब के समय में तो यह स्थिति एसी हो गई कि जिधर सम्राट नहा रहता था वहाँ ता खुला विद्रोह होता ही था, किन्तु जहाँ वह स्वयं जाता था वहाँ भी व्यवस्था मग होन लग गई था। परन्तु दीपकाल तक साम्राज्य व जम जाने व कारण शासन का ढग जम गया था। इसलिए प्राकमर सरकार न इस व्यवस्था बना सरकार को पत्र गवनमेंट प्रधान कामग्री सरकार का नाम दिया है। सचमुच यह सरकार ऊपरी शिक्षावा मात्र अधिक थी और जनता का कल्याण करने वाली कम। इसलिए अंत में इस सरकार का पतन न गया।

मध्यकालीन समाज—शारम्भ में मुसलमानों के सम्पर्क से भारत व हिन्दू समाज पर विपण प्रभाव नहीं हुआ। सामाजिक क्षेत्र में परम्परागत गतिविधि उगा रूप में चलती रहा। कबल बाहरी प्रभाव से बचने व लिए समाज अपनी सीमाएँ बना करन म जरूर लगा। इसीलिए रुढ़ियाँ प्रदान बनन गयीं और समाज में जा प्रगतिशील रहने का गुण था वह कुण्टित होन लगा। इसी कारण समाज की समग्र वृत्ति म भी जटता आई। जा समाज अभी तक बाहर से आन वाली जातियाँ व हाथ थीं समय म जन जन आमसात कर लेता था व अत्र बाहरी जातियों म सचेत रहने लगा और जटता की और बढ़ा। इसका एक कारण यह भी था कि हूण गव आदि लोग जो भारत में आये, व कुछ अद्वैतम्य भी थे इसलिए व अपने आप को इतना नहीं पहचानते थे कि किसी अर्थ पर अपना प्रभाव टाक सकें अथवा उसके प्रभाव म बचने की इच्छा करें। मुसलमान म सम्बन्ध म कटूना का गुण लेकर आये थे इसलिए व जस भी थे ववर नृपु और निमम वैसे हा बना रहना चाहते थे। उनका धार्मिक विश्वास और मान्यताएँ व थीं इसलिए भारत-वासियों पर एक प्रकार से (Reflex action) की प्रतिक्रिया हुई और उन्मान भा अपनी प्रवृत्तियाँ बनायीं और बाहरी लोगों से घनिष्ठता उत्पन्न करना या उनका साथ घातमान करना बन्द कर दिया। एसी स्थिति में अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिये हिन्दुओं ने जाति व बचन बटोर कर लिये। अपनी मनुष्यता की रक्षा और सामाजिक व्यवस्थाएँ उगी रूप म मरगित रखने लगे। इस प्रवृत्ति म उत्पत्ति का माग था एक मया किन्तु प्राचीन तत्त्वों की रक्षा इच्छा से की जान लगी।

इस प्रकार मुस्लिम सम्पर्क से हमारे समाज में कुछ अथक श्रम भी उत्पन्न हो गये। मुसलमान स्वभाव न ही बुरे और विनाशी हाते थे। स्थिरों और घन के प्रति व सन्ध लोभी रहने थे। इसीलिये यहाँ पर्ना प्रथा बना विवाह मत्री प्रथा और स्त्रियों म 'बोहर' की प्रथा प्रचलित हुई। श्रम प्रथा का शारम्भ भा इसी प्रतिक्रिया

के वातावरण में हुआ। सम्राट और नवाबों के यहाँ असह्य दास रहने लगे थे।

मुगलों के समय में सामाजिक दशा कुछ अच्छी थी। सामंत प्रथा प्रचलित थी। इस समय हिंदू और मुसलमान दोनों वर्गों में अनेक श्रमिया बने गई थी। ईसाई धर्म का प्रचार भी यहाँ होने लगा था किन्तु यह धर्म अभी महत्वपूर्ण नहीं हुआ था। समाज में मुख्य रूप से तीन वर्ग थे—(१) राजवंश और उच्चकालीन वर्ग—इसमें सम्राट और उसके बगज, राजा महाराजा और उमराव तथा सम्पत्ति शाली लोग सम्मिलित थे। इनके पास धन की प्रचुरता थी और भव्य भवनों में गान-शौकत के साथ रहते थे। समाज में बहुत प्रतिष्ठा थी। इनके यहाँ किलासिता की समस्त सामग्री, कचन, मुरा और सुंदरिया का ठाठ था। प्रत्येक के रनिवाम में सँकड़ो अतीव सुंदरियाँ विराजमान थीं और दूसरे उपादान संगीत, नृत्य, ब्रूत, विनोद आदि के समस्त साधन भी उपलब्ध रहते थे। (२) दूसरा वर्ग मध्यम श्रेणी के लोग का था। यह विकास इस युग में ही हुआ था। इसमें राज्य के कमचारी व्यापारी, सम्पत्तिशाली, शिल्पी और अच्छे लिखिक और लेखक तथा साहित्यकार सम्मिलित थे। इनका जीवन साधारण होता था। (३) इस श्रेणी में गिम्न वर्ग के लोग थे। किसान, साधारण कमचारी सैनिक शिल्पकार और श्रमिक इस वर्ग में आते थे। ये लोग नित्य कुर्माँ खोद कर नित्य पानी पीने वाला म थे। आर्थिक स्थिति चिंताजनक थी किन्तु समाज का अधिक भार भी इसी वर्ग पर था। बगार प्रथा इन्हीं के सिर पर चलती थी। विभिन्न प्रकार के गुरू और कर भी ये लोग देते थे। भूमि का स्वामित्व भी इनका नहीं था और सामंतों की स्वेच्छानुसार इनकी सम्पत्ति भी जब्त कर ली जाती थी। ऐसी अनीति तत्कालीन समाज में फैली हुई थी।

उपरोक्त वर्णन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि भारतवर्ष में हिंदू और मुसलमानों के सम्पर्क से जो नवीन वातावरण बना उससे वास्तविक सामाजिक प्रगति में अवरोध उत्पन्न हुआ। दोनों सस्कृतियाँ एक बार जड़ बन गई। अपनी अपनी सीमाओं में यथावत् बनी रहने का यत्न करती रहीं और धीरे धीरे ज्वा ज्वा सम-वय हुआ उस समय तक वे जड़ता का शिकार बन गई इसलिये सामाजिक प्रयायों कुरीतिया के रूप में प्रकट होते रहने पर भी उनसे दूर नहीं रह सकी। यद्यपि यह सच है कि इस दृष्टि से भी हिंदू समाज के अधिक सिद्धांत नीति पर आधारित रहे और मुसलमान केवल अपनी धार्मिक कट्टरता के आधार पर ही डटे रहे और अनैतिक व्यवहार पर विश्वास करते रहे, फिर भी समय और स्थिति के अनुसार सारी परिस्थितिया बदलती गई और अंत में समस्त समाज भारतीय समाज के रूप में ढल गया।

अभ्यास के लिए प्रश्न

- १ मध्यकालीन तुर्क और अफगान शासन व्यवस्था का वर्णन कीजिए।
- २ मुगलों की शासन व्यवस्था के मुख्य तत्त्वों का विवेचन कीजिए।
- ३ मुसलमानों के सम्पर्क से हिंदुओं में कौन कौन सी सामाजिक बुराईया उत्पन्न हुई और क्यों? समझाकर लिखिए।

करना आरम्भ कर दिया। उनके धर्म में इन कार्यों से दूसरा का धर्म नष्ट करने से भगवान प्रसन्न होता था। इसलिए वे इन कामों में लग गये। इस कारण से ही हिन्दुधर्म में आत्मरक्षा और अपनी सस्कृति तथा धर्म, दर्शन, कला आदि की रक्षा की चिन्ता हुई और अनेक बंधन लगाये गये। प्रत्यक्षतः अनुदारता आरम्भ हुई। जनता के धर्म परिवर्तन के सम्बन्ध में पहल तो यह उदारता रही कि जबरदस्ती जो लोग मुसलमान बनाये जाते थे वे कुछ प्रायश्चित्त और द्रव्य, तीर्थ आदि के पश्चात् पुनः हिन्दू बना लिए जाते थे किन्तु थोड़े समय बाद अनुदारता अधिक व्यापक हो गई और धर्म परिवर्तित लोगों का हिन्दू समाज में पुनः प्रविष्ट होना कठिन हो गया और द्वार सदैव के लिए बन्द हो गया। एक दूसरे में अब दोनों समाज एक पृथक हो गये कि मिलने की सभावना ही नहीं रही। किन्तु एक ही स्थान पर रहने के कारण दोनों की प्रथाओं भाषा आदि का परस्पर प्रभाव होना अनिवार्य था। उसी के फलस्वरूप समन्वित सम्प्रदाय का विकास हुआ। दोनों वर्ग के लोग परस्पर हिलने मिलने लगे। एक दूसरे के दुःख सुख में सम्मिलित होने लग किन्तु सम्प्रदाय अलग ही रहे। अंग्रेजों ने इसी भावना का उपयोग कर यहाँ विभाजित करो और शासन करो की नीति के अनुसार शासन चलाया।

परस्पर भेद का मूल आधार—हिन्दू और मुसलमानों में यदि किसी चीज में मूल रूप में भेद है तो वह धर्म है। हिन्दू धर्म और मुस्लिम धर्म एक दूसरे में विपरीत हैं। हिन्दू मूर्ति पूजा में विश्वास करते हैं मुसलमान नहीं। हिन्दू पुनर्जन्म और कर्म सिद्धांत में विश्वास करते हैं, मुसलमान नहीं। हिन्दू सहिष्णु हैं, मुसलमान कट्टर। और इसी प्रकार हिन्दू और मुसलमानों की भाषा, वर्णभेद, रीति रिवाज आदि सब विपरीत हैं। यदि ध्यान से देखें तो पहले हिन्दुधर्म में भी बर्बर काल से लेकर उपनिषद् काल तक मूर्ति पूजा नहीं होती थी। बाद में इसका प्रचार हुआ था और मुसलमानों में पहले अरब में मूर्ति पूजा प्रचलित थी बाद में मुहम्मद साहब ने विरोध करके उसे समाप्त किया था। इस प्रकार दोनों का विकास विपरीत रहा। हिन्दू धीरे धीरे मूर्ति पूजक बने और मुसलमान धीरे धीरे मूर्ति पूजा के विरोधी बने। वास्तव में हिन्दू लोग मूर्ति को भगवान न मानकर उनके ध्यान के लिए एक प्रतीक या साधन मानती रही है। इस प्रकार दया और लोक व्यवहार के सिद्धांत भी जो अलग अलग रूपों में वे सब धर्मों के कारण। अतः मूल अंतर दोनों में सम्प्रदाय अथवा धर्म का था और उसके आधार पर ही अन्य बातें विकसित हुईं।

हिन्दू धर्म की रक्षा—मुस्लिम धर्म के साथ कुछ ऐसी विरोधनायें थीं कि जिनके कारण उसका प्रसार रोकना सरल नहीं था। राज्य की सत्ता उनके हाथ में थी इसलिए उनकी भाषा रीति रिवाज और मान्यताएँ समाज में स्वतः प्रचलित हो गईं। फिर उनके धर्म में क्राफिरों को सताना उनका धर्म परिवर्तन करना एक पुण्य कर्म था। उसमें सब के लोग धर्मांधता के कारण लड़ते थे तो राज्य की ओर से और भी प्रोत्साहन दिया जाता था। धर्म परिवर्तन करने वाला का कुछ समय समाज और राज्य में सम्मान भी होता था। हिन्दुओं में अपनी अनुदारता के कारण

जातिगत बंधन बढीर हो गए । एक जाति म दुमरी जाति को केव नीच समझने की भावना भा उत्पन्न हो गई और फिर घम बन्ध लेने वाला ब त्रिण पुत्र प्रवर्णा पाने का द्वार भी बंद हो गया था । एगो स्थिति म हिन्दू घम की सुरक्षा का बहूत जटिल प्रश्न उपस्थित हुआ । विरोधा लोग हिन्दू घम की बमजोरियाँ बूझत थे और समयक उमक गुण ।

एम समय म कुछ उद्भट विद्वान और प्रखण्ड पढिना न हिन्दू घम की सुरक्षा का बाय धरने हाथा म लिया । लगभग १८वीं गताब्दी म विजयनगर म श्री माधव न कुछ तम प्रथम तिल जम पागागर स्मनि टोका आदि जिनम हिन्दू घम का विशेषताओं का बणन किया । बग दग क पढिन त्रिदशपुर भी एगो श्रणा म आने हैं । इहाने एना व्यवस्था का प्रतिपादन किया कि जिनम हिन्दू घम श्रष्टुण बना रह और बाहरी तत्व उम छू न पावें । परन्तु एक माय रहन वाला जानिया क त्रिण एम प्रकार की व्यवस्था व्यवहाय नहा थी । धीर धारे परम्पर प्रभावित हाता प्रारम्भ हुआ ।

दोनों सम्प्रदायों के सम्बन्ध का प्रारम्भ—दुम स्तर पर घाने क बाद भारतमय म एम धनक मत, मन्नामा और विद्वान हुए जिहान हिन्दू और मुगलमतों म काई मत स्वीकार नहा किया । बरन एमक विपरीत दोना धर्मों क अष्ट तत्त्वों की मायता श्री और दाना की बुराया क त्रिय ममान एम म आनाचना प्रारम्भ की । एम प्रक्रिया का कुछ लोग 'भक्ति आ ोवन' का नाम दन हैं । यथाकि रामानन्द बबीर मूर, तुनसी आदि धनक मत लोग ही दुमम प्रदान एम म मन्त्रिय रह । इस युग म (मध्यकालीन) ममस्त भारत की विभिन्न भाषाया हिन्दी गुजराती मराठी बंगला तामिल आदि म साहित्य का रचना हुई और धनक मता न एम सरल जान को जनता तक पहुचाने का मन्त्रयुक्त बाय किया । बतमान समय म भी इन मत महाभाषा का प्रभाव जन जन क हू य पटन पर अत्रित है और मन्त्रियों तत्र रणा एगो आगा है । इस परित्र काय म मह्याग दन वान कुछ प्रतिनिधि म ता का मन्त्रिण्ट आयवन हम यहाँ करेग ।

श्री रामानुजाचार्य—य भक्ति माग के प्रथम उपागक थ । मन् १०१७ म उनका जन्म हुआ था । इनक मत को 'विशिष्टाद्वत बहन है जिसका उल्लेख एम पहले कर चुक हैं । एगान ईश्वर का प्रेम का प्रतिमा क एम म उपस्थित लिया । ये भगवान क विष्णु एम की उपासना करत थ और ब्रह्म की एकता और अस्तित्व म अटूट विश्वास करत थे । चूकि य प्रथम उपदेगक थ इनत्रिय प्रारम्भिक बटिनायों क कारण ये उनन अधिका लोकप्रिय नहीं हो सक जितन इनक बाद में हान वान मत और आचार्य ।

स्वामी रामानन्द—नवीन आन्दोलन के ये प्रथम प्रतिनिधि मान जान हैं । उनका जन्म चौथी गताब्दी म प्रयाग म एक ब्राह्मण कुन म हुआ था । ये गणक बाल स ही विचारक और ईश्वर प्रमी थ । ये राम क उपासक थ, उसक मगुण और निर्माण दाना एम का भक्ति करत थ । इसका प्रचार करन क लिए ये सयासा हो

गये। जाति पाति का भेद नहीं मानते थे और भक्ति सबके लिए जरूरी मानते थे। नीच जाति के लोगों के प्रति उनकी सहानुभूति बहुत थी और वे उन्हें अपना शिष्य बनाते थे। उनका विश्वास था कि भगवान के यहाँ सब बराबर हैं और मुक्ति प्राप्त करने के लिये जीवन निष्पाम और शुद्ध होना चाहिये। इनके बारह प्रमुख शिष्य थे, जिन में नाई चमार, जुलाहा आदि सभी जातियों के लोग थे। उनके शिष्य कबीर, पीपा सुक्खा, सुरसुरा भवानक सेना, धन्ना पद्मावती नरहरि रंदास, सुरसुरा की पत्नी और अनंतानंद थे। अपने शिष्यों के कारण ये लोकप्रिय रहे।

महात्मा कबीरदास—कबीर साहिब का जन्म काशी में एक ब्राह्मण के यहाँ हुआ माना जाता है (सन् १३६८)। किन्तु लालन पालन एक जुलाहे के घर हुआ जिसे ये एक तालाब के किनारे पर पड़े हुए पाये थे। उस जुलाहे के सत्तान नहीं थी, इसलिए उसने पुत्रवत् ही इनका पालन किया। लगभग सौ वर्ष से भी अधिक ये जीवित रहे थे। ये प्रथम भक्त थे जिन्होंने हिंदू और मुसलमान दोनों को खरी खरी सुनाई और अभी तक एक दूसरे से दूर रहने वाले लोगों को एक ही स्थान पर भाई भाई की भाँति इकट्ठा कर दिया। इनके विश्वास बड़े सरल और स्पष्ट थे। भगवान के लिए ये किसी विशेष नाम का प्रयोग नहीं करते थे। इनका मित्रांत था कि ईश्वर को प्रसन्न करने एवं प्राप्त करने के लिए मनुष्य को सरल और सच्चा जीवन व्यतीत करना चाहिए और बाह्य आडम्बरो को त्यागना चाहिए। उन्होंने धार्मिक अंधविश्वास, जातिभेद और धार्मिक असहिष्णुता की कड़ी आलोचना की। उनके दोहे और पद अघ्यात्म और रहस्यवाद से युक्त भी हैं और सरल भी। सूफीवाद से भी वे प्रभावित थे। इसलिए किरहिन, सूक्ष्म भाग, दीनार नदी आदि का वर्णन किया है। हिंदी कविता में कबीर का स्थान बहुत ऊँचा है। वे एक सच्चे समाज सुधारक और हिंदू मुस्लिम एकता के प्रथम पुर्जारी और प्रतिस्थापक थे। उन्होंने मूर्ति पूजा और मस्जिद की आलोचना की और इनके आडम्बरो का खोलापन बताया। ये सचमुच निरपेक्ष सत थे जिन्हें मानव समाज की सेवा करनी थी किसी सम्प्रदाय विशेष की नहीं। इसीलिए हिंदू इन्हें हिंदू और मुसलमान इन्हें मुसलमान मानते थे। इनका देहावसान भी काशी में ही हुआ था।

गुरु नानक—इनका जन्म १४६९ ई० में लाहौर के पास तलवडी गाँव में हुआ था। ये जाति से खत्री थे। इन्होंने देश विदेश की बहुत यात्रा की थी। ये भी जाति पाति के विरोधी थे। मनुष्य के जीवन की पवित्रता के अनिवाय बताते थे। हिंदू मुस्लिम एकता पर इन्होंने भी बहुत बल दिया था। इन्होंने बाहरी आडम्बर को व्यर्थ बताया है। मंदिर, मस्जिद और वेद कुरान का भेद वे व्यर्थ बताते थे। कन्नौ की जियारत और इमसान का निवास व्यर्थ है, तीर्थ अनिवाय नहीं है। ये भी गुरु परम्परा में विश्वास करते थे कि गुरु बिना जान नहीं हो सकता। इन पर भी सूफीवाद का प्रभाव था और हिंदू मुसलमानों के भेद को मिटाने की इनकी प्रबल इच्छा थी। ६९ वर्ष की अवस्था में इनका स्वर्गवास हुआ था।

धर्म सत्त—इसी समय धर्म अनेक सत हुए जिनमें काशी के रदास (चमार)

धमरास, वगान म चैतय देव, राजस्यान म मीरा एव नरसी मरुता (इतना माहीरा राजस्यान क गौवा म बहुत लोकप्रिय है), दण्डिण म बल्लभाचाय (कण्ठभक्ति के प्रतिपादक), महाराष्ट्र म नामदेव एव ज्ञानदेव आदि हुए हैं। इन महान् आत्माओं के प्रयत्न म हिन्दू मुस्लिम एकता की स्थापना हुई—परस्पर भेद भाव जाता रहा और धीरे धीरे गम-वम भावना पुन विरहित हुई और जिसका गुंजर रूप मुगलकाल म उपस्थित हुआ।

समन्वित विरासत श्रम

भाषा और साहित्य—भारतवर्ष म मुगलमानों क जन्म जान क बाद भाषा परिवर्तन आरम्भ हुआ। भारतीय भाषाओं म अरबी और फारसी क गहन प्रभुत्व ने गहरा और मुगलमान लोग अपनी बान चान म भारतीय शब्दों का प्रयोग करने लग। यह स्वामाविक विकास था। जिन शब्दों जानियों मिन जुन कर रहने लगीं ता सत्य-प्रथम बोलचान के द्वारा ही विचारों और भावों का आन्तक प्रदान हुआ। फिर इसका माय कुछ अन्य साहित्यकार और मता का योग भी मिला जिनम कबीर, रामदास और अमर सुमरो आदि का नाम विशेष उल्लेखनीय है। सुमरो न लगभग भी वष की उम्र प्राज्ञ की थी और वह फारसी का विद्वान भी था। अतएव जिन एक फारसी और हिन्दी का काय निम्ना। अतएव प्रकृत होता है कि हिन्दी का नवीन रूप विकसित होने लग गया था। कबीर दास की हिन्दी और भी उच्च स्तर की थी। यही नहीं भाषा के विकास म अन्य बहुत से नामका न भी महत्त्व मिला जिनम कबीर क मुगलान जैनुत आदीन वगान क हुसैनशाह आदि प्रमुख थे। इस समय भारतीय दशनामिका, आयुर्वेद शास्त्र और ज्योतिष शास्त्र उन्नति का चरम सामा पर थे। इसमें विद्वान भी प्रभावित न गये थे। अतएव मुगलमान भी इस ज्ञान से प्रभावित हुए। यह स्पष्ट कहा जा सकता है कि इस युग म प्राचीन भाषाओं स्वतन्त्र रूप से विकसित हुई हैं। कुछ मता न प्रजभाषा कबार आदि न हिन्दी भाषा, नामिका आदि न मराठी चैतय महाप्रभु न वगैरा और मनी जगह भ्रमण करने वाला न संस्कृत और फारसी दाता भाषाओं का अपनारा था। यह समय समन्वय का युग था। अतएव हिन्दू विद्वानों न फारसी म भी रचनाएँ कीं और मुगलमाना न हिन्दी में काव्य और साहित्य का मजबूत किया। मुगलमानों की तबारीख (इतिहास) म विशेष उल्लेख था। जियाउद्दीन बरनी और निम्मिराज अफीफ इस समय क अच्छे इतिहासकार थे। मुगल कानून स्थिति म साहित्य और भाषा की और भी अधिक उन्नति हुई। इसी समय हिन्दी और फारसी क मयाग म उद्दु का आविर्भाव हुआ और जायसी ने अवध में 'पद्मावत' ना लिखा। ऐतिहासिक साहित्य का मजबूत, जिनमें शृंगार रस, नायिका भेद आदि प्रमुख थे दश, विहारी, मतिराम आदि विरासत कवियों द्वारा इसी युग में हुआ।

वाम्नुक्ता—हिन्दू और मुगलमानों के गतिमय जीवन का आरम्भ होता ही जैसे भाषा साहित्य और रीति रिवाज का समन्वित विकास हुआ। उसी प्रकार

कला भी प्रभावित हुई। दोनों जातियाँ की कला में भी आदान प्रदान हुआ। इस समय के भवन, मूर्तियाँ और स्थापत्यकला के क्षेत्र में यह प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। इसे "भारत मुस्लिम" (Indo Islamic) कला कहते हैं। इस समय की निमित्त तुगलकशाह की कब्र, अटाना मसजिद और जामा मसजिद, तत्कालीन कला के सुन्दर उदाहरण हैं। हिन्दू कला भी इस समय विवसित हो रही थी और विद्यप तौर पर राजस्थान में यह कला अधिक प्रभावशाली थी।

इस युग की वास्तुकला के क्षेत्र में गुम्बज, मीनारें, महाराव तथा पटाव (Vault) अधिक महत्वपूर्ण रहे हैं। यह समन्वित भारतीय कला का ही परिणाम था। हुमायूँ का मकबरा, कुतुबमीनार, फतहपुर सीकरी और आगरे के महल उसी समय की रचनाएँ हैं। देखन में ये ऐसी लगती हैं जैसे किसी हिन्दू सम्राट ने बनवाई हो। इसमें ईरानी शैली का प्राधान्य है। किन्तु इस कला के अनेक अंश भारत में पहले से ही थे। गुम्बज की गोलाई और गदन का स्वरूप भारतीय ही है। फतहपुर सीकरी में बुलन्द दरवाजा (जो १३० फीट ऊँचा है), शीवान ए-खास इबादत-खाना (प्रायः भवन जो कमल पुष्प के रूप में एक स्तम्भ पर स्थित करव बनाया गया है) और एक महल (बौद्ध विहार के ढग पर) उल्लेखनीय स्थान हैं। इनके पक्ष, छावणे (उत्तरग), रोड आदि पूर्णरूप से भारतीय ढग के हैं। इस प्रकार भारतीय और ईरानी कला का सुन्दर समन्वय हुआ। ईरानी शैली में रंगीन खपरलें उपवन और उद्यान का मध्य भवन और प्रासाद तथा निर्माण में कला प्रणयन मुख्य होता है तथा भारतीय शैली में कटी हुई महाराव दुबल स्तम्भ सजावट आदि के तत्त्व मुख्य होते हैं। इन्हीं का समन्वय हुआ शाहजहाँ के समय में यह कला उत्पत्ति चरम सीमा पर थी। इन भवनों को देखकर आज भी कवियाँ की कल्पना जागृत हो जाती है। इसीलिए मोती मसजिद की 'भावपूर्ण प्रस्तर काव्य' और ताजमहल को 'स्फटिक मय स्वप्न' और 'अत्युत्तम सौंदर्य' कहा जाता है।

चित्रकला—इस समय की चित्रकला में भी हिन्दूशैली और फारसी तत्वा का समन्वय हुआ। इसका सबसे अधिक विकास अकबर महान के समय में हुआ। उसके दरबार में अनेक चित्रकार रहने थे। राजपूता के सम्पर्क से वह हिन्दू कला का का प्रेमी बन गया और चित्रकला की उत्पत्ति के लिए अनेक ईरानी और भारतीय चित्रकार नियुक्त किए। विदेशी चित्रकार फिर भी कम थे और इनमें समद, खुसरो कुली जमशेद फरुखवाग आदि प्रमुख थे। भारतीय चित्रकारों में केशव मुकुन्द लेखावनलाल जगन्नाथ, हरिवंश आदि हिन्दू लोग थे जो खाती कापत्य, बहार, सलावट आदि जातिपों के थे। ये सब लोग मिलकर काप करते थे। एक ही चित्र बनाने में कोई रेखाएँ बनाता था, तो कोई रंग भरता था और बाद में पूरा होने पर उस्ताद उसकी सफाई करता था। इस प्रकार अकबर के समय में चित्रकला बहुत विकसित हुई। यही नहीं वह प्रदर्शनी करवाना चित्रकारों को पुरस्कृत करना सम्मानित करना चित्रकला सबंधी रंग, कागज आदि मँगवाकर देना आदि विभिन्न रूपों में इस क्षेत्र की उत्पत्ति में लगा रहता था। अबुलफजल ने लिखा है भारत के

उत्कृष्टीय विचकारों की समता विच में कर्तों के विचकार भी नहीं कर सकत थे । उर्मी समय क अद्वितीय ग्रय रजननामा (जयपुर), अकबरनामा (अन) और बाबरनामा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं । जर्गीर क समय म भी एम कता की उन्नति दुर् और निति विना की प्रया कती । कागज पर भी विच बनाए गए और इनका महत्त्व हान नगा । इसी समय राजपूत कता का स्वतंत्र विराग हुआ त्रिमम पौराणिक गायए अनु रान राग रागनियों, वारम्भागा अति क एम अतक स्तूना का विकास दुर्गा त्रिमम वाठा बुधा जयपुर मवात् माग्वात् अति का कताओं वृद्ध प्रसिद्ध है । गार्जुनी क समय बह् उगाट उगा न गया या और योग्यत्रेव न वा धम क प्रतिगत समन्तर एम कता का मनाप्त ना कर दिया । इस प्रकार टिन् और मन्त्रिम प्रभाव म समन्वित विचरना न बहुत उन्नति का ।

सगात कता—एम क्षत्र म भा शाना जातिया क समन्वय का प्रभाव स्पष्ट निपात कता है । अफगाना क आगमन तर ता य एम क्षत्र मयावन र्दा किन्तु मुगलों न एम क्षत्र म भा अति का । राजर स्वय गावर या और एवन उमका अथा उमता या किन्तु मननमाना क यती सगात म स्वर और राग रागनियों का व्यनम्ना नती थी । एन एनों क समन्वय म उर्गात कता म परिवर्तन दुर्गा । उर्गा या अकबर भी सगात प्रभा था । प्रसिद्ध तानुत और बजू वावरा उमी क समय म दुर्ग थ । मुान वात म एा एनात और उमगा का प्रचार दुर्गा और साधारण परिवर्तन क माय नट राग रागनियों भा प्रचलित दुर्गा त्रिमम बहाए एरागे मियों की शाये अति प्रभाव है । वाद्ययंत्र उमता बस हा र्द । माग्गी का विकास समन्वय एम युग में हुआ है । वम धीगा विचार द्वातरा गानपुग अति एन ही भाग्य म थ । अरवा तागा नक्काग एनात् अति विष्गी प्रतीत एत है परन्तु मुगता क माय कवल नाम का उम्माय हान क अतिरिक्त कोई विषय प्रमाण प्राप्त नगा है । य एमन्वय भा एनर नारत म हा मामित र्ना । एगिा नारत म ता अना उर्गा भा प्राचीनकाल क गार्जीय सगात और वाद्य प्रचलित है ।

उपमहार—इस प्रकार भारतवर्ष का समन्वित सभृति का विकास हुआ त्रिमम सम्भूता एम क जीवन क विभिन्न एन प्रभावित हुए । भाषा साहित्य कता रीति रिवाज धम विचार अति मनी का नवीन एम विकसित हुआ । एमी का नाम भारत की समन्वित सभ्यता है जा न अकल हिन्दुओं की है और न अकले मुसलमानों की । वरन सम्भूत राष्ट्र का म्मति है ।

अभ्यास के लिए प्रश्न

- १ भारत की समन्वित सभ्यता मे क्या समन्वित हा समन्वित ?
- २ भारत की समन्वित सभ्यता में भाषा साहित्य और सगोचरता के विकास का वान काजिए ।
- ३ भारतीय मनों ने इस समन्वित सभ्यता के विकास में क्या योग दिया ? सविस्तार लिखिए ।
- ४ भारतीय सभ्यता की चिप्रकता पर एक निबन्ध लिखिए ।

सोलहवा अध्याय

मुगल-साम्राज्य का ह्रास और अंग्रेजों की विजय

प्रस्तावना—मुगल साम्राज्य के समय भारत की सर्वांगीण उन्नति का अध्ययन हम कर चुके हैं। दीर्घ काल तक समुचित व्यवस्था और शासन प्रबंध चलाने के बाद भी मुगल साम्राज्य स्थायी न रह सका यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है। समारंभ यह उक्ति बहूत प्रचलित है कि 'शक्ति द्वारा उत्पन्न वस्तु शक्ति के द्वारा ही नष्ट हो जाती है। मुगल साम्राज्य भी इसका अपवाद नहीं था। अनेक सुयोग्य शासकों द्वारा शासित होने के कारण ही यह लम्बे समय तक टिक सका किन्तु अयोग्य उत्तराधिकारी और उनके विलासी हान के कारण तथा परस्पर संघर्ष और मनमुटाव के कारण, वही साम्राज्य विलीन भी हो गया। यह सच है कि दीर्घ काल में जन्म हुए साम्राज्य का ह्रास भी दीर्घकाल में ही हुआ।

मुगल साम्राज्य का पतन—शौरजजब के शासनकाल तक मुगल साम्राज्य बहुत सम्पन्न और व्यवस्थित था किन्तु उसकी धर्मापत्ता अपने बगजा के प्रति अधिभ्रम पाशविक हिंसावृत्ति और हिंदुओं के प्रति द्रोह का व्यवहार रखने के कारण समस्त देश में असंतोष कर गया था। यही कारण है कि उनकी बढ़ावस्था में ही देश में अनेक उपद्रव होने लगे। दूरस्थ देशों के हिंदू और मुसलमान शासक स्वतंत्र होने लगे विद्रोह करने लगे और नई नई जातियाँ और दल भी विकसित हो गए। दक्षिण में मराठा लोग जन्तुशक्ति के रूप में हिंदुओं के प्राता बनकर संगठित हुए, उत्तर में जाट लोग ने मुगलों का सामना करना शुरू किया, राजस्थान में बीर दुर्गास और राणा परिवार स्वतंत्रता के उपासक चतय हुए और सिक्ख लोग अपना अलग राज्य विस्तार करने लगे। ऐसी स्थिति में ठगा और पिंडारिया न देश में अराजकता का नग्न स्वरूप उपस्थित कर दिया। लूटमार प्रतिदिन की घटना बन गई। मराठा जाट, पिंडारी आदि सभी नशस बन गए। इस प्रकार शौरजजब की मृत्यु के बाद मुगल साम्राज्य का पतन बहुत शीघ्र हुआ। सन् १७१६ में फर्रुखसियर की हत्या कर दी गई और प्रांत स्वतंत्र हो गए। मराठा ने दिल्ली तक धावे शुरू कर दिए (१७३८) और नादिरशाह ने (१७३६) दिल्ली में कल्ले आम करवा कर अपार सम्पत्ति (मयूर सिंहासन भी) लूट कर ले गया। सन १७८८ में गुलाम कादिर रोहिला ने दिल्ली पर आक्रमण करके शाहआलम की आँखें फोड़ दी और समस्त सम्पत्ति को लूटकर ले गया। इस प्रकार मुगल साम्राज्य की दशा दिन प्रतिदिन शोचनीय होती गई।

इधर मराठा शक्ति बढ़ती जाती थी। वे लोग मालवा, गुजरात और राजस्थान में जन्म ल गए थे। चौध आदि तो बसूल करते ही थे यहाँ की राजनीति और शासन में भी हस्तक्षेप करते थे और पसे के लोग से कोई भी उचित अनुचित काय

कि वे परस्पर विश्वास कर ही नहीं सकते थे। औरगजेब आदि मुगल सम्राटों ने भारत की एकता के लिए गहरी कश बना दी थी। इस स्थिति में विदेशी शक्ति एक निष्पक्ष मध्यस्थ की भाँति कार्य करने लगी और सरल, उदार हून्यो भारतवासी अपने सघर्षों का निणय उनकी सहायता द्वारा करने लग। कूटनीति, व्यापार नीति तथा विदेशी सम्बन्धों का प्राचीन भारतीय ज्ञान इस समय तक लुप्त सा ही गया था। इसलिए यहाँ बसे हुए अग्रज विभिन्न प्रकार से भारतीय शासकों की चातुरीपूर्वक लड़ाकर अपना प्रभाव जमाने में पूण सफल हुए।

व्यापारिक क्षेत्र में भारतवर्ष यद्यपि उन्नत और अग्रसर था, तो भी उसके साथ व्यापार पटुता और नीति का आदश उपस्थित नहीं था। इस युग में विदेशों में व्यापार महत्वपूर्ण समझा जाता था और राजा महाराजा तथा शासक वर्ग उसमें अपना पूरा पूरा सहयोग देते थे। किन्तु भारतवर्ष में व्यापार एक ही वर्ग वश्य के लिए समझा जाता था और ब्राह्मण तथा शत्रिय इनमें कोई शत्रिय सहयोग नहीं देते थे। इसलिए देश की राजनीति पर उसका प्रभाव उल्टा हुआ। अपने देश की व्यापार की रक्षा करना, विदेशी महत्वहीन वस्तुओं के आयात पर बन्धन लगाना आदि बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। फलस्वरूप, भारत का व्यापार, भारत का धन और अन्त में भारत का स्वत्व स्वतन्त्रता भी धीरे धीरे विदेशी हाथों में चली गई।

भारतीय नतिकता भी इस परिवर्तन के लिए उत्तरदायी है। विदेशियों के साथ शत्रिय की भाँति सद्व्यवहार करना, उनके साथ व्यापार आदि सभी क्षेत्रों में शत्रियता करना और अपनी बात पर दृढ़ रहना भारतवासियों के जीवन का अभिन्न अंग था किन्तु इसके विपरीत विदेशियों के मन में कूटनीति छल, छद्म और कपट प्रधान रहता था। अक्सर के अनुसार उनके सिद्धांत बदलते थे और नतिकता को वे महत्व नहीं देते थे इसलिए शत्रिय की शर्तों का पालन केवल वे अपने स्वार्थों की रक्षा के लिए करते थे। कोई बाधा आने पर पुन शत्रियता नवीन रूप में लय की जाती थी। श्री बक का कथन है कि भारतवर्ष में अग्रजा द्वारा की गई एक भी ऐसी शत्रिय नहीं है जिसका उन्होंने पालन किया है और बाद में उसे तोड़ा न हो परन्तु भारतवासी यह सब देखने में असफल रहे। इसके अतिरिक्त भारतीय वीरता और साहस के रू के आदर्शों का भी प्रयोग विदेशियों ने अपने स्वार्थ पालन के लिए ही किया। बसे विदेशी और भारतीय सेना के मध्य कोई भी ऐसा युद्ध नहीं हुआ जिसमें अपने अच्छे शस्त्रों के होते हुए भी वे भारतवासियों को पराजित कर सके हैं। किन्तु भारतीय दो दलों का लड़ाकर ही वे सदैव विजयी हुए हैं। यह सत्य स्वीकार करते हुए बड़ा दद होता है परन्तु वास्तविकता यही है कि भारत ने अपनी ही शक्ति से अपने शत्रियों को निबल बनाया और फिर विदेशियों का सहारा लेकर पराधीन हो गया। अपने शुद्ध बाहुबल के आधार पर अग्रज जाति भारत को अपने अधीन नहीं बना सकती थी।

भारतीय समाज का अग्र पतन भी इस परिवर्तन के लिए उत्तरदायी है। मुगलों के समय से ही चरित्रहीनता, विलासिता, भेदभाव जातीयता, अष्टाचार और

मे सहायता दन क लिए प्रस्तुत रहन थ । मगठन भी नवना मन्वून था । उनिए घीरे घीरे लिनी और कलकत्ता तथा पशावर तक ये लाग बूच करत थे । बिहारी लोग इही क साथी और अधीनस्थ थे । इहोने व्यवस्था बिगाहन का ही काम किया । जनता इनक अत्याचारा स कराहन लगी थी और यह चान्नी थी कि बिना भी तरह बतमान स्थिति का अन्त हा ।

अंग्रेजों की विजय—इस समय तक मुगल साम्राज्य ता विनीत ना गया किन्तु एक मुन्बईस्थित गामन का अभाव बना रहा । सम्भूत दग म अराजकता व्याप्त हा गई । अठारहवीं शताब्दी तक अंग्रेज रीति और नीति स बम्बई, मद्रास कलकत्ता आदि स्थाना पर जम गए थ और १७६१ तक कुठ प्राता पर ना हावा हा गए थे । वास्तव म य व्यापार की दृष्टि स आए थे परन्तु इनका पूव स्थिति गामन व्यवस्था का मगठन हाता है । जब यहां गामन का स्थान रिक्त शिवा रिखा तो स्वताग पुण्या ने अहमर का पूग लान उठाया । पुनगानी डच फ्रांसीसी और अंग्रेज सभी लाग यहां आए हुए थ । परन्तु अंग्रेज जाति अधिक कुगत व्यापारी सफल गामन और व्यवहार-यट निकला । उन्गेने पहन मराठा का स्वाग और टीपू मुस्तान का ममापन कर लिया । १८०३ म लिनी का वाग्गा भी उनक ममर्शन ना गया । सन १८१७-१८ म लिनिर्वी और ठगों का कुचन दिया । राजपूत नरगा म उहान सचिया कर थी और मित्र बन गए और पत्रा ना उनस पंगन पान लगा । अंग्रेज दगा गामकों क परम्पर सपर्यो म सहाय्य और विराय करन लग और व्यवस्था जमान लग । उनक गम्भ और जन्त्री गकिन उनका मत्ता का मून आचार थी । उन्हें कवन ठही क साथी बुरापियन नागा स कठिन भुवावना करना पडा और उनम भी अन्त म क बिजया हुए । फ्रांसीसा और डच तथा पुनगान क नाग उनके सामन नहीं टिक सक । धार और ब्रह्मा नका और सम्भूत भारत पर लान लग छा गया और इतन बने साम्राज्य की स्थानता ने गई निमम मूवास्त नती हाता था । यह साम्राज्य १४ अगस्त म १८४७ तक भारतवर्ष म स्थापित रग ।

परिवर्तन क कारण—हमार रग का परानोनता क लिए अनेक कारणों का विवरण किया जाता है । यत् स्वभाविक है कि पश्चिम क द्वारा पूव की अन् विजय वास्तव म एक मन्वपूण घटना थी और अन्क लिए कुठ मन्वपूण तवा का अभाव उत्तरदायी माना जाता है । मवप्रथम, भारतवर्ष इतना विज्ञान और विस्तृत रग था किन्तु फिर भी यहा दगमक्ति का नावना स्पष्ट रग स विकसित नहीं थी । इसलिए विभिन्न रग और गकितया कवन अंगन ही स्वार्थों को लकर आगे बन्न म प्रयत्नगीत थे । उन्हें परस्पर नन्न समय अरनी माननमि क प्रति प्रम और उसकी स्वतंत्रता की रगा का उच्चांग गामन नहीं था । अन्लिए उन्हें परस्पर लडा रना बहुत मरन रग और बिनी और वन्त की कपाना की नीति बिन्ना नाग यगी क मत्ताधारों का लडाकर अरना व्यवस्था स्थापित करन म सफल ना गण ।

इस परिवर्तन के लिए दूसरा कारण यह था कि कन् अत्यन्त दुबल हा गया था तथा हिन्दू और मुस्लिम जनता म एक दूसरे क प्रति सन्ने इतना बग गया थ

कि वे परस्पर विश्वास कर ही नहीं सकते थे। औरगजेब आदि मुगल सम्राटों ने भारत की एतता के लिए गहरी कब्र बना दी थी। इस स्थिति में विदेशी शक्ति एक निष्पक्ष मध्यस्थ की भाँति कार्य करने लगी और सरल, उदार हृदयों भारतवासी अपने सघर्षों का निणय उनकी सहायता द्वारा करने लगे। कूटनीति, व्यापार नीति तथा विदेशी सम्बन्धों का प्राचीन भारतीय ज्ञान इस समय तक सुप्त सा हो गया था। इसलिए यहाँ बसे हुए अग्रज विभिन्न प्रकार से भारतीय शासकों को चातुरीपूर्वक लगाकर अपना प्रभाव जमान में पूर्ण सफल हुए।

व्यापारिक क्षत्र में भारतवर्ष यद्यपि उन्नत और अग्रसर था, तो भी उसके साथ व्यापार पटुता और नीति का आदर्श उपस्थित नहीं था। इस युग में विदेशों में व्यापार महत्वपूर्ण समझा जाता था और राजा महाराजा तथा शासक वर्ग उसमें अपना पूरा पूरा सहयोग देते थे। किन्तु भारतवर्ष में व्यापार एक ही वर्ग वंश्यों के लिए समझा जाता था और ब्राह्मण तथा क्षत्रिय इनमें कोई सश्रिय सहयोग नहीं देते थे। इसलिए देश की राजनीति पर उसका प्रभाव उल्टा हुआ। अपने देश की व्यापार की रक्षा करना विदेशी महत्वहीन वस्तुओं के आयात पर बन्धन लगाना आदि बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। फलस्वरूप, भारत का व्यापार भारत का धन और शक्ति में भारत का स्वत्व स्वतंत्रता भी धीरे धीरे विदेशी हाथों में चली गई।

भारतीय नैतिकता भी इस परिवर्तन के लिए उत्तरदायी है। विदेशियों के साथ अतिथि की भाँति सद्व्यवहार करना, उनके साथ व्यापार आदि सभी क्षेत्रों में संधि करना और अपनी बात पर दृढ़ रहना भारतवासियों के जीवन का अभिन्न अंग था किन्तु इसके विपरीत विदेशियों के मन में कूटनीति, छल, छद्म और कपट प्रधान रहता था। अक्सर के अनुसार उनके सिद्धांत बदलते थे और नैतिकता को वे महत्व नहीं देते थे इसलिए संधि की शर्तों का पालन केवल वे अपने स्वार्थों की रक्षा के लिए करते थे। कोई बाधा आने पर पुनः संधि नवीन रूप से तय की जाती थी। श्री बक का कथन है कि भारतवर्ष में अग्रजों द्वारा की गई एक भी ऐसी संधि नहीं है जिसका उन्होंने पालन किया हो और वास्तव में उसे तोड़ा न हो परन्तु भारतवासी यह सब देखने में असफल रहे। इनके अतिरिक्त भारतीय बीरता और साहस के ऊँच आदर्शों का भी प्रयोग विदेशियों ने अपने स्वार्थ पालन के लिए ही किया। वस विदेशी और भारतीय सेना के मध्य कोई भी ऐसा युद्ध नहीं हुआ जिसमें अपने अच्छे शस्त्रों के होते हुए भी वे भारतवासियों को पराजित कर सके हा, किन्तु भारतीय दो दस्ता को लड़ाकर ही वे सदैव विजयी हुए हैं। यह सत्य स्वीकार करते हुए बड़ा दर्द होता है परन्तु वास्तविकता यही है कि भारत ने अपनी ही शक्ति से अपने आपको निबल बनाया और फिर विदेशियों का सहारा लेकर पराधीन हो गया। अपने शुद्ध बाहुबल के आधार पर अग्रज जाति भारत को अपने अधीन नहीं बना सकती थी।

भारतीय समाज का अग्रपतन भी इस परिवर्तन के लिए उत्तरदायी है। मुगलों के समय से ही चरित्रहीनता विलासिता, भ्रष्टाचार, अज्ञानता और

सतरहवाँ अध्याय भारत में ब्रिटिश शासन

प्रस्तावना—अंग्रेजों का सम्पर्क भारतवर्ष के साथ सन् १६०० से आरम्भ हुआ और कई परिवर्तनों के साथ सन् १६४७ तक गहरा सम्बन्ध रहा। इसके बाद भारतवर्ष स्वतन्त्र हो गया किन्तु राजनतिक और सांस्कृतिक सम्बन्ध अब भी बने हुए हैं। यही कारण है कि राष्ट्रमण्डल (Common Wealth) की सदस्यता अभी तक चल रही है। इतने दीर्घ काल में ब्रिटिश शासन के कई रूप इस देश में प्रस्तुत हुए हैं। किन्तु प्रारम्भ से लेकर सन् १६३५ तक के शासन विधान का रूप एक प्रकार से विकास का क्रम ही समझा जाता है और अन्त में सन् १६३५ के विधान के द्वारा ही सन् १६४७ तक प्रशासन चला है। इसके पश्चात् सत्ता हस्तांतरित हो गई। इसलिए आधारभूत ब्रिटिश शासन का वास्तविक स्वरूप वही है जो सन् १६३५ के शासन विधान द्वारा प्रदान किया गया था। फिर भी सन् १६३५ के विधान तक का क्रमिक विकास का ज्ञान अनिवार्य सा प्रतीत होता है। इसलिए सन् १६३५ में इसका अध्ययन करने के बाद ही वास्तविक ब्रिटिश शासन का अध्ययन आरम्भ करेंगे।

भारत का सवधानिक विकास—ईस्ट इण्डिया कम्पनी का मुख्य उद्देश्य भारत में केवल एकमात्र व्यापार करना था और यही कार्य प्रारम्भ भी किया। किन्तु उस समय यहाँ पर मुगल सम्राट की शक्ति क्षीण हो रही थी और प्रायः सभी विभिन्न शासक वर्ग स्वतन्त्र होने जा रहे थे। इस स्थिति का लाभ उठाकर कम्पनी के कर्मचारियों ने शासन में हस्तक्षेप आरम्भ कर दिया। धीरे धीरे व्यापार भी बढ़ा और शासन करने की शक्ति भी हाथ आती गई। सन् १७५७ में प्लासी का युद्ध हुआ उसमें अंग्रेज विजयी हुए और फलतः व्यापार के एकाधिकारी से बन गए। सन् १७६५ में लार्ड क्लाइव ने बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानगी प्राप्त की और उन प्रांतों में सुरक्षा और भूमिकर की व्यवस्था कम्पनी ने स्वयं आरम्भ कर दी। इसी समय से उनका राजकाज में हस्तक्षेप आरम्भ हो गया और दिन प्रतिदिन बढ़ता गया और सन् १८५७ तक देश के बहुत बड़े भाग का शासन कम्पनी के अधीन हो गया। इस बीच में सन् १७७३ का रेग्युलेशन एक्ट सन् १७८४ का पिट्स इण्डिया बिल आदि ब्रिटिश संसद ने पास किए थे। इनका उद्देश्य यही था कि भारत में अच्छी व्यवस्था हो और कम्पनी अपना कार्य सुचारु रूप से करे। निषेधण सभा और गुप्त समितियों का संगठन भी इसी दृष्टि से किया गया था। गवर्नर जनरल के अधिकारों में वृद्धि हुई और शासन धीरे धीरे केंद्रित कर दिया गया। इसके पश्चात् १८१३ और १८३२ में फिर नए कानून पास किए और कम्पनी का कार्य केवल राजशासन को सम्भालना ही रह गया।

सन् १८५८ ई० म, जज ब्रिटिश सरकार ने भारत का प्रथम स्वतन्त्रता सत्र (१८५७) लागू कर दिया तब यहाँ का सामन ब्रिटिश सम्राट के अधीन हो गया। महारानी विक्टोरिया ने घोषणा की कि अब राजकीय तथा कानून के क्षेत्र में घोषणा के आधार पर नियमितता होगी। धर्म, जाति, वर्ग के आधार पर नहीं और सरकार का मत धर्म विषय में भी हस्तगत नहीं करेगी। अब भारत का सम्पूर्ण सामन भारत मंत्री के अधीन किया गया। उगरी सहायता के लिए १५ मन्त्रियों की कौमिल बनाई जो कानून परामर्श देनी थी और इस परामर्श की स्वीकार करता भारत मंत्री की इच्छा पर निर्भर करता था। भारत का कानून जनरल पूर्णस्वतन्त्र भारत मंत्री के अधीन हो गया। इसका नाम सन् १८६१ तक नियम द्वारा भारतवागिया की भी सामन व्यवस्था में स्थान दिया गया और १८६२ के नाम विधान द्वारा इन भारतीयों की संख्या बढ़ा दी गई। इस समय के मन्त्रियों का कानून बन गई थी। राष्ट्रीय काँग्रेस का जन्म हो चुका था। इसलिए जनता की संतुष्ट करने के लिए अधिनियम अधिनियमों की आवश्यकता थी। इस समस्या का हल देना के लिए भारत मन्त्री श्री मोर्ले और जनरल जनरल श्री मिंटो की मन्त्रणा के आधार पर मिंटो मार्ग अधिनियम पारित किया गया और जनता द्वारा निर्वाचित मन्त्रियों की संख्या बढ़ा दी गई किन्तु साम्प्रदायिक निर्वाचन का विधान भी मान लिया गया। इसलिए दो गुणों में जनता संतुष्ट नहीं हुई। १९१४ में प्रथम विश्व युद्ध आरम्भ हो गया।

प्रथम विश्व युद्ध के समय भारतवागिया ने अग्रजों की बहुत सहायता की इसलिए २० अगस्त सन् १९१७ में भारत मंत्री श्री माण्डेस्यू ने इन्डियन एक्ट की शुरुआत में घोषणा की अब इन्डियन एक्ट भारत में वही के निवासियों को सामन में अधिक हिस्सा दिया जाय और स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं की स्थापना भी की जाय जिसमें उत्तरदायी सामन स्थापित करने में सुविधा रहे। तत्पश्चात् सन् १९१९ में माण्डेस्यू केम्पफोर्ड मुयारो के आधार पर नवीन अधिनियम पारित हुआ जिसमें निम्नलिखित विशेषताएँ थी —

(१) धारा सभाओं में जनता द्वारा निर्वाचित मन्त्रियों की संख्या बढ़ा दी गई और मनाहीत मन्त्रियों की संख्या में अधिक कर दी गई।

(२) मन्त्रणाओं की योग्यताएँ उन्नततापूर्वक कम कर दी गई ताकि अधिनियम मन्त्राधिकार का प्रयोग कर सकें।

(३) धारा सभा के अधिकारों में वृद्धि हो गई। अब वे प्रस्तावित मन्त्रों की प्रस्ताव पृष्ठन की अधिकारिणी बन गई और आय-व्यय व्यौर पर भी विचार करने का अधिकार प्राप्त हो गया।

(४) प्रांत में दायरा सामन (Dyarchy) अर्थात् द्वय सामन प्रणाली आरम्भ हो गई। प्रांत के विषयों का दो भागों में विभाजित किया गया। एक भाग जनता के प्रतिनिधि मंत्रियों का अधीन किया गया। ये विषय हस्तान्तरित विषय कानून और इनके प्रस्ताव का उत्तरदायित्व मन्त्रिमण्डल पर रहा। दूसरा भाग गुरुगणित विषयों कहाया और यह जनरल की कार्यकारी समिति के संस्था की अधीन किया

गया। ये लोग अपने कार्यों के लिए केवल गवर्नर के प्रति उत्तरदायी रहे।

(५) केन्द्रीय सरकार की व्यवस्था ज्या की त्था चलती रही।

(६) गृह सरकार (इंजलैंड) में भारतीय परिषद् (India Council) के सभ्यता की संख्या घाट से बारह कर दी गई और इनमें से आधे सदस्यों का ऐसा होना अनिवार्य कर दिया जो कम से कम दस वर्ष तब भारतवर्ष में रहे हों।

(७) भारतमन्त्री का वेतन भारत के कोष के बजाय इंग्लैंड के कोष से दिया जाने लगा।

इन विधायकों के होते हुए भी भारतवासियों को यह विधान पसन्द नहीं आया। विरोधकर द्वंद्व शासन प्रणाली को भयकर माना गया और इसकी इतनी आलोचना हुई कि आज तक भी यह एक कृत्रिम के रूप में चला आ रहा है। वास्तव में यह सिद्धांत दोषपूर्ण ही है। श्री चित्तामणि आदि न अपने अनुभव के आधार पर यह सिद्ध किया है कि यह प्रणाली शासन को अमफल बनाने की अत्यन्त सरल प्रणाली है। इसलिए कांग्रेस और दूसरे राजनीतियों को सतोष नहीं हुआ और सधप बराबर चलता रहा। आतंकवाद और दमन, असहयोग और कारावास, गोनमज सम्मेलन और उनकी सफलता असफलताओं के कष्टकाकीण मार्ग में होकर देग गुजरता रहा और अंत में सन १९३५ में नवीन भारतीय विधान पारित हुआ जिसके द्वारा भारत के स्वतंत्र होने तक शासन चलता रहा।

सन १९३५ का भारतीय अधिनियम—यह २ अगस्त सन् १९३५ को स्वीकृत हुआ था। यह ब्रिटिश सरकार द्वारा पारित सबसे बड़ा और उलझनदार अधिनियम था। इसकी प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित थीं—

(१) इस अधिनियम के द्वारा एक अखिल भारतीय सभ की स्थापना के लिये व्यवस्था की गई थी। यद्यपि समस्त भारतवर्ष एक ही देश था किन्तु नए प्रस्तावित सभ में सम्मिलित होने वाली इकाईयाँ एक सी नहीं थीं। कुछ ब्रिटिश प्रांत थे और कुछ देशी राज्य। साथ ही प्रान्तों का सभ में सम्मिलित होना अनिवार्य था और देशी राज्यों का सम्मिलित होना उनके शासकों की इच्छाओं पर आधारित था। इसी प्रकार प्रांतों का समस्त शासन के लिये सभ में आना अनिवार्य था और देशी राज्यों के लिये यदि आना भी चाहें तो केवल उन्हीं विषयों के सम्बन्ध में जिन्हें उनके शासक स्वयं सौंपना पसन्द करें और अंत में सभ की स्थापना के लिये यह बात थी कि सभ उस समय स्थापित होगा जब कि ऐसी संख्या के देशी राज्य सभ में सम्मिलित होने को तैयार हों जिनकी जनसंख्या समस्त देशी राज्यों की जनसंख्या की कम से कम आधी हो। इस प्रकार इसे उलझनदार अधिनियम कहा जाना उचित ही था।

(२) सभ की व्यवस्थापिका सभाओं में निम्न सदन में देशी राज्यों को १२५ और प्रांतों को २५० तथा राज्य-परिषद् में देशी राज्यों को १०४ और प्रांतों को १५६ सदस्य भेजने का अधिकार दिया गया था। यहाँ भी देशी राज्यों के प्रतिनिधि शासकों द्वारा मनोनीत होने की थे और प्रांतों के प्रतिनिधि जनता द्वारा

सन् १८५८ ई० म जब ब्रिटिश सरकार १ भारत का प्रथम स्वतन्त्रता अध्याम (१८५७) पान कर लिया तब यहाँ का पानन ब्रिटिश मन्त्रालय क अधीन आ गया। महाराणी विक्टोरिया न घोषणा का निश्चय राजकाय पान क लिए कवन दायित्व के आधार पर नियुक्तियाँ ह्यो। धन, जाति वगैरे आधार पर नहीं और सरकार धन मत प्राप्ति विषयों म भी स्वतन्त्र नही करयो। अब भारत का सम्पूर्ण पानन भारत मत्रा की सौंन दिया गया। स्वकी गणपता क लिए ११ मन्त्रों की बौधिन बनाई जो कवन परामर्श देती थी और इय परामर्श को स्वीकार करना भारत मत्रा की इच्छा पर निर्भर करता था। भारत का गवर्नर जनरल पूर्णस्वतन्त्र भारतमत्रा क अधीन आ गया। स्वक वाक मन् १८६१ नए नियम द्वारा भारतवासियों को भी पानन व्यवस्था म स्थान दिया गया और १८६२ क नए विधान द्वारा उन भारतीयों को सख्या बना ले गई। स्व समय स्व म नवतन्त्रता पत्र गढ़ था। राष्ट्रीय कांग्रेस का जन्म हुआ था। स्वलिए जनता का अनुष्ठान करने क लिए अधिक अच्छे अधिनियमों की आवश्यकता थी। इन समस्या का हल करने क लिए भारत मत्रा श्री मोरें और गवर्नर जनरल श्री मिंटो का मदगा क आधार पर मिंटो मोरें अधिनियम पारित किया गया और जनता द्वारा विवाचित मन्त्रों का सख्या बना ले गई। तन्तु साम्प्रदायिक विधान का सिद्धान्त भी मान लिया गया। स्वलिए इन मुद्दों म जनता अनुष्ठान नहीं हुआ। १८१४ म प्रथम विश्व युद्ध आरम्भ आ गया। प्रथम विश्व युद्ध क समय भारतवासियों न अग्रजों का बहुत सहायता की इच्छा २० अगस्त मन् १८१७ म भारतमत्री श्री माटेग्यू न इन्डिया की राज मन्त्रा में घोषणा का अर युद्धोत्तरान्त भारत म वहीं क निवासियों का पानन म अधिक हिस्सा दिया त्राय और स्थानीय स्वायत्त सख्याओं की स्थापना भी की जाय त्रिमन्त्र उत्तरदायी पानन स्थापित करने म मुविधा रहे। तन्तुत्तान मन् १८१८ म मोरग्यू वेम्सफोर्ड मुद्दों क आधार पर नवान अधिनियम पारित हुआ जिसमें निम्नलिखित विशेषताये थी —

(१) धारा मन्त्रों म जनता द्वारा निर्वाचित मन्त्रों का सख्या बना ले गई और मनाहीत मन्त्रों की सख्या न अधिक कर आ गई।

() मन्त्रालयों की दायित्वों उन्तान्तुत्तक कम कर आ गई ताकि अधिक भाग मन्त्रालय का प्रयोग कर सकें।

() धारा मन्त्रा क अधिकारों म बढि ले गई। अब क प्रशासन सम्बन्धी प्रश्न पूछने की अधिकारिणी बन गई और आय-व्यय व्यौर पर भी विचार करने का अधिकार प्राप्त आ गया।

(६) प्रांता म पानन (Dyarchy) अर्थात् द्वैध पानन प्रणाली आरम्भ हुआ गई। प्रांत क विषयों का आ भागों में विभाजित किया गया। एक भाग जनता के प्रतिनिधि मन्त्रियों का सौंन दिया गया। य विषय हन्तानरित्त विषय कन्वारा और इनक प्रशासन का उत्तरदायित्व मन्त्रिमन्त्र पर रना। दूसरा भाग मुरगित्त विषय कहलाया और यह गवर्नर की कार्यकारिणी समिति के सख्या की सौंन दिया

गया। ये लोग अपने कार्यों के लिए केवल गवर्नर के प्रति उत्तरदायी रहे।

(१) केन्द्रीय सरकार की व्यवस्था ज्या की त्यों चलती रही।

(६) गृह मन्त्रालय (इंजलड) में भारतीय परिषद् (India Council) के सदस्यों की संख्या आठ से बारह कर दी गई और इनमें से आधे सदस्यों का ऐसा होगा अनिवार्य कर दिया जो कम से कम दस वर्ष तक भारतवर्ष में रहे हों।

(७) भारतमन्त्री का वेतन भारत के कोष के बजाय इंजलड के कोष से दिया जाने लगा।

इन विज्ञापनों के होते हुए भी भारतवासियों को यह विधान पसन्द नहीं आया। विधायक दल शासन प्रणाली को भयकर माना गया और इसकी इतनी आलोचना हुई कि आज तक भी यह एक कहावत के रूप में चला आ रहा है। वास्तव में यह सिद्धान्त दोषपूर्ण ही है। श्री चिन्मणि आदि ने अपने अनुभव के आधार पर यह सिद्ध किया है कि यह प्रणाली शासन को अमफन बनाने की अत्यन्त सरल प्रणाली है। इसलिए कांग्रेस और दूसरे राजनीतिज्ञों को सतोष नहीं हुआ और सधय बराबर चलता रहा। धातकवाद और दमन, असाहयोग और कारावास, शान्त सम्मेलन और उनकी सफलता असफलताओं के कष्टकाकीण मार्ग में होकर देग गुजरता रहा और अन्त में सन् १९३५ में नवीन भारतीय विधान पारित हुआ जिसके द्वारा भारत के स्वतंत्र होने तक शासन चलता रहा।

सन् १९३५ का भारतीय अधिनियम—यह २ अगस्त सन् १९३५ को स्वीकृत हुआ था। यह ब्रिटिश सरकार द्वारा पारित सबसे बड़ा और उलझदार अधिनियम था। इसकी प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित थीं —

(१) इस अधिनियम के द्वारा एक अखिल भारतीय सभ की स्थापना के नियम व्यवस्था की गई थी। यद्यपि समस्त भारतवर्ष एक ही देग था किन्तु नए प्रस्तावित सभ में सम्मिलित होने वाली इकाईयाँ एक ही नहीं थीं। कुछ ब्रिटिश प्रांत थे और कुछ देशी राज्य। साथ ही प्रांतों का सभ में सम्मिलित होना अनिवार्य था और देशी राज्यों का सम्मिलित होना उनका शासकों की इच्छाओं पर आधारित था। इसी प्रकार प्रांतों का समस्त शासन के नियम सभ में आना अनिवार्य था और देशी राज्यों के लिये यदि आना भी चाहें तो केवल उन्हीं विषयों के सम्बन्ध में किन्हीं उनके शासक स्वयं सौंपना पसन्द करें और अन्त में सभ की स्थापना के लिये यह गन थी कि सभ उस समय स्थापित होगा जब कि ऐसी मन्था के देशी राज्य सभ में सम्मिलित होने को तयार हों जिनकी जनसंख्या समस्त देशी राज्यों की जनसंख्या की कम से कम आधी हो। इन प्रकार इसे उलझदार अधिनियम कहा जाना उचित ही था।

(२) सभ की व्यवस्थाओं का समाधान में निम्न सदन में देशी राज्यों को १२५ और प्रांतों को २५० तथा राज्य-परिषद् में देशी राज्यों को १०४ और प्रांतों का १५६ सदस्य बनने का अधिकार दिया गया था। यहाँ भी देशी राज्यों के प्रति-निधि प्रांतों द्वारा मनोनीत होने की थी और प्रांतों के प्रतिनिधि जनता द्वारा

निर्वाचित होना चाहिये थे ।

(३) इस समय के अधिकारों का वर्गीकरण भी विशेष पद्धति से ही हुआ था । अधिकारों को तीन सूचियाँ बनाई गई थीं, मधीय सूची, प्रांतीय सूची और संयुक्त सूची, तथा गवर्नर जनरल का यह विशेष अधिकार था कि वह यह निश्चय कर सके कि कौन सा विषय किस सूची में सम्मिलित किया जाय ।

(४) मन् १९३५ के अधिनियम द्वारा केंद्र में द्वय शासन की व्यवस्था की गई थी । कुछ विषय गवर्नर जनरल के अधीन रहे जिनका प्रशासन वह तीन परामशदात्रा की सहायता से करता था और ये विषय सुरक्षा, विद्वानों सम्बन्ध, पादरियों के मामल और कदाचित्त क्षत्रा की व्यवस्था चार ही थे । अन्य विषयों की व्यवस्था के नियम मन्त्रिमण्डल की स्थापना की गई थी । ये मन्त्रागण हम से अधिक नहीं होने चाहिये थे और मन्त्रिमण्डल पद्धति के आधार पर गठित होने की व्यवस्था थी और इसानिये धारा समा के प्रति उत्तरदायी रहना भी आवश्यक था । प्रोफेसर ए० टी० गाह के मतानुसार 'नए संविधान के अंतगत मधीय मन्त्रिमण्डल की स्थिति आन्कारिक है जिसका कोई उपयोग नहीं है जो प्रनिनिधित्त विय जान वाली जनता के नियम कभी महानक नहीं, यह एसा उत्तरदायित्व है जो बिना अधिकार के है, यह एसी पदवी है जिसका कुछ भी सामर्थ्य नहीं, यह एसा नाम है, जिसका वास्तविक प्रभाव नहीं ।' (फिडरल स्ट्रक्चर-पृष्ठ २२३) ।

(५) भारतीय व्यवस्थापिकाओं के अधिकार अत्यंत सीमित थे । कुछ विषयों पर तो उन्हें विचार करने का भी अधिकार नहीं था, कुछ पर गवर्नर जनरल की अनुमति से विचार कर सकते थे और अन्त में उनके द्वारा स्वीकृत बात भी प्रस्ताव किसी भी स्तर पर रोक भी जा सकता था । इस प्रकार नियम निर्माण का अधिकार नाम मात्र का सा प्रतीत हुआ ।

(६) बजट के सम्बन्ध में ८०% पर उन्हें मत प्रकट करने का अधिकार नहीं था और १५ भाग पर भी उनके विचारों पर गवर्नर जनरल के विनोधाधिकार व्याप्त हो सकते थे ।

(७) एक सहाय न्यायालय की स्थापना का विधान था जिसका अधिकार क्षेत्र सम्पूर्ण भारतवर्ष में व्याप्त था । उसमें एक मुख्य न्यायाधीश तथा दो अवर न्यायाधीशों की व्यवस्था थी और न्यायालय को मौलिक एक अधीन सबधी दानों प्रकार के अधिकार प्राप्त थे ।

(८) इङ्लैण्ड स्थित भारतमंत्री की भारतीय कौंसिल को समाप्त कर दिया गया और कुछ परामशदात्रा नियुक्त कर लिये गये ।

(९) प्रांतों में गवर्नर और केंद्र में गवर्नर जनरल का व्यक्तिगत नियम के अधिकार और विनोधाधिकार के अन्त में सर्वाधिक अधिकार स्थापित किये गये और उन्हें कुछ विशुद्ध सरक्षण (special responsibilities) का कार्य सौंप कर और भी अधिक शक्तिशाली बना दिया गया ।

(१०) इनका शासन कठिन ब्रिटिश सरकार ही कर सकता थी ।

(११) इस अधिनियम की सबसे अच्छी विशेषता थी 'प्रातीय स्वराज्य' की स्वीकृति । इस व्यवस्था द्वारा प्रातो म पूर्ण उत्तरदायित्व वाली सरकार की स्थापना हुई ।

अब हम इसके पश्चात जो वास्तविक व्यवस्था इस अधिनियम के अनुसार हुई उसका विस्तृत वर्णन करेंगे ।

गृह सरकार—भारतवप के शासन से सम्बन्धित जो सगठन इंग्लैंड मे स्थित था उसे गृह सरकार की सना दी गई थी इसकी स्थापना सन् १९५८ के एक्ट द्वारा कर दी गई थी और बाद के अनेक अधिनियमों द्वारा इसमें परिवर्तन भी होने गये । सन ३५ के एक्ट द्वारा पुनः पर्याप्त परिवर्तन किया गया । इनके द्वारा प्रातों में स्वराज्य स्थापित किया गया था इसलिए यहाँ के लोकप्रिय मंत्रियों को पर्याप्त अधिकार प्राप्त हो गये थे । इसलिये प्रातीय शासन पर भारत मंत्री (Secretary of State for India) का नियन्त्रण कम हो गया । इसी प्रकार केन्द्र म भी जो अधिकार मंत्रियों को मिले, उन पर से भारतमंत्री का नियन्त्रण कम हो गया । इसी प्रकार से गवर्नर और गवर्नर जनरल के भी विशेषाधिकार आदि क क्षेत्र से उसका प्रभाव कम हो गया फिर भी कुछ अधिकार बराबर बने रहें । सेवाओं की नियुक्तिया, गवर्नर तथा गवर्नर जनरल को भेजे जान वाले निर्देशपत्र आदि द्वारा वह अपने अधिकारों का उपयोग करता था ।

परामशदाता—पहले से चली आयी भारतीय कांसिल क स्थान पर तीन स छ तक परामशदाता नियुक्त करने का अधिकार मिला था । ये पाँच वष के लिये नियुक्त होते थे । इनके लिये भारतवप का १० वष के निवास का अनुभव अनिवार्य था । वे अपना परामश पूछने पर देते थे । व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से परामश लिया जा सकता था और परामश को मानना भी भारतमंत्री की स्वेच्छा पर अब लम्बित था ।

भारतीय हाई कमिश्नर—सन १९१९ के अधिनियम द्वारा इस पद का सजन हुआ था । इसकी नियुक्ति भारत का कांसिल स्थित गवर्नर जनरल करता था । वही उसे हटा भी सकता था इसका कार्यकाल भी पाँच वष होता था । वेतन भारतीय कोष से ३००० पाँड मिलता था । उसके काय थे, इंग्लैंड म गवर्नर जनरल के प्रतिनिधि के रूप म काय करना, स्पेर विभाग का काय करना भारतीय विद्यालयों की देख रेख करना और अन्य कोई काय जो भारत के हित में उसके सुपद किया जाय ।

सघीय सरकार—इस अधिनियम के द्वारा जो सघीय सरकार की योजना थी गवर्नर जनरल उसमें केन्द्र बिन्दु था । उनकी नियुक्ति सम्राट द्वारा की जानी थी । वह मन्त्रिमण्डल क परामश पर अपने व्यक्तिगत विवेक के अनुसार और स्वेच्छापूवक विषय अधिकारों के अनुसार, तीन प्रकार से अपना काय करता था । इनके क्षेत्र भी सिद्ध २ थे । मन्त्रिमण्डल क अधिकार क्षेत्र म उनके परामश पर, उसके विषय उत्तरदायित्वों के क्षेत्र म उनसे अनिवार्य रूप से परामश करके स्वयं के निर्णय द्वारा और महत्वपूर्ण विषयों पर स्वेच्छापूवक अधिकारों का प्रयोग करता था । प्रातों

श्रीर रियामता का क्षत्र भी उमी के अतगत था। इनका प्रणामन वह अनुष्ण पत्र प्रसारित करते हुये करता था। नियम निर्माण व क्षत्र म व्ट वहुन गतिगानी था। कई नियमो के प्रस्ताव उमनी पूव स्वीकृति बिना नहीं हा सकत थ। अय प्रस्तावित नियमो को वह किमी भी स्तर पर रोक सकता था। पारित नियम का पुन विचार व लिय भज सकता था और रोक भी सकता था। बजट व सम्ब थ म नी उसके विस्तृत अधिकार थ। प्रावयना के समय वह स्वय नियम बना सकता था। याय व क्षत्र म भी उम पद्याप्त गतिगानी था जिनके द्वारा यायाधीना का नियुक्तिया क्षत्राधिकार का सीमा परिवर्तन आदि कर सकता था।

रासक परिषद—गवनर जनरन की सहायता व लिये एक ७ सन्स्था का रासक परिषद थी जिनम सनापति, मन्-मन्स्य, रिक्त मन्स्य आदि सम्मिलित थ। य सन्स्य भारत मंत्री व परामन स सम्राट द्वारा नियुक्त हात थ। इनका अक्षधि पाँच साल की थी। वनन ८० हजार वापित था। इनकी माप्यतायें भी भिन्न भिन्न अनिवाय रक्ती गई थी। गवनर जनरन इनका अध्पन हाता था और उन मन्स्या में से एक को उपाध्यक्ष नियुक्त करना था। इन परिषद की कायवाही गुप्त हाती थी। मनभद व त्रिय बटुमन म निणय हाता था। वाद म २१ जुलाई मन् १८४१ को ३० सन्स्था की एक राष्ट्रीय प्रति रक्षा परिषद (National Defence Council) भी बनाई गई था। यन् सिफ परामन्त्याना मस्था था। इनी प्रकार मन्त्रिमण्डल की स्थापना भी गवनर जनरन की सहायता व त्रिय हा की जाती थी। सघीय विधान मण्डल उमका निमाण सगटन और अधिकार भी व्यापक थे। इम प्रकार पूण्ण स सगटित और नियमानुसार सघीय सरकार की स्थापना की गई थी, किन्तु वास्तव म यह सन ऊपरी लिखावा मात्र वा। मन्त्रिमण्डल और विधान मण्डल को कार्द भी नास्तविक अधिकार ना सम्मान नहीं था। हर क्षत्र म प्रत्यक चरण पर गवनर जनरन हस्तक्षेप करन का अधिकारा था। इसीतिय मन्त्रिमण्डल और विधान सभा इनक अधिकार और मर्यादाया का विस्तार स वणन करना उपयोगी प्रतीत नहा होता।

प्रातीय सरकार—प्राता म यद्यपि स्वराज्य की स्थापना हुई थी किन्तु वहाँ की गवनरा की स्थिति ठीक वद्व म गवनर जनरन की स्थिति व समान थी। कवल यह म् था कि वेद्व में गामक परिषद अतगत हाती थी प्राता म यह नहीं था। प्राता म गवनर का नियुक्ति सम्राट द्वारा हाती थी और उमक अधिकार उमी प्रकार व्यक्तितगत निणय व अधिकार, विशेषाधिकार और सामाय अधिकार हात थ। नियम निर्माण व क्षेत्र म, प्रणामन म यात्र क्षत्र म, वित्तीय सीमा म गवनर जनरन की शक्ति ना व प्राता म गतिगाना थे। व मन्त्रिया का नियुक्त तथा पञ्च्युन कर सकते थ। अध्यापन प्रसारित कर सकत थे। लोक सेवा आयाग के सन्स्यों का नियुक्ति करन ये और प्रावयना के समय सविधान ना स्थगित कर सकत थ। उपरोक्त प्राविधान यह सिद्ध करत हैं कि मन्त्रियों के अधिकार सीमित थे। प्राताय विधान मण्डलों का सगटन भी किया गया था। ६ प्रात्यों म दा सन्तीय और पाँच

प्रांतों में एक सदनीय विधान मण्डल था। उनकी शक्तियाँ भी वास्तविक रूप में नहीं के समान थी। औपचारिक रूप में सभी क्षेत्रों में पर्याप्त अधिकार दिये गये थे, किन्तु गवर्नर की इच्छा के विपरीत या उनके शासन में हस्तक्षेप की दृष्टि से कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता था। फिर भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि प्रांतीय स्वराज्य की स्थापना द्वारा, चाहे नाटक के रूप में ही सही भारतवासियों को शासन करने के अनुभव का अवसर मिला।

‘याय व्यवस्था’—सन् १९३५ तक प्रांतों में हाईकोर्ट तक की स्थापना की हुई थी। नए अधिनियमों के द्वारा सघीय ‘यायालय’ की स्थापना भी की गई। इसके ऊपर इंग्लैंड की ‘प्रिवी कौंसिल’ थी जो अपीलें सुनती थी। इन ‘यायालयों’ का संगठन निम्न प्रकार से गृहलावद्ध था—

प्रिवी कौंसिल (इंग्लैंड)

सघीय यायालय (भारत में सर्वोच्च यायालय)
स्थान—देहली

प्रांतीय उच्च यायालय

राजस्व मण्डल
(Revenue Board)

दीवानी शाखा

फौजदारी शाखा

१ कमिश्नर (आयुक्त)
२ क्लर्क (जिलाधीश)

१ जिला जज का यायालय

१ सेशंस जज का यायालय

३ तहसीलदार

२ सिविल जज का यायालय

२ प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट का यायालय

३ मुंसिफ का यायालय

३ द्वितीय श्रेणी मजिस्ट्रेट यायालय

४ सफाया यायालय

४ तृतीय श्रेणी मजिस्ट्रेट का यायालय

(Small cause court)

यह याय व्यवस्था अच्छे ढंग से की गई थी। यद्यपि सघ के सिद्धान्तों के अनुसार ही सघीय यायालय की स्थापना की गई थी किन्तु फिर उसकी अपील के लिए ‘प्रिवी कौंसिल’ में जाने का जो माग खुला रखा वह सिद्धान्त के विरुद्ध भी था।

स्वायत्त शासन व्यवस्था—सन् १८८२ में लार्ड रिपन ने इन सस्थाओं की स्थापना की थी और उनकी शक्तियाँ भी पर्याप्त थी किन्तु उस समय प्रत्येक जिले का जिलाधीश ही इन सस्थाओं का सभापति होता था। सन १९१९ के अधिनियम द्वारा इस स्वशासन को और अधिक प्रोत्साहन मिला था और इन पर लगे हुए प्रतिबंध कम कर दिये गए थे तथा इनकी सीमाओं में अधिक स्वतंत्रता दी गई थी। सन १९३५ के विधान द्वारा इन सस्थाओं को और अधिक काय क्षेत्र मिला। इस

विधान के बाद प्रातः म एक स्वायत्त शासन मन्त्री का पद बन गया पचायतों और नगरपालिकाएँ प्रांतीय विषय बन गई । कई प्रांता न अपने पचायत नियम पास किये और तन्नुसार प्रत्येक ग्राम म ग्राम पचायता की स्थापना की गई । ये पचायती ग्राम की पर्याप्त व्यवस्था करने लगी और स्वायत्त शासन का प्रयाप्त विकास हुआ ।

उपसंहार—उपरोक्त वर्णन के पश्चात् ब्रिटिश शासन क प्रति हम यन् कन् मक्ते हैं कि तत्कालीन ब्रिटिश प्रशासन म गठित और व्यवस्थित था । सम्पूर्ण दश म विदेशिया की दृष्टि म जो ाय था उमका अछटी व्यवस्था थी । विन्नी आक्रमणा म सुरक्षित और आर्थिक दृष्टि म पर्याप्त रूप म विकसित था । आवागमन क सारना का बहुत विकास हुआ । पश्चाय गिता द्वारा माहिय और ज्ञान का अछा प्रचार हुआ और समार क विभिन्न दशा म सम्भव बढान का अवसर भी मिला । प्रथम बिदन युद्ध के पश्चात अन्तर्राष्ट्रीय संगठन म भी भारत का स्थान स्निवाया था । नम प्रकार यह स्पष्ट रूप म स्वीकार किया जाना चाहिए कि आधुनिक भारतवर्ष का वर्तमान शासन प्रणाली की वास्तविक आधारगिता प्राचीन ब्रिटिश शासन का संगठन ही है और स्वतंत्रता प्राप्ति क लिय भा हम ब्रिटिश परम्पराया और उनकी उदारता क प्रति आभारी हैं ।

अभ्यास के लिये प्रश्न

- १ ब्रिटिश शासन पद्धति की मुख्य मुख्य विशेषताएँ बताइये ।
- २ ब्रिटिश युग की ाय व्यवस्था और स्वायत्त शासन पर विस्तृत टिप्पणियाँ लिखिए ।
- ३ स्पानीय शासन का संक्षिप्त विकास लिखिए ।

अठारहवा अध्याय

सामाजिक एव धार्मिक आन्दोलन

प्रस्तावना—भुगल साम्राज्य के पतन के बाद पहले मराठों का बल बढ़ना लगा किन्तु बाद में युक्ति और शक्ति द्वारा अंग्रेजों ने भारतवर्ष पर अपना राज्य स्थापित कर लिया। इस समय भारतीय समाज में घम का वास्तविक रूप धुँधला ही रहा था और सम्प्रदाय आदि के नाम पर चलने वाले ब्राह्मण अंधविश्वास और कुरीतियाँ प्रधान बन गई थी। जातिवाद के कारण समाज में ऊँच नीच का भेद बहुत अधिक हो गया था। ऐसे अवसर पर ईसाइयत का बढ़ता हुआ प्रभाव और शिक्षा द्वारा पश्चिमी सभ्यता में बढ़ने वाले नवयुवकों की स्वच्छन्द वृत्तियों के कारण हिन्दू समाज शोचनीय स्थिति में आ गया था। ईसाई मिशनरियों ने अपने घम का प्रचार आरम्भ कर दिया और नीच जाति के ममूके जाने वाले हिन्दुओं को गले लगाकर ईसाई बनाना आरम्भ कर दिया। उनकी एक बंधुत्व की भावना के कारण अनिश्चित लोग आकर्षित भी होने लगे। यद्यपि यह भी सच है कि विदेशियों के अध्ययन द्वारा भारतीय घम और संस्कृति के उज्ज्वल रूप का भी विश्वास भारतवासियों को हो रहा था तथापि भारतवासियों में यह साहस नहीं हो रहा था कि भारतीय जनता के सम्मुख भारतीय घम और संस्कृति का स्वास्थ्य और शुद्ध रूप उपस्थित करे और अनावश्यक कुरीतियों और रूढ़ियों के निवारण का यत्न करे। ऐसी स्थिति में भारतीय विचारकों ने अपने समाज और घम की रक्षा के लिए आन्दोलन आरम्भ किये। इन सभी आन्दोलनों का उद्देश्य हिन्दू समाज में प्रचलित बुराइयों को दूर करना और प्राचीन घम अथवा वेद, उपनिषद आदि से प्रेरणा लेकर घम के शुद्ध रूप को स्थापना करना था। बाद में इन्हीं आन्दोलनों ने अप्रत्यक्ष रूप से यहाँ की राजनैतिक प्रगति में भी योग दिया।

ब्रह्म समाज

सामाजिक और धार्मिक आन्दोलनों का श्रीगणेश सवप्रथम राजा राममोहन राय ने किया। इनका जन्म २२ मई सन् १७७२ ई० को बंगाल के बदवान जिले के राघानगर ग्राम में हुआ था। ये संस्कृत, फारसी अरबी लैटिन और इब्रानी भाषाओं के अच्छे विद्वान थे, इनकी विवेक शक्ति बड़ी तीव्र थी। इनके जीवन का उद्देश्य भारतीय घम और सभ्यता की संकलित मनोवृत्ति, ब्राह्मण और अंधविश्वास के घातक प्रभाव से तथा ईसाई धर्म और सभ्यता के आक्रमण से रक्षा करना था। इसी दृष्टि से सवप्रथम उन्होंने विभिन्न धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन किया और सब धर्मों के तथ्य को जान लिया। वेद और उपनिषदों के ज्ञान से उन्हें यह प्रेरणा मिली कि भारतीय समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन अनिवार्य है। सन् १८०५ से १८१५

तक पहुँचने ईस्ट इण्डिया कम्पनी में नौकरा की और अग्रेज गायकों और व्यापारियों के सम्पर्क में आये। राजा राममोहन राय का मूर्ति पूजा और कमवाण में विश्वास नहीं हुआ इसलिए वे ब्रह्म एक परमात्मा की पूजा पुनः प्रचलित करना चाहुं थे। इसलिए उन्होंने सन १८१५ में ध्यानसभा और फिर २० अगस्त सन १८१८ को ब्रह्म समाज की स्थापना की। सन् १८२० के लगभग उन्होंने ईसाई धर्म पर एक पुस्तक भी लिखी थी जिसमें यह लिख दिया कि ईसा की कथाएँ कल्पित हैं उन्होंने यह भी लिखा था कि 'यह स्वामात्रिक बात है कि जिससे जाति धर्मने अशुभ जाति व धर्म की उत्पत्ती उत्पन्न करती है स्वयं धर्मता नम कल्पना ही न्यायान्तक या उत्तर ध्यान नहीं जाता।' यह अर्थों के धर्म प्रचार का प्रथम किन्तु बरारा उत्तर था। था हा समय इस समाज का संचालन गिरी और २३ अक्टूबर सन १८३२ का लिखित मदनका दण्डमान हा गया। किन्तु उनका द्वारा आरम्भ किया हुआ कार्य उनके मित्रों और अनुयायियों ने पूरा किया।

इस समाज सिद्धान्त बहुत गम्भीर अध्ययन और विचार के बाद विचारित किए गये थे। इस समाज के सचिवानार ईश्वर ब्रह्म एक है। (एकेश्वरत्व) का सचयकिमान है और सनातन का सचयनहार है। उनकी उपासना अच्छाई और सत्य के साथ होना चाहिए, बल्कि मान्यता है। मूर्ति पूजा के विरुद्ध है तथा विश्व बंधुत्व में विश्वास करत है। आत्मा का धर्मता में भी अन्तर्भाव है। प्रायश्चित्त शास्त्र पाठों से छुटकारा पाया जा सकता है। जाति पाति के मन्त्र विरोध है और खान-पान में स्वतंत्रता स्वीकार करत है। इस समाज का धर्म बहुत सरल है जिनमें मुसलमानों और ईसाई धर्मों के लोगों का भी समावेश हुआ है। वास्तव में उन समय हिन्दू धर्म का अन्तर्भाव उपासना और नैतिकता बनानी ही चाहिए थी। उनके दण्डमान के अन्तर्गत सर्वोपरि देवताय देवार और बाहु कणवचन सेन ने इस सभ्या का महत्त्व किया। इस समय ब्रह्म समाज ईसाई धर्म से प्रभावित होना था इसलिए ब्रह्म समाज की उपासनाओं में ईश्वर का नाम प्रायतः समाज और धार्मिक समाज में गंगा जा अन्तर्गत प्रचलित है।

इस समाज ने भारतीय समाज में अन्तर्गत जाति का जन्म दिया है। इनका भाव में प्रचलित मूल विचार धार्मिक रीति रिवाज मुक्ति के अन्तर्गत और व्यय के पूजा पाठ के अन्तर्गत दूर हो गये। सामाजिक सुधार आरम्भ हो गए। उन्होंने 'मनो प्रया' का पुस्तक विरोध किया और सन १८२६ में स्वतंत्र जनरल लिखित धार्मिक के समय में नियम द्वारा यह सुझाया गया कि समाज करनी। इसी प्रकार जाति पाति पुण्यों के अन्तर्गत विवाह (Polygamy) प्रथा उन्नीसवीं सदी में विवाह करने की प्रथा धार्मिक और कुरानियों का दण्ड करने का आरम्भ तदार कर दिया। लिखित पुस्तिकाएँ के व समयके से और स्वतंत्रता के अन्तर्गत पुस्तिका। लिखित प्रथम की स्थापना राजा राममोहन राय ने की थी। वे अर्थों के समाज के धर्म में ना के अन्तर्गत पहुँचने समाज का नाथन अर्थों के अन्तर्गत विचार का महत्त्व किया था। इस प्रकार इस समाज ने भारतीय समाजों का प्रेरणा का दण्ड अन्तर्गत समाज का

समझकर उसे अपनाते वे स्याम पर उमादेवकी का दृढ़ निश्चय करें। महिला शिक्षा का प्रचार करने में भी ब्रह्म समाज ने बहुत परिश्रम किया। वास्तव में इस समाज का सबसे अधिक महत्त्व इसलिए है कि भाग्ये अपने वाले सुधारका और आन्दोलनों के लिए इन्होंने भाग्य प्रशस्त बना दिया इसी ढंग पर चलने से आन्दोलन सफल हुए। अथवा शुद्ध रूप से धार्मिक अथवा राजनतिक प्रादोलन न तो आरम्भ करना सम्भव था और न विदेशी सत्ता उन्हें भाग्ये बढने देती। इसलिए ब्रह्म समाज का महत्त्व सबसे अधिक माना जाता है।

आय समाज

भारत के दूसरे महान् आदोलन की स्थापना आय समाज' के रूप में सन १८७५ में महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सम्पन्न की। इस सस्या द्वारा भारत में प्रथम जन जागृति हुई। जनता में स्वाभिमान सस्कृति के प्रति सम्मान और स्वतन्त्रता प्राप्ति की भावना उत्पन्न हुई। स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म काठियावाड़ प्रांत में मोरवी ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम अबासकर और इनका जन्म नाम मूलशकर था। इनकी स्मृति बहुत अच्छी और बुद्धि प्रखर थी। अल्पायु में ही इन्होंने वेदा का अध्ययन समाप्त कर लिया था। सस्कृत व्याकरण का इन्होंने गहरा ज्ञान था। एक दिन शिवरात्रि की घटना से ही इनके मन में श्रुति हो गई। शिव जी की प्रतिमा की स्थापना और पूजा करने के बाद इन्होंने देखा कि एक चूहा शिव प्रतिमा का प्रसाद ले गया। उसी समय इन्होंने मोचा कि जो देवता अपनी ही रक्षा नहीं कर सकता और दूसरा की रक्षा क्या करेगा और मूर्ति पूजा का विरोध करने लग गये। इसके थोड़े समय पश्चात् परिवार में एक दो मृत्यु हो गई। इन सब घटनाओं से उनके मन पर गहरी चोट सी लगी और वे अधिक तपस्यता से विद्याध्ययन में लग गये और वेद, साहित्य, व्याकरण आदि सब का ज्ञान प्राप्त कर लिया। फिर भी शांति न मिलने पर सन १८५५ में वे अचानक घर छोड़कर चले गये और पन्द्रह वर्ष तक निरंतर पर्वत गुफा, नगर आदि स्थानों में घूमते रहे। मीन भी रहे, ब्रह्मचर्य से रहे केवल सस्कृत भाषा का ही उपयोग किया। अतः मथुरा में स्वामी विरजानन्द जी एक नेत्रहीन सत इह मिले और उनको गुरु बनाया। दो वर्ष तक स्वामी जी के चरणों में रहे और फिर दीक्षा प्राप्त कर अपने सिद्धांत का प्रचार किया।

यद्यपि नवीन अंग्रेजी शिक्षा से अनभिज्ञ थे तथापि सस्कृत, व्याकरण आदि के प्रकाण्ड पंडित थे। अपने उद्देश्यों को पूरा करने की दिशा में उन्होंने एक पुस्तक लिखी जिसे 'सत्यायप्रकाश' कहते हैं। यह आयसमाजिया का स्वामी जी द्वारा लिखित महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसमें आयसमाज के निम्न दस नियमों का प्रतिपादन किया गया है —

१ ईश्वर सत् चित् आनन्द है। वह निराकार, व्यापक, दयालु, सव्यक्तिमान, सबव्यापक एवं अमर है।

जक उन्होंने ईश्ट इतिहास कम्पनी में नौकरी की और अग्रेज गाइकों और व्यापारियों के सम्पर्क में आये। राजा रामनाथ राय का मूर्ति पूजा और कमकाण्ड में विश्वास नहीं हुआ इसलिए वे केवल एक परमात्मा की पूजा पुन प्रचलित करना चाहते थे। उन्होंने उन्होंने सन् १८१५ में ध्याननाथ और फिर २० अगस्त सन् १८१८ का 'ब्रह्म समाज' का स्थापना का। सन् १८२० के आरम्भ उन्होंने ईसाई धर्म पर एक पुस्तक भी लिखा था जिसमें यह लिख दिया कि ईसा का क्या कोई कथित है उन्होंने यह भी लिखा था कि 'यह स्वभाविक बात है कि विज्ञान जाति प्रथम अधीन जाति के धर्म की लक्ष्मी उजागर करती है स्वयं धर्मनाथन चिन्ता का सम्मान हा उत्तर ध्यान नहीं जाता।' यह अर्थों के धर्म प्रचार का प्रथम किन्तु बरारा उत्तर था। यह ही समय स्व समाज का उद्घाटन किया और २३ मिनस्टर सन् १८२३ का लिखित में उनका दृष्टान्त हा गया। किन्तु उनक द्वारा आरम्भ किया हुआ काम उनक मित्रों और अनुयायियों ने पूरा किया।

स्व समाज विद्वान् बहूत अन्तर्गत अर्थों और विचार के बात विचारित किए गए थे। इन समाज के मतनुसार ईश्वर केवल एक है। (एकेश्वरत्व) जा अज्ञानिमान है और न्याय का मन्त्रधार है। उनकी लगभग सच्चाई और संह के साथ नहीं आया, बल्कि मान्यता है। मूर्ति पूजा के विरुद्ध है तथा विश्व बन्धुत्व में विश्वास कर है। धर्मनाथ का धर्मनाथ में भी उनका विश्वास है। प्रायश्चित्त प्राय पातों से उत्कारा पाया जा सकता है। जाति पाति के ये लोग विराग हैं और धर्मनाथ में स्वभावता स्वीकार करते हैं। स्व समाज का धर्म बहूत अर्थ है स्वयं मूलमाना और ईसाई धर्मों के तथों का भा समाजक रूप है। वास्तव में इस समय किन्तु धर्म का अर्थों विचारना लगता और सगुणता बतानी ही आया थी। उनक दृष्टान्त के अन्तर्गत महर्षि इक्ष्वाकुनाथ टापर और बाबू कणकचन्द्र नेन ने इन सभ्यता का उत्तर दिया। इन समय ब्रह्म समाज ईसाई धर्म से प्रभावित मान रहा था क्योंकि ब्रह्म समाज की आस्थाओं ने ईश्वर विना नाम प्रापना समाज और धर्म समाज का गया जा अभी तक जाति है।

ब्रह्म समाज ने भारतीय समाज में अन्तर्गत शक्ति का जन किया है। इन मान्य में प्रचलित नूत विचार धर्मित रीति रिवाज सुशुद्ध समाजिक और के पूजा पाठ के आन्दोलन हुए हैं। सामाजिक सुधार आरम्भ हो गए। ईश्वर मन्त्र प्रथा का उत्तर विचार किया और सन् १८२६ में स्वयं उत्तर ईश्वर के नाम में निवेदन द्वारा यह सुझाया कि ईश्वर के नाम पर प्रार्थना करने का प्रथा धर्मित कई कुरानियों का दूर करने का वास्तविक उत्तर कर दिया। विवाह पुनर्विवाह के वे अनपेक्षित ही और स्वयं के धर्म पुनर्जी। अन्तर्गत धर्म का अन्तर्गत राजा रामनाथ राय ने भी का था। वे धर्मों के अर्थ में भी वे अन्तर्गत अन्तर्गत अन्तर्गत धर्मों रगते के विचार का समर्थन किया था। इन प्रकार स्व समाज ने भारतीयों का प्रेरणा दी है कि वे धर्मनाथ का

समझकर उसे अपना के स्थान पर उपासक के रूप में दृढ़ निश्चय करें। महिला शिक्षा का प्रचार करने में भी ब्रह्म समाज ने बहुत परिश्रम किया। वास्तव में इस समाज का सबसे अधिक महत्त्व इसलिए है कि आगे आने वाले मुधारका और आन्दोलन के लिए इन्होंने मार्ग प्रसास्त बना दिया इसी ढंग पर चलने से आन्दोलन सफल हुए। अथवा शुद्ध रूप से धार्मिक अथवा राजनीतिक आन्दोलन न तो आरम्भ करना सम्भव था और न विदेशी सत्ता उन्हें आगे बढ़ने देती। इसलिए ब्रह्म समाज का महत्त्व सबसे अधिक माना जाता है।

आर्य समाज

भारत के दूसरे महान् आन्दोलन की स्थापना आर्य समाज के रूप में सन् १८७५ में महर्षि दयानन्द सरस्वती ने बम्बई में की। इन सस्था द्वारा भारत में अप्रकृत जन जागृति हुई। जनता में स्वाभिमान संस्कृति के प्रति सम्मान और स्वतन्त्रता प्राप्ति की भावना उत्पन्न हुई। स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म काठियावाड़ प्रांत के मारवो ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम अबाशकर और इनका जन्म नाम मूनशकर था। इनकी स्मृति बहुत अच्छी और बुद्धि प्रखर थी। अल्पायु में ही इन्होंने वेदों का अध्ययन समाप्त कर लिया था। संस्कृत व्याकरण का उन्हें गहरा ज्ञान था। एक दिन शिवरात्रि की घटना से ही इनके मन में शक्ति हो गई। गिब जी की प्रतिमा की स्थापना और पूजा हटाने के बाद इन्होंने देखा कि एक चूना गिब प्रतिमा का प्रसाद ले गया। उसी समय इन्होंने सोचा कि जा देना अपनी ही रक्षा नहीं कर सकता और दूसरों की रक्षा बना करेगा और मूर्ति पूजा का विरोध करने लग गया। इसका छोटे समय पदचक्र परिवार में एक दो मृत्यु हो गई। इन सब घटनाओं से उनके मन पर गहरी चोट लगी और वे अधिक समयता से विद्याध्ययन में लग गये और वेद, याज्ञिक साहित्य, व्याकरण आदि सब का ज्ञान प्राप्त कर लिया। फिर भी शक्ति न मिलने पर सन् १८४५ में वे अचानक घर छोड़कर चले गये और पन्द्रह वर्ष तक निरन्तर पर्वत, गुफा, नगर आदि स्थानों में धूमन रहे। मौन भी रहे, ब्रह्मचर्य से रहे, केवल संस्कृत भाषा का ही उपयोग किया। अंत में मथुरा में स्वामी विरजानन्द जी एक नश्वरान्त सत इन्हें मिले और उनका गुरु बनाया। दो वर्ष तक स्वामी जी के चरणों में रहे और फिर दीक्षा प्राप्त कर अपना सिद्धांत का प्रचार किया।

यद्यपि नवीन अग्रणी शिक्षा से अनभिज्ञ थे तथापि संस्कृत, व्याकरण आदि में प्रकाण्ड पंडित थे। अपने उद्देश्यों का पूरा करने की शिक्षा में उन्होंने एक पुस्तक लिखी जिसे 'सत्यायप्रकाश' कहते हैं। यह आर्य समाजियों का स्वामी जी द्वारा लिखित महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसमें आर्य समाज के निम्न ढंग नियमों का प्रतिपादन किया गया है —

१ ईश्वर सत् चिन्मय आनन्द है। वह निर्गुण, नाश्वर, दयानु, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक एवं अमर है।

२ ईश्वर ही पान का परम कारण है ।

३ वर ही पान का भण्डार है तथा प्रत्येक भाय का इनका अध्ययन करना चाहिये ।

४ प्रत्येक व्यक्ति मृत्यु ग्रहण करे तथा भ्रमण को त्याग ।

५ प्रत्येक काय उमर शौचिव्य का ध्यान म रखकर ही करना चाहिए ।

६ गमात्र का उद्दय मानव जाति की हर प्रकार की उन्नति करना है ।

७ प्रत्येक क माय उमर गुणा क अनुसार प्रेम और वाप्यून व्यवहार करना चाहिए ।

८ धविभा का नाग और विद्या का प्रचार करना चाहिए ।

९ प्रत्येक का मवभाषारण की उन्नति म हा अपनी उन्नति ममभ्ता चाहिए ।

१० व्यक्तिगत विषया म प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्र हाना चाहिए और सामाजिक कार्यों क त्रिण परम्पर म नना दन चाहिए ।

इस अतिरिक्त मूर्ति पूजा का मन्त्र वर का मृत्यु का मन्त्र और उनक डारा कम और पुत्रजम क मिद्वान का ममदन प्राचीन कमवाण और पुरोहित्या का विराध भा उनक मिद्वान हा थ । गद्धि छा त्रन द्वारा वास्तव म स्वामी जी न त्रिदू धम का बना लिया । अभी नह त्रिदू धम म जान वाता का पन अपनात का माग रण था । स्वामी जा क गृद्धि छागतन द्वारा धनूतपूज प्राति हृद् और त्रिदू धम का एना मजावनी प्राप्त था गर्द्दि नि ताथा त्रिदू धमूत तो धम परिचिन कर क पछना रण थ पन त्रिदू धम प्रदान कर लिया । यण रण प्रायना तमग छाति का पन प्रचार गन गया । आयममात्र क प्रचार म स्वामी त्वानत मरम्बना का त्रज मुहोत और स्वस्य तरार प्राकपक व्यक्तित्व और विनमण वक्तव्य गक्ति न बहुत काम किया । उन्नत रण नि जाति पाति ध्यय है । स्त्रिया का ममात्र म ममान स्थान मिनना चाहिए और गिणा प्रणात्री भा प्राचीन परिषात्री क अनुसार हानी चाहिए । मन १८७२ म कतवत्ता जान पर स्वामी जी न दरदनाय ठाकुर और कवचन्द्र मन म नी वातानाय किया और सब म त्रिणी बोचना प्रारम्भ कर लिया । अब क अधिक जनता क मन्त्र म आय । रात्रस्थान म जब स्वामी जो पघारे तो राजा महाराजाभा न नी उनका स्वागत किया । महाराणा मजामिह जी न उमा ममय उनक प्रभाव म राय का काम काज हिन्दी म प्रारम्भ कर रण को प्राणा प्रपित कर नी थी । क वास्तव म निभय आमविवासा और परम ईश्वर भक्त थ ।

स्वामी दयान मरस्वती ने अपनी कक्षा आयसमात्र द्वारा अय सभात्र मुधार के कार्यों म भा सफलता प्राप्त की । प्राचीन और नवीन रण की शिक्षा सस्थाभा की स्थापना और कयाभा की शिक्षाभा का विधेय प्रवध, वात विवाह पनी और त्रहृज प्रथा का निवारण छाति भी द्य स्थान म किया । श्री हसरज लाता लात्रपतराय और अय लोगों न हम काय म वर्य मह्याग लिया । मुकुल (कागडी) की स्थापना १९०२ म हृद् । जानघर में कया महाविद्यालय की स्थापना की गर्द्दि ।

इनके अतिरिक्त अपनी सस्था के समाचार-पत्र निकानना, अनाथ बालकों की रक्षा के लिए अनाथालया की स्थापना, विधवा आश्रम और महिला आश्रमों (Rescue Homes) की स्थापना तथा राष्ट्रीय सेवा सम्मन्धी सगठना की स्थापना में भी ये सस्थाएँ जुटी रहीं। यही कारण है कि मुस्लिम और ईसाई धर्मों की बाढ का प्रकोप रूक सका। आयसमाज ने हिंदुओं को सचेत कर समर्थ बना दिया। अभी तक हिंदू बहुत सीधा साधा जीव था जिस हर प्रकार और धर्म के लोग जो चाहें मुना देते थे। आयसमाज ने उसमें पुष्टत्व का बोध करा दिया और शेष सब लोग उसका प्रकाश से चौंधियाए लगे। इसका अतिरिक्त आयसमाज न सबसे बड़ी सेवा राष्ट्रीय आन्दाना को जाग्रत करने में की। स्वराष्ट्र की भावना हिन्दी भाषा का विकास और अपनी ससृति में स्वाभिमान अपरोक्ष रूप से स्वतन्त्रता की ओर चलने के सोपान थे। इस प्रकार आयसमाज न भारत की अद्भुत सेवा की है।

रामकृष्ण मिशन

इसी सस्था को वेदान्त समाज भी कहते हैं। यह सस्था बंगाल के प्रसिद्ध महात्मा रामकृष्ण परमहंस के नाम पर उनके अदभुत एव परम गिष्य स्वामी विवेकानन्द द्वारा सन् १८९७ में स्थापित की गई थी। इसका मुख्य उद्देश्य परमहंस स्वामी रामकृष्ण के उपदेशों का प्रसार करना था। पहले स्वामी विवेकानन्द नास्तिक थे किन्तु परमहंस के साथ रहने पर ईश्वर में विश्वास करने लगे। सन १८९२ में इन्होंने गुरु के सिद्धांतों का प्रचार आरम्भ कर दिया था। सन् १८९३ में वे विश्व के सर्वधर्म सम्मेलन में भाग लेने शिकागो (अमेरिका) गए। वहाँ सर्वप्रथम पश्चिमी देशों के लोगों को वेदान्त की महत्ता स्वामी जी ने प्रकट की जिसे सुन कर सब लाग चकित हो गये। विदेशों में हिंदू धर्म का सदेश पहुँचाने का बहुत बड़ा कार्य स्वामी जी ने किया। पुनः भारत आकर उन्होंने वेदान्त समाज का सगठन कर समाज सेवा आरम्भ की। स्वामी जी की वेदान्त व्याख्या बंगाली और हृदयस्पर्शी वाणी में बड़ा चमत्कार था। वे स्वयं कमठ सभाओं में धुरधर विद्वान और वेदों के प्रकाण्ड पण्डित थे। वे देश विदेश सर्वत्र भ्रमण कर आय थे इसलिये पूव और पश्चिम की सम्पत्ता के सम्बन्ध में इनका बहुत महत्त्वपूर्ण योग रहा है।

रामकृष्ण मिशन का प्रधान कार्यालय बँलूर मठ में है और इसकी शाखाएँ देश के भिन्न भिन्न स्थानों एवं विदेशों में सगठित की हुई हैं। आध्यात्मिक शिक्षा की दृष्टि से मिशन सस्त और अनमोल साहित्य का प्रकाशन करता है। यह मिशन किसी धर्म विषय का प्रचार नहीं करता चाह इसका दृष्टिकोण वैश्वान्ती है। इसमें सभी धर्मों को समान दृष्टि से देना जाता है। मिशन सेवा कार्य पर अधिक बल देता है। चिकित्सालय विद्यालय आदि चलाना अवाल भूकम्प, बाढ आदि आपत्तियों के समय जनता की सेवा करना, छुद्राडूत का निवारण, बालविवाह को रोकना, स्त्रियों की सेवा सुधारना आदि कार्यों में मगलन रहता है।

इस मिशन के आधारभूत सिद्धान्तों का वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है

कि परमहंस जी का विद्वान था—ईश्वर निराकार है तथा मनुष्य के पान में परे है किन्तु प्रत्यक्ष बस्तु में ईश्वर विद्यमान है। गंगार का प्रत्यक्ष काय ईश्वर के द्वारा ही सम्पादित होता है। गंगार के मंत्र धर्म गमान है इगणिए धर्म परिवर्तन व्यय है प्रत्येक व्यक्ति को धर्म ही धर्म का धारण करना चाहिए। प्रत्यक्ष धर्म अच्छा है। गामाय ईश्वरीय है। सिद्ध गम्यता गंगार में गवयच्छ और धर्मि प्राचीन है। यही धर्म और धर्म दाना है। इसमें ग व गिव-मुत्तरम् की अनुमति है। पारचाय जगत् भौतिकवादी है और भारत अध्यात्मिक, इगणिए भारत ही गन्ध जगत्गु रण है और रण्य।

इस प्रकार के धर्म और गमान का प्रभाव भारत में और विदेशों में होना स्वाभाविक था। यद्यपि स्वामी जी स्वयं बचन उनका वय की आयु में ही गंगार छोड़ गये किन्तु इस अल्पकाल में ही उक्त प्रभाव रचना अधिकांश गंगार का कि पुराण और एगिया उनका उपचार में कभी उल्लेख नहीं हुआ मङ्गल। उद्धान भारत में आत्मगौरव की भावना जागृत की और धर्म की गन्मृति रनिगाम और अध्यात्मिकता का धार रण्य अध्यात्म आकर्षित किया। इस प्रकार इस विधान ने धर्म गमान और राजनीति तीनों क्षेत्रों में गंगान् सुधार किया।

थियोसोफिकल समाज

इस गमान की स्थापना सबसे प्रथम अमेरिका के यूसाक नगर में सन् १८७१ में हुई थी। श्रीमती स्त्रायलस्की (स्त्री मन्त्रि) और कनन अंतर्कांत (धर्मराज्ञी) इस संस्था के जन्मदाता थे। ये दोनों प्रत्यक्ष विद्या के अच्छे जानकार थे। बाद में ब्रह्म विद्या की धार इनका भूतक दुष्प्रभाव था। इनके विचार बड़े उदार और निमत थे। इनका विचार था कि समूचा विश्व विद्या की स्त्री याज्ञना पर आधारित है और प्रत्यक्ष धर्म तथा राष्ट्र उन्नी क्रम का व्यक्त करता है। विगी भी धर्म का दूसरा ही विरोध नहीं हो सकता। सन् १८७६ में ये दोनों हिट्टुमनल में आय और मद्रास के निकट उड्यार धाम में धर्मना समाज स्थापित कर लिया। कनल अंतर्कांत ने समस्त रण का धर्मना किया और गद्द आपत्ति की वि प्रचारका द्वारा ईशार्द्ध धर्म भारतवागिया पर जबरन धारा जा रहा है यह विचार धर्म के विरुद्ध है। ये लोग मानते थे कि सत्र धर्मों में सत्य का तत्त्व है और भारत के धर्म में यह तत्त्व विगय रण्य है।

इग्लैड में एनीरीगैट नामक एक आन्तरिक महिला रण्य संस्था का गन्ध बननी और सन् १८६३ में गगन्नग छिपानाम वय की धर्मस्था में बहू भारत आइ। वह भारत के हिन्दू धर्म में बहुत प्रभावित हुई। उसने गाढा पहनना और ब्राह्मणा की भांति भावन धारि प्रारम्भ कर लिया। सिद्ध तीर्थों का यात्रा री। उस कर्णा बहुत अच्छा रण्य और बर्ती र्दत्त रण्य। यहाँ उसने कर्दाय हिन्दू वातज की स्थापना का और गीता का अध्यात्म अनुवाद किया। उद्धाने सिद्ध धर्म स्वीकार कर लिया और बर्तान के आदर्शों का प्रचार करने लग गई।

धियोमोफिकल समाज वास्तव म सर्वधर्म समाज है। पश्चिम के भौतिकवाद और हिन्दुधर्म के अंध विश्वास का यह विरोधी है। यह विश्व बंधुत्व म विश्वास करता है और सब मनुष्या की समानता का समर्थक है। ईश्वर की एकता और सर्वव्यक्तिमत्ता म इनका विश्वास है। आत्मा की धर्मरता और पुनर्जन्म के सिद्धांत की मानता है और बंधुता और गान्धि जीवन व आदर्श मान जाते हैं। सामाजिक क्षेत्र म, जाति पाति का विरोध स्थिया की दगा सुधारन म योग और शिक्षा द्वारा चतुर्धता वंशान का काय किया है। राजनितिक क्षेत्र मे भी डा० मिमज वीसन ने घोषणा की थी कि भारतवर्ष के स्वामी भारतीय ही हैं अत उहें स्वराज्य (Home Rule) प्राप्त होना ही चाहिए। वास्तव म भारत म इन समाज की सफलता का अर्थ श्रीमती एनीबीसेंट को ही है। सन १९१४ म भाषण करते हुए उहान कहा था कि निरन्तर ४० वर्ष के चिन्तन और मनन के बाद म इस परिणाम पर पहुंची हूँ कि हिन्दू धर्म से बढ़कर वैज्ञानिक, दार्शनिक और आध्यात्मिक धर्म सभार म कोई दूसरा नही है।

अर्थ सुधार आन्दोलन

हिन्दू समाज के उपरोक्त आन्दोलनके अतिरिक्त राधास्वामी मत्स्य प्राथना समाज, देव समाज आदि का उल्लेख भी किया जाना है। किन्तु वास्तव म ये देश-व्यापी आन्दोलन नहीं थे। इनका प्रभाव एक सीमित क्षेत्र म रहा है इसलिए इहें केवल प्रादेशिक आन्दोलन के रूप मे ही स्वीकार किया जाता है।

राधास्वामी मत्स्य—इसकी स्थापना सन् १८६१ ई० म श्री गिबदयाल जी महाराज ने की थी। इस समय भी इसका कार्यक्षेत्र दयालवाग आगरा म ही सीमित है। परन्तु समाज व शिक्षा के क्षेत्र म इस सस्था ने खूब सेवा की है। इसके प्रमुख सिद्धांतों के अनुसार ईश्वर पूर्ण है और आत्मा ही ईश्वर है। ईश्वर की प्राप्ति म विश्वास करते हैं। आत्मा का पुनर्जन्म का सिद्धांत मानते हैं और गुरु को ईश्वर का अवतार मानते हैं। इनका जाति पाति म विश्वास नही है। आगरा म कातेज, ब्रुपि और दूसरी सस्थायें अब भी संचालित हैं।

प्राथना समाज—यह सस्था ईश्वर की पूजा और आराधना के लिए ही सन् १८६७ म डा० पांडुरंग के नेतृत्व म बम्बई मे स्थापित की गई। इसके दो उद्देश्य थे—ईश्वर पूजा और समाज सुधार। इन लोगो पर ब्रह्म समाज का बहुत प्रभाव रहा है। इस समाज ने मजदूरों के लिए रात्रि-पाठशालाएँ दलित जातियों के उद्धार के लिए अति उदार मित्तन स्त्री शिक्षा के लिए महिला विद्यालय अनाया के लिए अनाथानय आदि की स्थापना की है। जस्टिस एम० जी० रानाड और डा० चार० जी० भण्डारकर इनके प्रमुख मदस्था म से थे। जस्टिस रानाड ने समाज-सम्मेलना की प्रथा चलाई और एक पत्र 'इंद्र प्रकाश' चला कर जागृति म योग दिया। गोखले तिलक और गणेश आगारकर भी इसके सदस्य थे। फर्गुसन कालेज की स्थापना एक छोटी सी पाठशाला के रूप म, इनी सस्था ने की थी। बालविवाह बंद करना,

के सम्बन्ध से बाट म सामाजिक और राजनीतिक सभी क्षेत्रों म सुधार का कार्य प्रारम्भ हुआ । श्रीमती सरोजिनी नायडू, सरला देवी, कमला देवी, प० विजय लक्ष्मी पंडित इंदिरा गांधी आदि ने यह कार्य पूरी लगन से शुरू किया । सन् १९१७-१८ म सर्वप्रथम राजनतिक अधिकारों की मांग की और इनके ऊपर कहे गये अनक आन्दोलन प्रारम्भ हो गये । सन ४६ म नवीन सविधान बनाने के लिए जो सभा बनी उसम दस स्त्रियाँ भी सम्मिलित बनी और आज बहुत सी स्त्रियाँ मन्त्रिणी राजदूत सचिव कलक्टर, कबाल, प्रोफसर आदि अनक पदा पर कार्य कर रही हैं ।

यही नहीं थमिका का दगा सुधारन म भी गांधी जी ने योग दिया है । अभी तक माकम के प्रभाव म थमिक पूजापतियों की घृणा की दृष्टि से देखते थ और पूजापति थमिका से भयभीत रहते थे । गांधी जी ने 'सर्वोप्य सिद्धांत दकर और दृष्टीगिप के सिद्धांत क द्वारा समाज मे स घृणा का वानावरण दूर किया और प्रेम का साम्राज्य स्थापित किया था ।

मुस्लिम सुधार आंदोलन—हिंदू समाज की भांति ही मुस्लिम समाज म भी बहुत सी कुरीतियाँ उत्पन्न हो गई थी । मुस्लिम समाज वस भी प्रारम्भ स अनदार अधिक रहा है और आधुनिक शिक्षा का अभाव भी था । इसके अनिरिकन यहाँ अधिकतर एस मुसलमान थे जो पहल हिंदू थे । इसलिए अनक दाप उत्पन्न हो गए और उनका निवारण करने के लिए मुसलमानों म भी सुधार आंदोलन हुए । उनमे से मुख्य निम्नलिखित थ हैं—

(१) अलीगढ़ आंदोलन—यह आन्दोलन सर सयद अहमद खान चलाया था । उनका विश्वास था कि मुस्लिम जगत दा कारण स पतित हाता जा रहा है । पहला यह कि अयज हम मने १८५७ के विद्रोह के लिए उत्तरदायी समझते हैं और हमस अपसन्न हैं और दूसरा यह कि हम लाग रुद्धिवादी और अंध विश्वासी हैं और शिक्षा का अभाव है । इही दोना दृष्टियाँ को दूर करने के लिए उतान यह आन्दोलन चलाया था । अयजा को पूण स्वामिभक्ति का विश्वास दिया और सन १८७५ ई० म अलीगढ़ म ही मोहमडन एंग्लो प्रोरिएण्टल कालेज की स्थापना का कार्य किया । वही आज यूनिवर्सिटी के रूप म बन गया है ।

(२) बहावी आंदोलन—यह आंदोलन अरब म चला था । उमी का प्रभाव अरबतवष म भी आ गया । इसके नेता थी सयद अहमद खान बलबी थ । ये भी अपन समाज को सुधारना चाहते थे । उन्होंने ईस्वर की एकता और उमकी पूजा पर दल दिया और उम निराकार भी माना । वे पश्चिमी गिना और सम्पता के विरुद्ध थे और राजनतिक दृष्टि से पुन मुस्लिम साम्राज्य स्थापित करना चाहते थ । बंगाल म इसका प्रभाव अधिक था । निखा और अयजा स वे बहूत लक्ष और बाट म अयजा ने एस आन्दोलन का धुरा तरह दवा दिया था ।

(३) अहमदिया आंदोलन—इसके संस्थापक मिर्जा गुलाम अहमद (१८३९-१९०८) थ । ये पनाब म वात्थियाता के निवासी थे । वे स्वय ईस्वर हान का दावा करते थ और इस्लाम धर्म के सुधार के लिए प्रयत्नशील थे । अन्य विश्वास

का वे खण्डन करते थे ये पुरातन वादी थे और पदों, तलाक, बहु विवाह और अय प्रथाया के समयक य । य ईसा और विष्णु के अवतार भी बनते थे । इनकी मृत्यु के बाद अनुयायिया मे फूट पड गई, कुछ इन्हें 'नवी मानते थे और कुछ केवल सुधारक । इनका प्रभाव अथिक नही हुआ ।

इन सुधार आन्दोलना के फलस्वरूप मुसलमाना म चेतना और जागृति अवश्य हुई और पश्चिमी शिक्षा का प्रसार भी हुआ ।

अभ्यास के लिए प्रश्न

- १ भारत के धार्मिक और सामाजिक आन्दोलनों पर निबन्ध लिखिए ।
- २ आय समाज के सिद्धांत और सफलता पर अपने विचार लिखिए ।
- ३ ब्रह्म समाज आन्दोलन का महत्व और योग समझाकर लिखिए ।
- ४ 'वेदांत समाज की स्थापना और सफलता का वर्णन कीजिए ।
- ५ संक्षिप्त टिप्पणिया लिखिये —

- | | |
|-------------------------|---------------------------|
| १ महिला सुधार आन्दोलन । | २ मुस्लिम सुधार आन्दोलन । |
| ३ राधा स्वामी सत्संग । | ४ प्राथना समाज । |

के सम्बन्ध से वाट् म सामाजिक और राजनतिक समीक्षत्रा म मुधार का काय प्रारम्भ हुआ । श्रीमती सराजिनी नायडू, सरना दवी, कमला दवी, १० विजय लक्ष्मी पण्डित इतिरा गांधी आदि ने यह काय पूरी लगन स गुण किया । सन् १९१०-म सवप्रथम सामनिक अधिकारा की मांग की और इनक ऊपर कह गय अनक आन्दोलन प्रारम्भ हो गये । सन ४६ म नवीन मविधान बनान क लिए जो सभा बनी उसम दस स्त्रियाँ भी सस्य बनी और आज बहुत ही स्त्रियाँ मत्रिणी राजदून, सचिव कलाटर बकाज, प्रोफसर आदि अनक पता पर काय कर रही हैं ।

यही नही श्रमिका की दगा मुधारन म भी गांधी जी ने योग दिया है । श्रमी तब मात्रक के प्रभाव म श्रमिक पूजोपतिर्या की घृणा की दृष्टि से दलत थ और पूजोपति श्रमिका म भयभीत रहत थे । गांधी जी न 'सर्वोप्य' सिद्धात दकर और 'ट्रस्टीशिप' के सिद्धात क द्वारा समाज म स घृणा का वातावरण दूर किया और प्रेम का साम्राज्य स्थापित किया था ।

मुस्लिम मुधार आन्दोलन—हिंदू समाज की भाति ही मुस्लिम समाज म भी बहुत ही कुरीतियाँ उत्पन्न हो गई थी । मुस्लिम समाज बँस भी प्रारम्भ स अनुदार अधिक रहत है और आधुनिक शिक्षा का श्रमाय भी था । दसक अनिरिकत यहाँ अधिकार एस मुसलमान थे जा पहल हिंदू थे । समिए अनक दाप उत्पन्न हा गए और उनका निवारण करन क लिए मुसलमानों म भी मुधार आन्दोलन हुए । उनमें से मुख्य निम्नलिखित म हैं—

(१) अलीगढ़ आन्दोलन—यह आन्दोलन सर सयद अहमद खान चलया था । उनका विश्वास था कि मुस्लिम जगत दो कारण स पणित हाता जा रहा है । पहला यह कि अरज हम सन १८५७ के विद्रोह के लिए उत्तरदायी समझन हैं और हमस अशरतन हैं और दूसरा यह कि हम लोग स्त्रियाँ और अशरतवासी हैं और शिक्षा का श्रमाय है । इही दाना कुरीतियाँ को दूर करन क लिए उहाँन यह आन्दोलन चलया था । अरजा को पूण स्वामिमक्ति का विश्वास दिलाया और सन् १८७१ ई० म अलीगढ़ म हा मोहमदन एंग्लो आरिएण्टल कालेज' की स्थापना का काय किया । बनी आज यूनिवर्सिटी क रूप म बन गया है ।

(२) बहावी आन्दोलन—यह आन्दोलन अरज म चलता था । उसी का प्रभाव भरतवर्ष में भी आ गया । इसक नता था सयद अहमद सर खतवी थ । ये भी अरज समाज को सुधारना चाहत थे । इहाने ईस्वर की एकता और उसकी पूजा पर दल दिया और उसे निराकार भी माना । क पन्थिमी शिक्षा और गम्पता क विरुद्ध थ और राजनतिक दृष्टि म पुन मुस्लिम सामन स्थापित करना चाहत थ । बगान म इसना प्रभाव अधिक था । शिक्षा और अरजा म क बहुत लक्ष और वाट् म अरजा ने हम आन्दोलन का पूरी तरत् देवा दिया था ।

(३) अहमदिया आन्दोलन—इसक उस्थापक मिजा मुताम अहमद (१८३९-१९०८) थ । य अरज म कानियाना क निवासी थ । क सय ईस्वर हात का दावा करत थे और इस्नाम धम क मुधार क लिए प्रयत्नगीन थ । साथ विश्वास

का वे खण्डन करते थे ये पुरानन वादी थे और पत्नी, तलाक, बहु विवाह और अश्रम प्रथाओं के समर्थक थे। य ईसा और विष्णु के अवतार भी बनते थे। इनकी मृत्यु के बाद अनुयायियों में फूट पड गई, कुछ इन्हें 'नवी' मानते थे और कुछ वेवल सुधारक। इनका प्रभाव अधिक नहीं हुआ।

इन सुधार आन्दोलन के फलस्वरूप मुसलमानों में चेतना और जागृति अवश्य हुई और पश्चिमी शिक्षा का प्रसार भी हुआ।

अभ्यास के लिए प्रश्न

- १ भारत के धार्मिक और सामाजिक आन्दोलनों पर निबन्ध लिखिए।
- २ श्राय समाज के सिद्धांत और सफलता पर अपने विचार लिखिए।
- ३ ब्रह्म समाज आन्दोलन का महत्व और योग समझाकर लिखिए।
- ४ 'वेदान्त समाज' की स्थापना और सफलता का वर्णन कीजिए।
- ५ सक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिये —

- | | |
|------------------------|--------------------------|
| १ महिला सुधार आन्दोलन। | २ मुस्लिम सुधार आन्दोलन। |
| ३ राधा स्वामी सत्संग। | ४ प्रायना समाज। |

राष्ट्रीय आन्दोलन (१८५७-१९४७)

प्रस्तावना—अंग्रेजों के शासन के पहले भारतवर्ष मान की चिड़िया बहलाना था। यहाँ धन धाय के भंडार भरे थे दूध घी की नदियाँ बहती थी चारा घास समृद्ध थी। शिक्षा स्वास्थ्य और श्रम का वादन्त्य था। सहयोग और मन्त्रारिता का वातावरण था। वेपन का प्रचार था। परस्पर नागरिक स्नेहमय जीवन व्यतीत करते थे किंतु नियान का चक्र मूर्ख गतिमान रहता है। जो दंग इतना उँचा उठा उसका पतन भी होना था। दंग का राष्ट्रीय जीवन अस्त-व्यस्त हो गया। समाज में कुरीतियाँ फैल गई। शासन व्यवस्था ढँकाडोल हो गई। खण्ड मण्ड शेरर मंग म अन्व राज्य और उपराज्य बन गए। विदगी लाग दंग में घुमने लगे। परस्पर ह्यो अरम्भ हुई। फ्रान्सीसी, पुनगाली और अंग्रेज मुख्य थे। अतः म अंग्रेजों ने अपना एकदम राज्य स्थापित किया। परंतु अंग्रेजों के भारत प्रवेश से भारतीय शासन और सत्ता को गहरा घनका लगा और उमी के फलस्वरूप सन १८५७ का प्रथम क्रांति के दंगन हुए।

ब्रिटिश शासन की स्थापना—दीर्घकाल से भारत अपने व्यवसाय के लिए विख्यात था और यहाँ की वस्तुएँ समार के बट बड बाजारा में अच्छे मूल्य पर स्वीकार की जाती थी। इसलिए अंग्रेजों लोगो की भागतवप के साथ व्यापार करन की उत्कण्ठा तीव्र हुई और सन १६०० में उन्होंने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के नाम में महारानी एलिजाबेथ से अना पत्र प्राप्त कर लिया। यहाँ व्यापार के लिए ही के वास्तव में आए थे किंतु स्थानीय शासकों के परस्पर मध्य की स्थिति देखकर उन्होंने लाभ उठाया और राजनतिक सत्ता पर एकाधिकार जमा लिया। अन्व विदगी भागा को बलपूर्वक निस्सज बना दिया और धार धीरे निकाल लिया। सन १७६१ में कम्पनी का दीवानो अधिकार भी मिल गए और शासन की सत्ता प्राप्त हान गयी। फिर रेयूनेटिंग एक्ट पिट का भारतीय एक्ट और अन्व ससनीय अधिनियम बनने गए और शासन अच्छी तरह जम गया और ब्रिटिश ससद के अधिनियमों से संबलित शासन आरम्भ हो गया।

सन १८५७ की क्रांति—यद्यपि सन १७७७ से लेकर १८५७ तक सम्पूर्ण भारत अंग्रेजों के प्रभाव में आ गया था समस्त क्षेत्रों में अंग्रेजों का असर था किंतु भारतीय अपनी जाती हुई स्वतंत्रता को खुल नत्रा से देख और समझ रहे थे। एमी स्थिति में अन्व कई ऐसे तत्व उत्पन्न हो गए जो ज्वाला का चक्र घ करन वात थे और अतः म 'कारतूम के आविष्कार ने तो चिनगारी का कार्य करके क्रांति की ज्वाला ही धक्का दी। इन सभी तत्वों का अध्ययन हम सत्य में करेंगे।

राजनतिक दृष्टि से तत्कालीन सम्राट बहादुरशाह का गद्दी से हटाना, अवध

को अंग्रेजी राज्य में मिलाना लाड डलहीजी की नीति द्वारा सतानहीन शासकों के राज्यों को समाप्त करना (Policy of Lapse), आदि कारण बचे हुए शासकों में भविष्य की दृष्टि से असंतोष उत्पन्न करने में सहायक हुए और फनस्वरूप तत्कालीन ब्रह्मशाही शासक बगैर पेशवा, नाना साहिब तात्या टापे आदि क्रांति का निणय लेने के बाध्य हुए। आर्थिक क्षय में कुटीर उद्योग नष्ट हो जान में वेकारी फन गई, वृषण का शोषण होने लगा, कच्चा माल इगलड जाने लगा और भारतवर्ष अपनी आवश्यकता की वस्तुओं में बनाने योग्य न रहा। ऐसी स्थिति में अंग्रेजों के प्रति अविश्वास का वायुमण्डल बन गया और भलाई के काम भी सदेहमय दिखाई दिए। सती प्रथा बंद करना धर्म में हस्तक्षेप माना गया रेनो का प्रचार धमझप्ट करने और छूपाछूत को मिटाने का उपाय समझा पश्चिमी शिक्षा के प्रति अन्याय होना लगा और साथ हीसाई धर्म के प्रचार ने सबको हीसाई बनाने की बात की पुष्टि कर दी। हमने अतिरिक्त सेना में गोरे और काले के भेद के माथ पद, रहन महन और बतन का भी भेद होना लगा बाइबिल का अध्ययन दाढी मूक मुग्ना समुद्र पार जाना आदि जहरी स वना दिए और फिर कारतूया का प्रयोग जा गाय या सूपर की चर्बी से बनाए गए कहे जाने थे और मुह से खोलने पडत थे उनसे द्वारा तो धीरे असंतोष की ज्वाला एकदम भडक उठी।

१० मई सन् १८५७ को मेरठ के सिपाहियों ने क्रांति की थी। जहाँ-जहाँ अंग्रेजी सेनाएँ थी वहाँ हिन्दुस्तानी सनिका ने अग्रणी गुरु कर दी। जनता सानका के साथ थी और साम त बगैर इनका समर्थन किया। मुगल सम्राट बहादुरशाह पेशवा नाना साहिब, बिहार के कन्नरसेन और भाँसी की रानी लक्ष्मीबाई ने खुलकर इस क्रांति का नतत्व किया। बहादुरशाह को पुन दिल्ली मन्नाट घोषित कर दिया। यत्र तत्र अंग्रेजों को मारकर भारतवासियों ने अपना आधिपत्य जमा लिया। दिल्ली, उखनऊ वाराणसी, मालवा और भाँसी आदि में क्रांति का विकट रूप था। राजस्थान में भी कोटा, आहुवा और कुछ दूसरे स्थानों पर भयकर काण्ड हुए और कुछ समय के लिए स्थानीय अधिकारियों की सत्ता स्थापित हुई किन्तु फिरंगियों की गति, शस्त्रास्त्र अधिक प्रभावी थे और इसमें भी अधिक वे नीति निपुण थे। भारत के इतिहास का उन्होंने अध्ययन ध्यान से किया था। विभीषण, जयचंद आदि चरित्रों से वे परिचित थे। इन गोरखा, मिक्स और कुछ भारतवासी प्राचीन शासकों को अपनी ओर मिलाने में किलम्ब नहीं हुआ। अंत में सधप समाप्त हो गया। बड़ी कठोरता और निदयतापूर्वक भारत में दमन चक्र चला। क्रांति के समस्त सेनानी निहत्तर बित्तर हो गए। अनेकों की जीवन लीला समाप्त हो गई। घोषे स तात्या टोपे गिरफ्तार करवा दिया और अंग्रेजों ने उमें फाँसी चला दिया। क्रांति सम्बन्धित सभी लोगों को फाँसियाँ दीं और अन्य पीडाएँ पहुँचाई गईं। यद्यपि क्रांति असफल रही किन्तु इसका प्रभाव बहुत गहरा हुआ। भारत की यही प्रथम क्रांति थी।

इस क्रांति के बाद महारानी विक्टोरिया ने घोषणा की कि हम सब धर्मों को समान समझते हैं और भारतवासियों के हित के लिए शासन चलायेंगे। राजाशा के

कांग्रेस की स्थापना हुई। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि तत्कालीन गवर्नर जनरल लाड डफरिन इस प्रकार की सस्था का संगठन चाहत थे और इसीलिए उन्होंने मि० ह्यूम से यह विचार प्रकट करते हुए यह कहा था कि उनकी ऐसी भावनाओं को वे उस समय तक गोपनीय रखें जब तक लाड डफरिन इस पद पर और भारत में हैं। इंग्लैंड के प्रमुख नागरिका की शुभ कामनाएँ एकत्र करने का श्रेय भी श्री ह्यूम को है और इसकी स्थापना के बाद लगभग सन् १८६० तक जहाँ जहाँ कांग्रेस के अधिवेशन हुए वही के गवर्नरों द्वारा आगतुका की प्रीतिभोज या अल्पाहार दिया जाता रहा। सरकारी पदाधिकारी भी इसके सदस्य बनने के लिए स्वतंत्र रहे। इस प्रकार सन १८८५ में स्थापित होकर सन् १८६० तक यह सस्था सब लोग के सहयोग से उन्नति करती गई। प्रथम अधिवेशन पूना में हुआ और देश के विभिन्न भागों से ७२ प्रतिनिधि आए और फिर प्रत्येक अधिवेशन में सदस्या और प्रतिनिधियों की संख्या बढ़ती गई।

कांग्रेस में उपद्रव—जब धीरे धीरे कांग्रेस की प्रगति पूणरूपेण राष्ट्रीय मान पर होने लगी तो अंग्रेज समर्थक सावधान होने लगे और इसकी प्रगति में सहायता के स्थान पर बाधाएँ डालने लगे। शासन का व्यवहार कठोर होने लगा। राज्य कमचारियों पर सदस्यता के लिए बन्धन लगाए जाने लगे। परंतु कांग्रेस आगे बढ़ती ही गई। अंग्रेजों का शासन भी धीरे धीरे नए एकट बनाकर दण्टा ला रहा था। ऐसी स्थिति में कांग्रेस ने अपने अधिवेशनों में शासन की आलोचना आरम्भ की। १८६१ के एकट के बाद यहाँ प्रतिनिधित्व प्रणाली को स्थान दिया जा रहा था किन्तु फिर भी १८६२ के लाहौर अधिवेशन में गोखले ने निराशा व्यक्त की। अध्यक्ष दादाभाई नोरोजी ने शांति और धैर्य रखने की बात कही और अंग्रेज सत्स्या का भी यही विचार रहा। अभी तक कई अंग्रेज भी कांग्रेस के अध्यक्ष बन चुके थे। परंतु अब धीरे धीरे धारणाएँ बदल रही थी। देश में अकाल और प्लेग का प्रकोप फैलता था, सरकार औपचारिक वायवाहियों द्वारा उनके निवारण में लगती थी। दूसरी ओर सम्राट के राज्याभिषेक के हृष में दिल्ली दरवार किए जाते थे। ऐसी विरोधी घटनाओं से देश के नवयुवकों में आवेग बढ रहा था। आतंकवादी लोग विदेशियों की हत्याएँ करने लगे। सरकार उन्हें फाँसी के तख्तों पर चढ़ाने लगी। लाल बाल और पाल (लाला लाजपतराय, बाल गंगाधर तिलक और विपिन चंद्रपाल) राष्ट्रीय कांग्रेस में नव जीवन लाने का प्रयत्न कर रहे थे। उनका नारा था— हम कोई दलील, कोई अपील और कोई वकील नहीं चाहिए। “स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और हम उसे लेकर ही रहेंगे। लाड कजन के समय में भारत का वातावरण और भी क्षुब्ध हो गया। उसने नए कठोर कानून बनाए, अंगाल का विभाजन किया और विश्वविद्यालयों में हस्तक्षेप की नीति अपनाई। देश में इन सबका घोर विरोध हुआ। कलकत्ता में बग भंग रफ आंदोलन बहुत उग्र हो गया। इसी वर्ष बनारस में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ और गोखले ने अंग्रेजों

विद्वद् अधिवारों की रक्षा व नियम बटुन मध्य घोर प्राति की । मवप्रथम वही गणपति का प्रयाग किया और विद्वद् म प्रतिदि प्रा-त की । उम समय प्रमत्तयोग ही उनक मन्त्र और मत्त एव अग्निगा हा उनक नारे थ । इम प्राति क पत्रमन्त्र जनरल स्मटम न उनक माय ममनीता नी किया था किन्तु वह व्यङ्ग्य म नहा गया गया । मन्त्रात्मा जी १ भारतम म आर उगा अनुभव क द्वारा मन्त्र आन्तान आरम्भ किया और दग का नया मापन और नवान गविन प्रदान की । मन् १६२० म लकर १६४७ तक का राष्ट्रीय आन्तान उहा क मतम म गचारित हुआ इमलिय म युग का गभी युग क्त जाता है ।

प्रथम विद्वद् युद्ध (१६१६-१६१८) क वा- श्रिटिंग मरवार न प्रमग भारत का मन्त्र व करन की घोषणा का और कुष्ठ वाय भी म्म गिगा म आरम्भ हुआ, किन्तु इम समय तक भारत म राष्ट्रीय जाग्रति बटुन हा चुकी थी इमलिए इतन म सुधार और माग्दान आन्तानम म मन्त्राव स्थापित करन म प्रममय र्म । दूसरी आर मरवार अनक दमनकारी नियमों की मन्त्रावता म इम उठती हुई प्राति का ममापन करन म नी मचल थी । रोन् एव द्वारा किया भी म्ममवत का बचन मन्त्र क आधार पर ही ग्णित करन क अधिवार प्राप्त कर नियम और कई उचार मन्त्रा का ग्णित भा कर किया । इमम वातावरण म्म न होन गया । ताका राजगनराय न इम कानून का की आन्ताना की परन्तु मरवार क वान पर जू तक न रेंगी । एमी म्पिति म गौरी जी न दगगरी आन्तान आरम्भ किया और स्वय उमगा नवत्त्र करन गग । ममस्त दग म म्म नियम क विद्वद् मन्त्रावें हूइ प्रदान नियम । मरवार न यह आन्तान कुचनता चाहा और पार दमन चक्र चलाया । इम आन्तान का अति उग्र एव पत्राव म प्रकट हुआ । प्रमत्तम क जलियाँ बाल बाग म विराट सभा हुई । धारा १४४ लागू हान हुए भी करोड २० ००० व्यक्ति एकत्रित हुए और मभा मचारित हुए किन्तु अग्रजों की नगमता अतिम मोमा पर थी । जारन डायर नामक एक फौज की टुकड़ी उजर पहुँचा और बिना किसी प्रकार की चेतावना लिए मुख्य द्वार पर, जो कि एक मात्र आन जान का माय था मन्त्राव गने उगाकर गोरी चलाया आरम्भ कर दिया । पत्रस्वम् लमभग ३७६ व्यक्तिना की मन्त्रु हुई और १२०० व्यक्ति घायल हुए । यदि उम मन्त्रि टुकड़ी क बारतूम समाप्त न हुए हान तो पना नहीं और कितना अनथ गता । इम हत्याकाण्ड न दग की आलें खान दी और आवाजबद्ध एक स्वर स अग्रजों का विराट करन गग । यह उग्र आन्तान का श्रीगण था । मुमनमानों के विद्वद् टर्कों म नी अग्रज एमा ही व्यवहार कर रहे थे इमलिए दग क मुमनमान भी अग्रजों का विराट करने लग । इस समय गौरी जी ने आन्तान का अग्रज हाथ म उजर नई गिगा प्रणित की ।

असहयोग आन्दोलन—मन १६२० क कनकता अधिवारन मे गौरी जी ने काग्रस के समय श्रिटिंग मत्ता क माय असहयोग करने की योजना रखी और बटुमत म म्म म्मिकार कर ना गई । सन १६१६ क विधान क प्रति अग्रगण्य प्रकट किया

श्रीर धीरे धीरे घमहयोग की भावना प्रचलित होनी गई। विद्यार्थी घम गांधी जी का अनुयायी बन गया और नागरिका न ब्रिटिश उपाधियों जना दी, बकात छोड दी, स्वदेशी चीजा का सम्मान बढ़ा और बल जाना गोरव का बात समझी जाने लगी। सन् १९२१ म इंग्लड के महाराजकुमार भारत प्राये किन्तु उनका स्वागत भी हठताना द्वारा ही हुआ। धीरे धीरे य् आन्दोलन उग्र रूप लेकर हिंसात्मक बायों पर उतरन लगा। जन-ममूह प्रायः म अनुचित दानि प्रयोग करने लगा चोरी चोरा आदि स्थाना म भीड न पुनिस क लगभग २०-२१ आमी जिंदा जला दिए। एमी घटनामा से गांधी जी ने यह आन्दोलन स्थगित कर दिया। सरकार ने गांधी जी को ६ वष का बारावास दिया।

आन्दोलन स्थगित हान पर बहुत निराशा थी। कुछ नेता काग्रन स घनग हो गये। श्री मुहम्मदअली जिन्ना मुस्लिम लीग म और दामोदर सावरकर हिंदू महासभा मे चल गये। कुछ नेता लीग गातिमय साधना से सरकार के कामा म अवरोध उत्पन्न करना चाहते थे। श्री मोतीलाल नेहरू बिट्टन भार्द पटल और श्री चिनरजनदास इनम मूख्य थ। इन लोगा न 'स्वराज्य पार्टी' की स्थापना की और सन् १९२३ म अपना बायत्रम आरम्भ कर दिया। समा प्रवण कर इन लागे ने सरकार क बाय म बाधा उत्पन्न करनी चाही किन्तु सफलता नहीं मिली। धीरे-धीरे देग म और घनेक सगठन उत्पन्न हुए। श्रमिका का दूड यनियन बनाया गया। सन् १९१९ के विधान के अनुसार १० वष आ विधान की सफलता का अनुमान लगाने क लिए आयोग की व्यवस्था की गई थी। तदनुसार सन् १९२९ म सर साइमन की अध्यक्षता म एक आयोग भारतत्रय प्राया। किन्तु वातावरण अशांत होने क कारण 'बास जाओ' के नाड द्वारा इस आयोग का स्वागत हुआ।

इन घटनाओं से देग 'म राष्ट्रीय भावना उत्तरोत्तर बढ़ती गई और पूण स्वतंत्रता प्राप्त करने का विचार बलवान होना गया। सन् १९२९ के लाहौर अधिवेशन म इस सम्बन्ध का प्रस्ताव भी पारित कर लिया गया और २६ जनवरी सन १९३० को रावी नदी के तट पर काग्रन म और समस्त देग ने अपने अपने यहाँ स्वाधीनता की प्रतिज्ञा की। उसी की स्मृति म हमारा नया मविधान २६ जनवरी का ही स्वीकार करके गणतंत्र दिवस के नाम पर यह दिवस सत्ता क लिए चिर स्मरणीय बनाया गया है। इसके पश्चात गांधी जी ने नमक कानून भंग किया। फिर गोल मेज सम्मले हुए। साम्प्रदायिक प्रश्न पर गांधी जी ने डटकर मार्चा लिया। ब्रिटिश सरकार अछूता को हिंदुओं से पृथक् कर अपनी "विभाषित करो और शासन करो" नीति का पालन करना चांती थी। साम्प्रदायिकपश्वाट (Communal Award) द्वारा यही घोषणा की गई। इस पर गांधी जी न अपने प्राणा की बाजी लगादी। अंत म सरकार को झुटना पटा और प्रसिद्ध पुना सम्मेलन हुआ।

धीरे धीरे ब्रिटिश सरकार को यह विश्वास होने लगा कि अब भारतवासिया को कुछ सत्ता हस्तांतरित किये बिना काम चलगा नहीं। इसलिए सन् १९३५ म नवीन विधान स्वीकार किया और भारतीय सभ की स्थापना का प्रस्ताव रखा।

आना म स्वाधीना देना स्वीकार किया। यद्यपि सम्पूर्ण विधात राष्ट्रीय नेताओं को स्विकार नहीं हुआ किन्तु फिर भी प्रांतीय भाग अल्पतान के लिए सम्मत हो गये। मन् १९३७ म दण म निवाचन हुआ। ११ म म द प्रांत म काग्रम का वन्द्यत मिता। मत्रिमण्ण बनारस गये और स्वगासन आरम्भ हुआ। किन्तु कुछ समय बाद सन् १९२६ म द्वितीय महायुद्ध आरम्भ हुआ और ब्रिटिश सरकार न स्वच्छा म ही भारत को युद्ध म तगा दिया। इसक विराध म मत्रिमण्णा न त्याग पत्र द िय और पुन आगतन आरम्भ हुआ। अर्चिन न सर स्फट िप्य का भारतवप भजा और सह्याग क लिए प्रार्थना की। अपन साथ साइ हुइ याजना भी उाहान प्रस्तुत का, जिम िप्य याजना' कहन हैं। परन्तु यह सफल नहीं हुई।

“भारत छोड़ो’ आन्दोलन—भारतवप क ममस्त राजनतिक ाना न िप्य याजना को टुकरा िया। वास्तव म व्ण याजना अनक ाया म पूण थी और त काल उपयोग म आन ानी वात का त्मय तववा अभाव था। समस्त आश्रामन नविष्य क िय दिये गय थ। अत ा म अमन्ताप बन्ना हा गया वातावरण सुुन हा गया। काग्रम काय ममिनि न अत म एक प्रस्ताव पास किया कि ब्रिटिश गवर्नमट स भारत छान्न का आग्रह किया जाय। ‘से भारत छोड़ो’ प्रस्ताव त्तन हैं। ६ अगस्त सन १९४० का वम्बई म अन्वित भारतीय काग्रस कमिटी न भी व्ण प्रस्ताव स्वीकार कर िया। गांधी जा न ‘करा या मरा का निद्वान प्रचारित किया। पन्ना ब्रिटिश सरकार का दमन पत् पुन घूम उठा। उना रात्रि का काग्रम न प्रमुख मभी नेता बन्ना बना िण गय और अनात स्थाना का भन िण गय। अनक नेता तुष्ट हा गय और ६ अगस्त क प्रात कान ा म ननस्व क अभाव म अधकार छा गया। किन्तु दण क भीतर आगतन की प्रवण्ण अग्नि धयक उठी। सरकार अत्याचार और नगमता पुक्क त्मन म तगी और ा क आगतन बद्ध नर नारा सरकार का उखान्न म। राठियाँ और गांधिया चत्री, मक्का भारतीय बन्ना बनात गय। किन्तु भारतीय नागरिका न भी रत की पत्रिका उखानी, तार टनीफोट काट लिए दपतरा म आग लगा ती और गकिन प्रयाग द्वारा कई स्थाना पर मत्ता स्थापित कर ता। बाबू जयप्रसाद डा० राठिया अग्णा आमपअनी, श्रीमती मुक्ता वृपतानी आदि इस आगतन क प्रमुख नेता थ। रातस्थान म मयस अघित आन्दोलन का म हुआ। ३ दिवस तक समस्त नगर पर जनता का आधिपत्य र्हा और पूण स्वाधीनता का उपभाग किया गया। किन्तु बा्ण म सरकार न गकित प्रयोग द्वारा पुन गामन व्यवस्था बमा ती। गांधी पर सामुक्तिक अथ दण किये और अथ अनक अयचारा द्वारा मारा आगतन ाा िया। किन्तु यह कवन उभरा शांति था। भीतर म ज्वाला निरन्तर प्रवर्धित ानी रही।

इसक पन्चानि गिमता कार्सेम टूर्ड कवानट गिगान याजना प्रस्तुत की गई। किन्तु जब अग्रजा न दया कि अत्र भारतवप म पविम मना आदि मय राष्ट्रीय नावना म आत प्राप्त हा गई हैं और अन्तराष्ट्रीय स्थिति भी उनक पल म नती है तब अपना उभारता वक्ति, और प्रजाताविक परम्पराओं म प्रभावित हाकर उाँन

सोपना की कि जून सन ४८ तक व अपनी मत्ता भारत से हटा लेंगे। अतः में १४ अगस्त सन् १९४७ की अर्ध रात्रि का अक्षण्ड भारत के दो भाग भारत और पाकिस्तान दाना स्वतंत्र उपनिवेश राज्य बन गये। दंग का विभाजन अत्यन्त खूब जनक रहा किन्तु और कोई रास्ता न होने की स्थिति में यह विषय घूट स्वीकार करना पडा।

स्वतंत्र भारत—गांधी जी ने अनक वार कहा था कि मैं स्वतंत्र भारत में ही मरूंगा। १४ अगस्त सन् ४७ का भारत स्वतंत्र हुआ और ३० जनवरी सन् १९४८ का गान्ध नायूराम न गांधी जी की हत्या कर दी। सत्तार भर में उस दिन गांधी का साम्राज्य छा गया। अपने कठोर परिश्रम अद्वितीय त्याग और तपस्या तथा विलक्षण नेतृत्व द्वारा दंग का पराधीनता से स्वतंत्रता की आरंभ लाय थे किन्तु वही अधिक समय इस स्वतंत्र भारत का स्वरूप नहीं निहार सक, यह भारत का ही दुभाग्य था। उह राष्ट्रपिता के रूप में स्वीकार कर हमारी सरकार ने उन्हें अर्थात् स्थान दिया है। अनेक रूपों में दंग उनका कृणी है। जीवन की सादगी, स्वाभिमान, स्त्रिया की ममानता जाति पाति स मुक्ति गौरव का महत्त्व दृष्टान्तोंद्वारा भगवान में आस्था आदि अनेक प्रगतनीय काय गांधी जी न किये हं। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने सबप्रथम उह महात्मा कहा था और तब से महात्मा के रूप में ही सबन मान जाने लग। वास्तव में एसा ही व्यक्तित्व हमारे राष्ट्रपिता के पद के योग्य था। भारतवर्ष जैसे बुद्ध, अगाध आदि का नाम गौरव से लता है अनेक वानी पीढ़िया भा गांधी जी का उमी प्रकार मन्त्रश्रेष्ठ ध्यान प्रदान करती रहेंगी।

दंग की स्वतंत्रता के पश्चात् तात्का व्यक्तियों के आवागमन से नई नमस्कारों उत्पन्न हुए। सुरक्षापूर्वक उनका लाना और फिर यहा बनाना एक सखटमय काय था किन्तु वैसे साहस के साथ हमारे दंग न उस पूरा किया। नवीन गणतन्त्रात्मक विधान का निर्माण और अनेक प्रकार के देगी राज्या की समस्या का निपटारा भी एक गम्भीर प्रश्न था। इसके बाद खाद्य मकट का सामना करना पडा। ५० नेहरू के सुयोग्य नेतृत्व में दंग ने अनक आपत्तियों का सामना करत हुए भी नवीन योजनाओं के अनुसार दंग को हर प्रकार से सामाजिक, राजनतिक, आर्थिक आदि सभी क्षेत्रों में उन्नत बना दिया और अब अंतरराष्ट्रीय जगत में अपना प्रमुख स्थान प्राप्त कर लिया है। भाखरा नागल आदि अनेक जल विद्युत योजनायें, चित्तूरजन आदि वारखान सामुदायिक योजनायें और निस्तार सेवा खण्डों के सगठन द्वारा दंग का सारा चित्र सुन्दर बनाने में व्यस्त है। इन सभी चीजों के साथ नवीन प्रयोग भी निरन्तर चल रहे हैं। सांस्कृतिक विनोदीकरण का नवीनतम अध्याय अभी ही प्रारम्भ हुआ है। राजस्थान इस क्षेत्र में अग्रणी बना है। यह रूप का विषय है कि हमारी सरकार ने अन्तम अग्रतर्गत सफलता प्राप्त की है और अब समस्त देग में राजस्थान ही इस क्षेत्र का नेतृत्व करने योग्य बन गया है।

इसी प्रकार अंतरराष्ट्रीय क्षेत्र में भी 'पंचशील' और सह अस्तित्व के सिद्धान्तों द्वारा अनुपम आन्तर्गत की स्थापना की है और आन्तरिक और बाह्य दोनों क्षेत्रों में

भारतवर्ष न घटना सम्मान स्थापित कर मनवता प्राप्त का है। अतः चाण भारतवर्ष विषय गीमा तक उन्नति करता है य* इसका तात्पर्य है परिश्रम और योग्यता पर निर्भर है। अन्ततः ही प्रगति का महापत्रक है। अविध्य का प्रश्न एक कृति समझा है। किन्तु फिर भी ध्याता है कि हमारा यह परम्परावादी और शिथिल का आधार पर चलता है इसलिये अविध्य भा उन्नत होगा य* मानकर चलना चाहिए।

अभ्यास के लिए प्रश्न

- १ प्रथम शक्ति भारत में किस प्रकार हुई ? उसका क्या कारण था ? लिखिए।
- २ भारत का राष्ट्रीय जाग्रति का निष्पत्ती कौन कौन से तत्व उत्तरदायी हैं, लिखिए।
- ३ भारतवर्ष में सन् १८८५ में सन् १९२० तक का राष्ट्रीय जागरण का इतिहास लिखिए।
- ४ गांधी युग' किस कहते हैं ? इस युग का ध्यान कीजिये।
- ५ 'भारत छोड़ो' आन्दोलन का प्रभाव और महत्व बतसाइये।

